* श्रीः *

॥ दोहा ॥

द्वैताऽद्वैतप्रकाश

अरु

सदाचारमणिमाल।

प्रश्नोत्तरमणिमालिका

गद्य रु पद्य रसाल ॥

राजपुत्र विद्यानिलय

पण्डित विजय बनाय ।

किय प्रसिद्ध इन सबहिकों

सर्व सुमति सुखदाय ॥

प्रथम बार } मार्गशीर्ष कृष्णा १२

५०० प्रति } सम्वत् १९६६ का

बालचन्द्र यन्त्रालय जयपुर



॥ श्रीः ॥

❀ भूमिका ❀

द्वैताऽद्वैतप्रकाश यह श्रुति अरु युक्ति सहाय ।
जगत ब्रह्मकी एकता जामें प्रगट लखाय ॥ १ ॥

उत्तर कृति अद्वैत की द्वैतवादि कृत तर्क ।
उभय अभेद रु भेदमें करते तर्क वितर्क ॥ २ ॥

निज निज पक्षहिं साधते युक्ति रु श्रुति बलपाय ।
खण्डन मण्डन करत जहं उभै स्वबुद्धि सहाय ॥ ३ ॥

निज अरु परहित जानिकै भाषा पद्य बनाइ ।
सदाचार शुभ रत्नमयमाला हू दरसाइ ॥ ४ ॥

यहु जिनके निज हृदयपै लसै सुकृत मणिमाल ।
वे बिन भूषण हू लसैं बुधजनसभा विशाल ॥ ५ ॥

प्रश्नोत्तर शुभरत्न मय यहु माला सुउदोत ।
जाके कंठास्थित किये अति ही शोभा होत ॥ ६ ॥

कौन न सोहत कंठ धरि याको नर सरताज ।
यहँके अरु परलोक के साधन चहत स्वकाज ॥ ७ ॥

प्रश्नोत्तरमणिमाल यह जाकों विजय बनाइ ।
जो याकी गति अनुसरिह मनुजजन्म सफलाइ ॥ ८ ॥



* श्रीः *

॥ दोहा ॥

सब जग जातें जगमगत सूर्यादिक बिलमाँहि ॥
सत चित आनंद एक सो ब्रह्म जयति जगमाँहि ॥ १ ॥
देखत सुनत रु सूंघता करता जो कुछ जीव ।
जानत है जातैं वही जयति ब्रह्म जगमींव ॥ २ ॥

* श्रीः *

॥ द्वैताऽद्वैतप्रकाश ॥

प्र०—ब्रह्मज्ञान प्राप्तिके पूर्व जीवात्मा ब्रह्मरूप है वा अन्य।

उ०—अन्य है।

प्र०—यदि अन्य है तो सर्व ब्रह्मैव यह कथन असङ्गत होताहै।

उ०—अच्छा तो ब्रह्मरूप मानों।

प्र०—जो ब्रह्म माना तो कर्मबन्धनमें कौन फँस रहा है और अनेक दुर्गतियां कौन भोग रहा है।

उ०—शरीराभिमानी आत्मा।

प्र०—क्या शरीराभिमानी आत्मा ब्रह्म नहीं है।

उ०—हां वह ब्रह्म नहीं है।

प्र०—तो वह क्या है।

उ०—वह जीवात्मा है।

प्र०—अच्छा तो फिर भी सर्व ब्रह्मैव यह कथन तो असङ्गत ही हुआ।

उ०—ब्रह्मज्ञ पुरुष चेतन ब्रह्म के अतिरिक्त जीवादि सब पदार्थोंको कल्पित वा मिथ्या समझते हैं इससे उनकी दृष्टिमें शरीरादिक पदार्थ शशशृङ्गायमाण ही हैं अर्थात् हैं ही नहीं। उनको छोड़कर जो शेष चेतन आत्मभाग है

वही उनकी दृष्टिमें चढता है सो ब्रह्म है और जो शरीरादिकोंको अपना वा आप समझते हैं और अपना वस्तु भूत स्वरूप जो अकर्त्ता अभोक्ता निर्विकार अविनाशी शुद्ध बुद्ध व मुक्तरूप है उसको नहीं जानते वे संसारी महाप्रलय पर्यन्त जन्म मरण के चक्रसे अलग नहीं होसक्ते हैं व्यवहारदशामें उनका ही जीवरूप करिकै व्यवहार माना है और परमार्थदशामें तो पूर्वोक्त दृष्टिसे वे भी ब्रह्मही हैं इस कारण परमार्थदृष्टिसे सर्वं ब्रह्मैव यह कथन असङ्गत नहीं । सर्वं ब्रह्मैव इसका तात्पर्य यही है कि जो जो व्यवहारदशामें सत्यसा प्रतीत होता है वह २ सबही तत्तद्रूपसें मिथ्या है और वस्तुतः ब्रह्मरूप है इसी से शङ्कराचार्य लिखते हैं कि

"रज्जुसर्पवदात्मानं जीवंज्ञात्वा भयं वहेत् ।
नाहं जीवः परात्मेतिज्ञानश्चान्निर्भयोभवेत् ॥१॥"

अर्थात् यहजीव, रस्सीको सर्पकी तरह भ्रान्तिसे अपनेको जीव जानकर भय पाता है और जब वह यह सत्य समझ जाता है कि मैं जीव नहीं किन्तु परमात्मा हूं तब निर्भय हो जाता है । इससे तत्वदर्शियोंकी दृष्टिमें तो ब्रह्मव्यतिरिक्त कोई पदार्थ है ही नहीं ।

प्र०—अविद्या कोई पदार्थ है वा नहीं ।

उ०—अविद्या असल में कोई पदार्थ नहीं है क्योंकि एक ब्रह्म के सिवाय दूसरा कोई पदार्थ वेद व शास्त्रोंमें सत्य नहीं माना है और प्रत्यक्षमें यह जो सब दिखाई

देता है सो अनहुआ ही प्रतीत होता है । असलमें कुछ है नहीं जैसे रस्सी में सर्प अनहुआ ही दिखाई देता है असल में वह है नहीं और दर्पणमें प्रतिविम्ब भी मिथ्या ही दीखता है और बनेतीका चक्र असलमें एकाकार नहीं है परन्तु भ्रमण समय में एकाकारही प्रतीत होता है इसीलिये यजुर्वेदमें यह लिखा है कि—

पुरुष एवेद ꣳसर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥

अर्थात् यह जो कुछ व्यवहारदशामें हुआ है और है और होनेवाला पदार्थ प्रतीत होता है सो सब पुरुषही है जो मोक्ष का देनेवाला है और जो इस अन्नमय शरीरसे ढका हुआ है । "सोऽकामयत बहुस्यांप्रजायेय" यह भी श्रुति सृष्टि के आदिकालकी है इसमें लिखा है कि उस ब्रह्मनें इच्छा की कि "मैं एक हूं और अब बहु प्रपंचरूप करिकैं होजावूं" तो इस से भी जगत् ब्रह्मरूप ही पाया गया इसलिये उसके सिवाय दूसरा कोई पदार्थ सत्य नहीं है ।

प्र०—अनादि ब्रह्म ही है वा अन्य भी, ।

उ०—ब्रह्म ही एक अनादि नित्य पदार्थ है दूसरा कोई नहीं । अतएव (सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम्) ये श्रुतियां सङ्गत होती हैं अर्थ इनका यह है कि यह सब जगत् पहले सद्रूप एक अद्वितीय पर-

मात्मा ही था और "नेह नानास्ति किंचन" यह और एक श्रुति कहती है कि यहां कोई नाना पदार्थ नहीं है अर्थात् सब ब्रह्मरूप ही हैं।

प्र०—अच्छा तो अविद्याको वेदादिशास्त्रोंमें अनादि क्यों माना है जैसा कि ऋग्वेदमें लिखा है कि "द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरेकः पिप्पलं स्वाद्वत्ति अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥ १ ॥" और यह श्वेताश्वतरोपनिषद् है "अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः। अजो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः।" इनका अर्थ यह है कि जीव व ईश्वर ये दो पक्षी सहचारी व समानधर्म वाले अनादि नित्य हैं और वैसा ही प्रवाहरूपसे अनादि संसाररूपी वृक्ष है उसमें बैठे हुये हैं उनमें से एक जो जीवात्मा है सो विषयरूपी स्वादुफलों का भोग करताहै और दूसरा परमात्मा अभोक्ता होकर प्रकाश कररहा है ॥ १ ॥ और अजामेकां लोहित इत्यादि श्रुति का यह अर्थ है कि अनादि एक जो सत्व रज व तमरूपा प्रकृति है वही अपनी सी विविध प्रजाको रचती है और अनादि नित्य एक जीवात्मा उस अनादि प्रकृतिका भोग करता हुआ उसीमें रम रहा है और परमात्मा इसके भोगसे अलग है। तो देखो इन वचनोंसे जीव ईश्वर व प्रकृति

ये तीन पदार्थ अनादि सिद्ध होते हैं । और गीतामें भी लिखा है कि "प्रकृतिं पुरुषंचैव विद्ध्यनादी उभावपि" अर्थात् प्रकृति व पुरुष ये दो पदार्थ अनादि जानों ।

उ०—ये श्रुतियां सृष्टिके आदिकी दशा नहीं प्रकट करती हैं किन्तु पीछेकी दशा बतारही हैं जब संसार होगया उस समय जीव, ईश्वर व संसार ये तीनों वर्त्तमान थे अतः उनकी उस समय की जो वर्त्तमान दशा है उसीका इनमें वर्णन है सृष्टिसे पहिले एक केवल ब्रह्म हीथा और ये सब ब्रह्ममें लीन थे इससे ब्रह्मरूपसे ही थे वेदमें इनको ब्रह्मसे पृथक् नहीं मानाहै किन्तु इनका ब्रह्मरूपसे ही व्यवहार कियाहै इसी कारण पूर्वोक्त सदेव सौम्येद-मित्यादि श्रुतियां सृष्टिके आदिकालमें ब्रह्मव्यतिरिक्त अन्यपदार्थका अभाव बतारही हैं यूं ये तीनों कल्पा-वस्थायी होनेसे अनादि तो हैं परन्तु प्रकृति अनादि नित्य नहीं ।

प्र०—जब प्रकृति व जीवादिक अनादि नित्य हैं तो द्वैताप-त्तिरूप दोष अवश्य होगा ।

उ०—वेद व शास्त्रोंके प्रमाणोंसे यह सिद्ध होचुका कि सृष्टिके आदिकालमें एक केवल ब्रह्म ही था और कुछ नहीं था पीछे जब सृष्टि भई तब वह ब्रह्म ही आप एकरू-पसे अनेक रूप हुआ अब इस दशामें एक वा अनेक जो कुछ भी है सो उससे अन्य नहीं और जो है सो

वही है तो अब द्वैत क्योंकर होसकता है और प्रकृति सद्रूप नहीं क्योंकि अविद्या विद्याका अभावरूपा है उसके अनादि रहते भी दो पदार्थ नहीं माने आसक्तेहैं जैसे जहां घट है और पटादिकोंका अभाव है यों दो हैं तोभी वहां कोई दो पदार्थ नहीं मानतेहैं यह सर्वानुभवसिद्ध है इसी भांति ब्रह्म तो सत् पदार्थ है और अविद्या असत् है तो उसके अनादि रहते भी दो पदार्थ मानकर द्वैतापत्ति नहीं समझी जासक्ती है इससे भी द्वैतापत्ति रूप दोष नहीं होसक्ता है।

प्र०—जीवावस्थामें नानाप्रकारके दुःख व सुखादि विकार यदि जीवको होतेहैं तो जीव तो असलमें कोई पदार्थ ही नहीं रहा फिर दुःख आदि उसको कैसे मानतेहो जो सब ही ब्रह्म है तो वह भी ब्रह्मरूप हुआ फिर ब्रह्मको ही दुःखादिभोग माना जायगा क्या।

उ०—सर्वैक्यतारूप परमार्थदशामें तो ये शङ्का ही नहीं बनती क्योंकि सुख दुःख विकार आदि भी तो पृथक् रूपसे नहीं माने जातेहैं फिर कौनसे दुःखादिक विकार और कौन उनका भोक्ता बनें इसलिये ब्रह्म आनन्दमय क्योंकर दुःखी व विकारी होसकताहै और व्यवहारमें भोक्ता जीव व निर्विकार ब्रह्म है।

प्र०—जगत्के मिथ्या माननेमें कोई युक्तिरूप भी प्रमाण है अथवा केवल वचन ही।

उ०—इसमें युक्तिरूप प्रमाण यह है कि जैसे घट पदार्थ

मृत्तिकासे अन्य नहीं है किन्तु मृत्तिकारूप ही है यदि अन्य होता तो विना मृत्तिकाके भी मृद्घट न्यारा मिलता इसी प्रकार जगत् यदि ब्रह्मसे भिन्न होकर सत्य होता तो ब्रह्मके विना न्यारा भी मिलता सो नहीं इस हेतु नाम रूपात्मक जो जगत् है सो सर्वथा युक्ति व वचन रूप प्रमाणद्वारा मिथ्या सिद्ध है इस में कोई सन्देह नहीं।

प०—अच्छा तो अब यह शङ्का होतीहै कि जैसे घट मिट्टीका परिणाम है वैसे ही जगत् ब्रह्मका परिणाम माना जायगा तो ब्रह्म विकारी होगा और जगत् जो जड़ात्मक है उसका चेतन ब्रह्म क्योंकर उपादान होसकता है चेतन ब्रह्मसे जडरूप जगत् नहीं बनसक्ता जैसे लोकमें गोधूमादिसे गोधूमादि ही होते देखे जातेहैं यवादिक नहीं फिर चेतन जडका उपादान कैसे होगा।

उ०—देखोजी संसारमें कोई जडपदार्थ है ही नहीं सब चेतन ही चेतन हैं।

प०—तो फिर पाषाणमें ज्ञानोत्पत्ति क्यों नहीं होती।

उ०—भाई परमार्थदशामें कोई पाषाणादि भिन्नपदार्थ नहीं जब इस दशामें पाषाणत्वादि रूप करिकैं पाषाणादिको भिन्न मानें तब यह शङ्का हो अन्यथा कभी नहीं केवल व्यवहारदशामें वह पाषाणादि नामसे माना गयाहै वास्तवमें तो वह सब ब्रह्म ही है उनमें पाषाणत्वादि कल्पित हैं वास्तविक नहीं। और व्यवहारदशामें यह

उत्तर है कि जहां अन्तःकरण हो वहां ज्ञानादि होतेहैं पत्थरमें अन्तःकरण नहीं इससे ज्ञानादि भी नहीं।

प्र०—अच्छा तो अन्तःकरण जड है वा चेतन यदि अन्तःकरण जड है तो सब चेतन ही चेतन है यह कथन असङ्गत है और जो अन्तःकरण भी चेतन है तो उस पाषाणरूपी चेतनसे अन्य है वा तद्रूप ही जो अन्य है तो अनेक चेतन होनेसें ब्रह्म अनेक होंगे और जो एक ही है तो फिर पाषाणादिमें ज्ञानादि क्यों नहीं पैदा होतेहैं इससे संसारमें जड़ व चेतन रूपसे दो पदार्थ मानों।

उ०—व्यवहारदशामें जड़ व चेतनके भेदकी कल्पना है इस पक्षमें पाषाणादिमें चेतनशक्ति अनुद्भूत है जैसे काष्ठादिकोंमें अग्नि, कारणान्तरके सन्निधान होतेही प्रगट होतीहै अन्यथा नहीं इसी प्रकार अन्तःकरणके होते ही ज्ञानादि उत्पन्न होतेहैं अन्यथा नहीं सो कारणरूप अन्तःकरण व्यवहारदशामें कल्पित किया गया है वह पाषाणमें नहीं इससे पाषाणादिमें ज्ञानोत्पत्ति नहीं होती-है और अभेदपक्षमें तो न कोई प्रश्न है वा न उसका कोई उत्तर। देखो गोमय जिसको जड़ मानते हो उससे चेतन कीट कैसे पैदा होतेहैं क्योंकि जड़से चेतनकी उत्पत्ति लोकविरुद्ध है इससे यही पाया जाताहै कि गोमयादिक कोई असलमें जड़ पदार्थ नहीं किन्तु चेतन ही हैं।

प्र०—अच्छा जो ये चेतन हैं तो स्वतः चलनात्मक शक्ति इनमें क्यों नहीं, जैसे कीटादिकोंमें प्रत्यक्ष है।

उ०—जो स्वतः चलते फिरते हैं वेही चेतन माने जाते हैं।

प्र०—तो पवनादि भी स्वतः चलते फिरते हैं ये भी चेतन क्यों नहीं।

उ०—इनमें ज्ञानशक्ति उद्भूत नहीं, जो चलता फिरता खाता पीता सुनता समझता है वही चेतन है और नहीं। इससे पवनादि चेतन नहीं हो सकते। जो कदाचित् कहो कि ऐसा लक्षण माना तो फिर पत्थर चेतन कैसे होसकता है और जो पत्थर चेतन न हुआ तो चेतनमय सर्व जगत् है यह कथन सङ्गत न रहा यदि यह कथन असङ्गत हुआ तो ब्रह्म जगत् का उपादान न रहा तो **सर्वं ब्रह्मैव** यह सिद्धान्त विरुद्ध हुआ।

उ०—ये सब व्य० द० में जड़ और वास्तवमें चे० ही हैं अरे भाई सुनों अभेद ही वेदोंका सिद्धान्त पक्ष है। क्योंकि **पुरुष एवेदं सर्वमित्यादि** पूर्वोक्त यजुर्वेद और **स एषोणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि** (यह छां० उ०) है इनमें लिखाहै कि यह सब जगत् ब्रह्मरूप है और जीव को भी ब्रह्मही मानाहै इससे सब जगत् के ब्रह्म होनेमें कोई सन्देह नहीं। अजी एक जगह क्या; वेद तो पद पद में कहता चला जाताहै कि जगत् मिथ्या है और भी देखो **अहं ब्रह्मास्मि** यह यजुः और **अयमा-**

त्मा ब्रह्म यह अथर्व और तत् त्वमसि यह साम और प्रज्ञानं ब्रह्म यह ऋग्वेदका वचन है इनका अर्थ स्पष्ट है इनमें भी जीव व ब्रह्मका ऐक्य ही आता है और देखो तदेतत्सत्यं यथा सुदीप्तात्पावकाद्विस्फुलिङ्गाः सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपास्तथाक्षराद्विविधाः सौम्य भावाः प्रजायन्ते तत्र चैवापि यन्ति । यह माण्डूक्योपनिषदका वचन है । अर्थ—सो यह सत्य है, जैसे प्रज्वलित अग्निसे हजारों तँणगारे पैदा होते हैं सदृश तैसे परमात्मासे हे सौम्य नानाप्रकारके पदार्थ पैदा होते हैं और उसीमें लीन होजाते हैं। इससे अग्नि व तँणगारों का दृष्टान्त देकर ब्रह्म वा जगत्के पदार्थोंका उपादानोपादेय भाव बताया है यातें जगत् ब्रह्मरूप है और भी देखो कहां तक लिखें वेदादिके असङ्ख्य प्रमाण हैं । सर्वं खल्विदं ब्रह्म यह श्रुति है और गीता अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा (अ० ७) और सदसच्चाहमर्जुन (अ० ९) और मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्ति धनञ्जय यह (अ० ७) और बृहदारण्य० अथोदरमन्तरं कुरुते अथ तस्य भयं भवति, और यह कठोप० मृत्योः समृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति और यह श्रुति है स एतमेव मूर्द्धसीमानंविदार्यतद्द्वारापद्यत । इत्यादि सब

वाक्यों का तात्पर्य जीव व जगत् को ब्रह्मरूप बतलाने में ही है। अब कहो ब्रह्म जगत् का उपादान कैसे न होवे और देखो गीता (अ० १५ । श्लो० १) में लिखा है कि ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् । छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ।

अर्थ—इस जगत् का सब से ऊर्ध्व अर्थात् उत्तम परमात्मा तो मूल है और अधःशाखम् अर्थात् ब्रह्मादिक इसकी शाखा हैं और यह स्वयं नश्वर है और प्रवाहरूपसे अनादि है। इसका उपादान ब्रह्म है इसकी उत्पत्ति यों है कि परमात्मा से प्रकृति और प्रकृति से यह सब जगत् उत्पन्न हुआ। क्योंकि प्रलयकाल में प्रकृतिका लय उसीमें होताहै और सृष्टिकालमें उसीसे वह होती है। ऐसे प्रकृति जगत्की उपादान कारण हुई। इससे वह भी जगत्का उपादान है। सारांश इसका यही है कि व्यवहारदशामें प्रकृति व पुरुष ये दो अनादि मानें हैं और परमार्थमें ब्रह्म एक ही अनादि है। जब दो मानें उस पक्षमें जगत्का उपादान प्रकृति है सो परिणामवती है इससे प्रकृति जगत्का परिणामी उपादान है और ब्रह्म विवर्त्ती है। जैसे दधिका परिणामी उपादान दुग्ध है और घटका विवर्त्ती उपादान मृत्तिका है, ऐसे ही यहां भी जानलो उपादानोपादेयभाव भेदपक्षमें होसक्ता है अभेदमें नहीं इसलिये ये सब विकार प्रकृति कृतहै ब्रह्मकृत नहीं इससे जगतमें सर्वज्ञत्वादि गुण नहीं हैं इसीसे

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा—इसकी व्याख्या में भाष्यकार शङ्कराचार्यजीने यह लिखा है कि जब मेरी प्रकृति जगत का उपादान है तो मैं अवश्य ही जगत का उपादान हुआ। यह श्रीकृष्ण कहते हैं। इसीकारण प्रकृति सर्वादि होनेसे अनादि मानी है।

प्र०—अच्छा तो फिर जहां जहां द्वैतका प्रतिपादन है क्या वह मिथ्या ही है जैसा कि द्वा सुपर्णा इत्यादि और "य आत्मनि तिष्ठन्नात्मनोन्तरोयमात्मा न वेद य स्यात्मा शरीरम्"॥ १॥ और आत्मनोन्तरोयमयति स त आत्मान्तर्याम्यमृतः॥ २॥ यह बृहदा० में मैत्रेयीके प्रति याज्ञवल्क्य कहतेहैं कि हे मैत्रेयि जो परमेश्वर जीवात्मामें वर्त्तमान और जीवात्मासे भिन्न है उसको यह मूढ जीव नहीं जानताहै कि मैं जीवात्मा ही इसका शरीर अर्थात निवासस्थान हूं॥ १॥ और जीवसे भिन्न यह ईश्वर जो पापपुण्यका साक्षी होताहै सो ही तुझ जीवात्मा में वर्त्तमान है और नित्य है॥ २॥ और (गीता अ० ७) में मयि सर्वमिदं प्रोतमित्यादि और (अ० ९) में मया ततमिदमित्यादि—और (अ० १८) द्वाविमौ पुरुषावित्यादि— ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशे इत्यादि और (अ० १५ में) उत्तमः पुरुषस्त्वन्य इत्यादि लिखा है।

उ०—देखो, वेदादिशास्त्रों में कहीं तो अद्वैत का ही वर्णन है और कहीं द्वैतका ही, इसका समाधान यह है कि जहां अद्वैत ही में श्रुतियां झुकी हैं वहां तो उपाधिको सर्वथा मिथ्या समझकर सब जगत्को एक ब्रह्मरूप ही माना है और जहां द्वैत ही कह रही हैं वहांउपाधिको लेकर द्वैत बतलाया है परन्तु उपाधिके मिथ्या होनेसे अद्वैतपक्ष ही वास्तविक है द्वैत नहीं, क्योंकि अविद्यारूप उपाधिके नष्ट होनेके पश्चात् ब्रह्मके सिवाय कोई जीव पदार्थ पृथक् नहीं रहता है। ब्रह्म की विद्या और अविद्या ये दो शक्तियां हैं परन्तु ये दोनों ही ब्रह्मरूपा हैं, अविद्या उससे भिन्न कोई वस्तु नहीं है कि जिसके नाश से ब्रह्म का भी नाश समझा जावै यह मलिनसत्वप्रधाना है और माया शुद्धसत्वप्रधाना है। इन दोनोंमें आपसमें इतना ही भेद है। जैसे छाया वा अन्धकार ये देखनेमें तो सच्चेसे दिखाई देतेहैं परन्तु असल में कुछ भी नहीं, एक केवल तेज का अभावमात्र ही हैं, ऐसी ही भ्रमरूपा अविद्या और माया है, मायाका लक्षण यह है कि जो विना हुए ही दीखने लगै और ज्ञानके पश्चात् न प्रतीत होवै वही माया है, जैसे प्रतिबिम्ब वा अन्धकार—सो ही भा०में लिखाहै कि ऋतेऽर्थं यत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि। तद्विद्यादात्मनो मायां यथाभासो यथा तमः॥ १॥ अब श्रुतियों में परस्पर कोई विरोध नहीं, अन्यथा[1] "मायाऽविद्या च स्वयमेव भवति'

१—जो प्रकृति को ब्रह्म की शक्ति न मानो तो

यह श्रुति असङ्गत होगी, इसका अर्थ यह है कि ब्रह्म आप स्वयं ही माया वा अविद्यारूप होता है—यहां पर स्वयं शब्दसे पञ्चदशीमें शुद्ध ब्रह्म लिया है—और नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः । इसकी व्याख्या में श्रीधरस्वामी नें योगमाया शब्दका यह अर्थ किया है कि योगो युक्तिर्मदीयः कोऽपि अचिन्त्यप्रज्ञाविलास एव माया । अर्थात् योग कहिये युक्ति सो मेरा अचिन्त्यप्रज्ञाका विलास है वह ही माया है! इससे साफ २ पाया जाताहै कि परमात्माका इस प्रकार का जो एक बुद्धि का खेल है वह ही माया है। वह किसीके विचार में नहीं आता है । इससे ब्रह्मरूपा होनेमें कोई शङ्का नहीं । इसीसे भेद व अभेदके अविरुद्ध होनेसे गीता में लिखा है (अ० १३) इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते । एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥ १ ॥

अर्थ—यहां क्षेत्र शब्द करिकें यह शरीर लिया है और क्षेत्रज्ञ करिकें इस शरीरका अभिमानी जो अहं मम करता है कृषिबलकी तरह इसके फल का भोक्ता है वह जीवात्मा लिया गया है फिर इसीको श्रीकृष्णजीने अपना रूप बताया है कि क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत । जो क्षेत्रज्ञ जीव है सो ही मैं हूं तो इसका तात्पर्य टीकाकारने यों लगाया है कि तत्त्वमसि

इत्यादि श्रुतियोंके अभिप्रायसे चैतन्यमात्र करिकै जीवको आप रूप माना है सो ठीक ही है जैसे घट मृत्तिकारूप करिकै मृत्तिकासे सर्वथा अभिन्न है और घटरूप करिकै भिन्न भी है क्योंकि जो कार्य घटसे होताहै वह मृत्तिकासे नहीं होताहै सो ही गीतामें लिखाहै कि क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत । क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥ १ ॥

अर्थ—श्रीकृष्ण भगवान् कहतेहैं कि हे अर्जुन जगतके जीवोंके जितने शरीर हैं उन सबमें क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीव जो है वह मैं हूं, तू क्षेत्रज्ञ मुझे जान । और क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ इनका जो यथार्थ रूप से ज्ञान है उसीको मैं ज्ञान मानताहूं ॥ १ ॥ इससे द्वैत वा अद्वैतका जो वेदादिशास्त्रोंमें प्रतिपादन है सो विरुद्ध नहीं होसकताहै ।

प्र०—क्योंजी जो परमात्मा प्रकृतिसंबद्ध होताहै तो उसके विकारोंसे दूषित व लिप्त क्यों नहीं होताहै ।

उ०—गीता अ० १३—

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते १

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ।
सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ।२।

अर्थ—अनादि व निर्गुण होने से परमात्मा निर्विकार

व अविनाशी है यद्यपि शरीरान्तर्वर्ती है तथापि न तो वह कुछ करताहै और न शुभाशुभ कर्मोंसे लिप्त होता है ॥ १ ॥ जैसे आकाश सर्वगत है तथापि सूक्ष्म होनेसे लिप्त नहीं होताहै । ऐसे ही परमात्मा देहमें सर्वत्र स्थित है तथापि लिप्त नहीं होताहै ॥ २ ॥

प्र०—अच्छा तो जीवात्मा तो लिप्त होताहै इसीलिये लिखा है गीतामें अ० १३—

पुरुषःप्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान् गुणान् ।
कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु । १ ।

अर्थ—प्रकृतिसंबद्ध होकर जीवात्मा प्रकृतिके गुण जो सुखदुःखादि हैं उनको भोगताहै और गुणोंके सम्बन्धसे ही अच्छी व बुरी योनियोंमें जन्म पाताहै ॥ १ ॥ यदि जीवात्मा भी अपने को असङ्ग उदासीन निर्लेप अकर्त्ता अभोक्ता समझै और अहं मम यह अभिमान शरीरादिकोंमें न रक्खै और अपने आत्मस्वरूपको जान लेवै तो वह भी निर्लेप होकर मुक्त होजावै । जैसे गीता अ० १४ में लिखा है कि—

मानापमानयोस्तुल्यः समो मित्रारिपक्षयोः ।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते । १ ।
समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः । २ ।

अर्थ—जो सुख दुःख वा मान अपमान में अविकृत चित्त

रहताहै और मित्र और शत्रुमें सम भाव रखताहै और किसी प्रकारकी चाहना न रक्खै—और सर्व कर्मोंके आरम्भ वा उद्यम को त्यागै उसे गुणातीत अर्थात् "निर्लेप" कहतेहैं और सदा सन्तुष्ट रहै मिट्टी और काञ्चनको समान समझै प्रिय और अप्रिय जिसके तुल्य हों और स्तुति व निन्दामें समभाव रहै उसे गुणातीत कहेहैं। जीवात्मा तो आत्माभास है कोई वस्तुभूत आत्मा नहीं क्योंकि अविद्यामें जो ब्रह्मका प्रतिविम्ब है उसे ही जीव कहतेहैं और आत्मा जो विम्बरूप है सो निर्विकार है। जीव भी अविद्याके नाशके पश्चात् ब्रह्म ही है अन्य नहीं। जो कहो कि निराकारका प्रतिविम्ब तो होसकै नहीं फिरजीव क्योंकर माना गयातो इसका समाधान यह है कि जैसे निराकार आकाशका प्रतिविम्ब हुआ ऐसे ही ब्रह्मका भी होताहै जैसा कि जलकी तीर पर स्थित मनुष्यको सूर्यका विम्ब दूर दिखलाई देताहै तब तीरसे लेकर सूर्यके विम्ब पर्यन्त जो वह पोल है सो आकाश ही है उसका प्रतिविम्ब तीरस्थ पुरुषको जलमें होकर दीखताहै इससे निराकारका भी प्रतिविम्ब होताहै यह सिद्ध होगया।

प्र०—कहो जी ब्रह्म तो निराकार और जगत् साकार है फिर निराकारसे साकारकी उत्पत्ति क्योंकर सम्भव होसकती है जैसे बीज साकार है तो उससे साकार वृक्ष होता है और आकाश निराकार है तो उससे उपादानरूपसे कोई साकार पदार्थ बना नहीं दिखाई देताहै इससे निराकारसे साकारकी उत्पत्ति मानना असङ्गत है।

उ०—सब ही साकार पदार्थ निराकार से ही उत्पन्न होते हैं केवल साकार से नहीं, जैसा कि आम्रादि वृक्ष साकार हैं वे उनके बीजोंमें स्थित जो निराकार अङ्कुरोत्पादनकी शक्ति है उसीके बलसे पैदा होतेहैं न कि उस बीजमात्रसे, और वह जो शक्ति है सो न तो आप साकार है और न साकार बीजरूपा है किन्तु बीजसे भिन्न ही है इसीसे बन्हिसे परिपक्व जो चणें आदि हैं उनसे अङ्कुर नहीं उत्पन्न होतेहैं। इस कारण बीजमात्र अङ्कुरोंकी उत्पत्तिमें कारण नहीं होसकते हैं। जो कदाचित् उन बीजों ही को कारण मानों तो उनसे अङ्कुर उत्पन्न होने चाहिये। इससे सिद्ध हुआ कि निराकार से भी साकार की उत्पत्ति होसकतीहै ऐसी दशामें ब्रह्म से जो जगत्की उत्पत्ति है उसमें कोई विवाद नहीं और जन्माद्यस्य यतः। इस ब्रह्मसूत्रके बलसे और यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति इत्यादिक वेदोंके वचनोंसे निराकार ब्रह्मसे साकार जगत्की उत्पत्ति विरुद्ध नहीं होसकती है हम लोग आस्तिक हैं, इस लिये वेदों के वाक्योंको अप्रमाण नहीं मान सकते वेद व शास्त्रों की जो आज्ञा है सो हमारे सर्वथा शिरोधार्य है इसलिये इस में जो आक्षेप करैं उन्हें आस्तिक नहीं समझते। अब यह द्वैताऽद्वैतप्रकाश समाप्त हुआ इसका निर्माण पं० विजयचन्द्रशर्मा ने सर्वोपकारार्थ किया है। अलं विस्तरेण—

मि० म० श्रा० शु० ८ सं० १९६६ का

॥ श्रीः ॥

द्वैताद्वैतप्रकाश

द्वितीयभाग

"समस्त जगत् चेतनब्रह्मरूप है इसकी उपपत्ति"

सर्व जगत्के चेतनब्रह्मरूप होनेमें "पुरुष एवेदं सर्वंमित्यादिकं[1]" वेदके और "सदसच्चाहमर्जुन[2]" इत्यादिक वेदान्तशास्त्रके वचनरूप प्रमाणतो बहुतसे हैं परन्तु इसमें कोई युक्तिरूप प्रमाणके विना अन्यमतावलम्बी लोग केवल इन हमारे वेदादिकोंके वचनरूपी प्रमाणोंही से पूर्वोक्तविषयको यथार्थ नहीं मानेंगे प्रत्युत यों कहने लगेंगे कि जैसें तुम्हारे वेदादिशास्त्रोंके वचन जगत् व ब्रह्मकी एकता बताते हैं वैसेही हमारे शास्त्रोंके वचन उनकी सर्वथा भिन्नता बतारहे हैं फिर हम तुम्हारेही इन शास्त्रोंके वचनरूपी प्रमाणोंको विना युक्ति और अनुभवके कैसें यथार्थ मानलें इस कारण इसविषयमें युक्ति व सर्वलोगोंका अनुभवभी प्रमाण बताया जाता है—जिससे अन्यमतावलम्बी लोगभी जो वितण्डावादी नहीं हैं वे हमारे इन शास्त्रीय प्रमाणों

१—यह जो भूत भविष्यत् व वर्त्तमानात्मक सब जगत् है सो पुरुषही है उससे अन्य कुछ नही, यह यजुर्वेद का वचन है।

२—भगवान् कृष्णजी कहते हैं कि यह जो कुछ सत् व असत् है सो मैंही हूं—

को यथार्थ मानें—इसमें युक्तिरूप प्रमाण और सर्वलोगोंका अनुभवरूप यह प्रमाण है कि सर्व जगत्के पदार्थ ज्ञानकी सत्तासेही सिद्ध होते हैं अन्यथा नहीं। क्योंकि ज्ञानरूपी एक ऐसा सर्वानुभवसिद्ध पदार्थ है कि जिसमें सारा जगत् अन्तर्गत होरहा है। यदि ज्ञान पदार्थ नहो तो जगत् का कोई भी पदार्थ सिद्ध न होवै, ज्ञानके विनातो संसारका यथायोग्य बनना ही असम्भव है यदि ज्ञान न होता तो संसारमें कई पदार्थ व्यर्थभी होते सो नहीं हैं सबके सब जगत्के पदार्थ मनुष्यादिकों के हितार्थ बनेहुए हैं। जो वस्तुहै और उसको संसार भरमें यदि कोईभी नहीं जानता हो तो उसको विनाजाने कोई क्या बतलावैगा। जब वह न बताई गई तो उसको कोई भी कुछ पदार्थ नहीं मानैगा। जब न माननेमें आई तो उसके विषयमें कोई व्यवहार न चलैगा। जब व्यवहार न चला तो फिर उसको कौन कहैगा कि यह अमुक पदार्थ है और इसके ये गुण वा लक्षण हैं। ऐसी स्थितिमें वह पदार्थही नहीं माना जायगा क्यों कि लक्षण और प्रमाणोंसे ही वस्तुकी सिद्धि होती है जबतक उसका लक्षण वा प्रमाण न बताया जायगा तबतक उसकी सिद्धि कैसे होगी—अतएव इस विषयमें यह अनुमानभी सङ्गत होता है कि " यदि वस्तु स्याद् तर्हि उपलभ्येत, नोपलभ्यते इति नास्ति—अर्थात् जो वस्तु होती तो अवश्य किसीको तो ज्ञात होती नहीं ज्ञातहोती है इससे वह नहीं है, इस प्रकारके अनुमानसे जो वस्तु ज्ञान सिद्ध नहीं है उसका अभावही समझा जाता है, इससे यही सिद्ध हुआकि जगत्के सब पदार्थ ज्ञानकी सत्ताही से सिद्ध होते है, क्यों कि ज्ञान में ज्ञेयके बनालेनेकी शक्ति है और ज्ञेयमें ज्ञानके बनालेनेकी शक्ति नहीं। अतएव स्वप्न समयमें ज्ञान अपने आप उन नवीन

पदार्थोंको बनालेता है जो उस समयमें वहां वर्त्तमान नहीं रहते हैं, जो कहो कि जागृतमें जो पदार्थ वर्त्तमान हैं वेही स्वप्न समय में दिखाई देते हैं और नवीन नहीं, तो मृत स्त्री वा पुरुष क्यों दिखाई देते हैं क्या वे उस समय में वहां वर्त्तमान रहते हैं जो मृत होगये, इससे सिद्धहुआ कि ज्ञानही ज्ञेयको तत्तदाकार बनाकर दिखादेता है । जो कहो कि ज्ञान उनहीं पदार्थोंको फिरभी बनाकर दिखाताहै जो पहले कभी उसके विषय हुए हों अन्यथा नहीं तो अब यह कहो कि संसारकी रचनासे पहले ब्रह्मनें जो ज्ञानरूप है कब इस संसार-को अपना विषय कियाथा जो सृष्टि समयमें बनाकर दिखाया । जो कहो संसार अनादि है तो हम कहेंगे कि संसार सकर्तृक है तो इसके करनेकाभी कोई न कोई एक सर्वोत्तमसमय अवश्य होगा जिससे पहले कभी संसार नहीं बनाथा। अब कहो उस समयमें ज्ञानरूपी ब्रह्मनें बिना जगत्को विषय किये कैसे जगत् बनालिया—तो इसका उत्तर यह है कि यह ज्ञानरूपी ब्रह्म नित्य पदार्थ है इसका कभी अभावतो होताही नहीं और जब यह नित्य रहातो इसकी क्रियाभी नित्यही रहैगी क्यों कि क्रियाभी ज्ञानकाही विवर्त्त है अन्य नहीं, इससे संसारभी इसके साथका साथ अनादि रहता है, ब्रह्म इसका केवल स्थूल व सूक्ष्म रूपसे आविर्भाव व तिरोभाव करता है परन्तु सृष्टिके प्रारम्भ समयमें ब्रह्मसे इसका भिन्न व्यवहार नहीं रहता है किन्तु सबका ब्रह्म-रूपसेही व्यवहार रहता है । यह जगत् जो सृष्टि समयमें दिखाई देताहै सो सृष्टिसे पहले ब्रह्मरूपसेही था । इसमें 'सदेव सोम्येदमग्र आसीत्" इत्यादिक श्रुतियां प्रमाण हैं, इस कारण सृष्टि समयकी जो जगत्के पदार्थों की रचना है सो

पूर्व सृष्टिके विषय किये जगत्के पदार्थोंकी रचना है तो अब कोई आक्षेपका स्थान नहीं—और जागृतमें भी रस्सीमें सर्प वा शुक्तिमें रजत वास्तवमें है नहीं परन्तु ज्ञान दूरत्वादिके होनेसे नवीन सर्पादिक बनाकर दिखा देता है। और जब किसी के नेत्रमें दोष होता है तब उसको एक चन्द्रमाके दो चन्द्रमा दिखाई देते हैं भला क्या चन्द्रमा दोथे जो उसको दो दिखाई दिये इससे भी यह स्पष्ट सिद्धहै कि ज्ञानमें ज्ञेय बना लेनेकी शक्ति है और ज्ञेयमें ज्ञान बना लेनेकी शक्ति नहीं। यदि ऐसा होतो हमको हमारे अज्ञात पदार्थोंका सामने रहनेसे बिना किसीके बताएँ स्वयं यह ज्ञान होजाना चाहिऐ कि ये अमुक पदार्थ हैं और इनके ये गुण वा लक्षण हैं। जो कहो कि ज्ञेयबिना ज्ञान किसका होगा इस कारण ज्ञानकी सत्तामें ज्ञेयभी कारण होसकता है। तो सुनों कि उक्त दृष्टान्तोंसे ज्ञान कीही ज्ञेयके निर्माण में सामर्थ्य जान पड़ती है। और ज्ञेयकी ज्ञानके निर्माण में नहीं। क्यों कि ज्ञान अनादि नित्यपदार्थ है यही सब ज्ञेय पदार्थोंकी जड है और ज्ञेय व्यावहारिक आनित्य कृत्रिम पदार्थ है। यह ज्ञानका निर्मापक नहीं होसक्ता। यह ज्ञान जब ज्ञाता, ज्ञेय और ज्ञानका साधक प्रमाण रूप बनता है तब वह क्रिया अर्थात् कर्म वा माया इस नामसे बोला जाता है, जैसे मृत्तिकाही घटरूप बननेसे घट नाममे बोली जाती है और जैसे घट मृत्तिका का विवर्त्त है इससे रूपान्तर करके प्रतीत होता है। ऐसे ही जगत्के सब पदार्थ ज्ञानके विवर्त्त हैं इससे रूपान्तर करके प्रतीत होते हैं वही ज्ञान विवर्त्त होकर

१—रचनेवाला

ज्ञेयादि नामसे प्रसिद्ध हुआ, उससे अन्य कोई ज्ञेय नहीं, संसारमें तीन प्रकारके पदार्थ माने गये हैं। पारमार्थिक, व्यावहारिक, और प्रातिभासिक, इनमें ज्ञानतो पारमार्थिक पदार्थ है जैसे घटादिकी अपेक्षा मृत्तिका, और घटादिक व्यावहारिक हैं और रज्जुसर्पादिक प्रातिभासिक हैं, ब्रह्मज्ञकी दृष्टिमेंतो घटादिक सब पदार्थ रज्जुसर्पादिकोंके समान सर्वथा मिथ्या व प्रातिभासिकही हैं, अच्छा अब यह विचार किया जाता है कि वह ज्ञानही ब्रह्म है उसीमें यह सारा संसार जगमगारहाहै और उसीमें व्यवहारदृष्टिसे आधाराधेय भावकी कल्पना है, वस्तुतः वह एक रूप है विषयभेदसे भिन्न भिन्न मानागया है, जैसे अनेक जलपात्रोंमें एकही सूर्यके अनेक प्रतिबिम्ब दिखाई देते हैं— और व्यवहार दृष्टिसे ही जड़ व चेतनकी कल्पना है, जड़ ज्ञान शून्य और चेतन ज्ञान युक्त, ऐसा भेद माना गया है परन्तु वास्तवमें यह कल्पना मिथ्या है। सारा जगत् चेतन ज्ञान मय है कहींतो यह ज्ञान उद्भूत है और कहीं अनुद्भूत। पाषाणादिमें अनुद्भूत और मनुष्य पश्वादिमें उद्भूत है। जैसे काष्ठादिकों में तो अग्नि अनुद्भूत है और अन्यत्र उद्भूत। अन्तःकरणके कारण मनुष्यादिकोंमें ज्ञान उद्भूत और अन्यत्र नहीं। इसीसे ऋग्वेदके ब्राह्मणमें लिखाहै कि "प्रज्ञानं ब्रह्म" अर्थात् यह जो नित्य निर्विकल्पक एक ज्ञान है सोही ब्रह्महै। जो सांसारिक पदार्थोंका ज्ञान है सो अविद्या व मायासे कलुषित होनेसे ब्रह्मसे भिन्न मानागया है। जब माया वा अविद्याका नाश हुआ और वह स्वच्छ निर्विकल्पक हुआ तो वही निर्विषयक ज्ञान है सो ब्रह्मरूपहै संसारके पदार्थ मायाके परिणाम होनेसे मिथ्याहैं। माया उस पदार्थका नाम है जो असलमें कुछ होवै नहीं और दिखाई देवै जैसे छाया वा प्रतिबिम्ब अथवा अन्धकार। इसी प्रकार सारा

जगत् अनहुआही दिखाई देता है इसलिये निःसन्देह माया है परन्तु यह माया वा अविद्या ब्रह्मसे भिन्न देखो तो कुछ नहीं यह बात छान्दोग्यश्रुति गत (तत्त्वमसि) इस महा वाक्यसे स्पष्ट ज्ञात होती है इसका यह अर्थ है कि वह ब्रह्म तू है दूसरा तू कुछ नहीं तू जो है सो फूंटा है यह वाक्य आरुणि ऋषि नें अपने पुत्र श्वेतकेतुसे कहा है। संसारमें यह जो तूमें यहवह व्यवहार है सो सब नाम वा आकारमात्रसे है सो नाम वा आकार मात्र ही जगत् है। यदि नाम वा आकार न हो तो कोई जगत्का व्यवहार नहीं चले। इसकारण अस्ति, भाति, प्रिय, ये तीन अंश तो ब्रह्म हैं और नाम व आकार जगत् है। और अस्ति, भाति, प्रिय, ही का सत्[1] चित्[2] आनन्दरूपसे व्यवहार है। अर्थात् नित्यज्ञान व आनन्द है सो ही ब्रह्म है उसीके ज्ञानसे मुक्ति होती है इसीसे वेद कहता है कि "तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यःपन्था विद्यतेऽयनाय" उस ब्रह्मके ही ज्ञानसे मोक्ष मिलती है इससे अन्य मोक्षका कोई उपाय नहीं। इससे मोक्षार्थी अवश्य आत्मज्ञान सम्पादन करै। ब्रह्म वाचक जो ज्ञानशब्द है उसका अर्थ यह है कि "ज्ञायते सर्वं दृश्यादृश्यात्मकं जगत् यस्मिंस्तज्ज्ञानम्" जाना जाता है सब दृश्य व अदृश्य रूप जगत् जिसमें सो ज्ञान ब्रह्म है। यहां अधिकरण अर्थमें "करणाधिकरणयोश्च" इस सूत्रसे ल्युट् प्रत्यय जानना। "ज्ञानज्ञेययोर्ज्ञानमेवप्रधानं तदुत्पादकत्वात्, यद्यपि सूक्ष्म रूपेण ज्ञेयमपि ज्ञानान्तर्गतत्वात् तत्सहचार्यैव, तथापि ज्ञानं ज्ञेयोद्भावकमिति ज्ञानस्यैव प्राधान्यम्" यद्यपि ज्ञान और ज्ञेय ये दो पदार्थ जगत्में अनादि सिद्ध हैं क्यों कि ज्ञान विना ज्ञेयमें ज्ञेयत्व असम्भव और ज्ञेयविना ज्ञानमें ज्ञानत्व। तथापि ज्ञानही

१ नित्य २ ज्ञान ३ सुख

अधान और सर्वज्ञेयोंकी अपेक्षासे आदि है। क्यों कि ये दोनों वास्तवमें ब्रह्म और माया रूप हैं। ज्ञानतो ब्रह्म रूप है, और ज्ञेय माया रूप है अत एव वेद वा शास्त्रोंमें ज्ञानको ब्रह्म रूप बताया है जैसा कि ऋग्वेदमें "प्रज्ञानं ब्रह्म" कि प्रज्ञानम्–इति चेत्

येनेक्षते शृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च ।
स्वाद्वस्वादु विजानाति तत्प्रज्ञानमुदीरितम् ॥ १ ॥
चतुर्मुखेन्द्रदेवेषु मनुष्याश्च गवादिषु ।
चैतन्यमेकं ब्रह्मातस्तत्प्रज्ञानमुदीरितम् ॥ २ ॥
परिपूर्णः परात्माऽस्मिन् देहे विद्याधिकारिणि ।
बुद्धेः साक्षितया स्थित्वा स्फुरन्नहमितीर्यते ॥ ३ ॥

"प्रज्ञानब्रह्म" ऐसा कहा है अब जो कहोकि वह प्रज्ञान क्या है तो सुनो–प्रज्ञान वह पदार्थ है कि यह (जीवात्मा) चक्षुके द्वारा निर्गत जो अन्तःकरणकी वृत्ति तिस करिकै उपहित जिसचैतन्यसे इस जगत्के पदार्थोंको देखता है, सुनता है, सूंघता है और बतलाता है और स्वादु वा अस्वादु पदार्थोंको जानता है सो प्रज्ञान अर्थात् एक विलक्षण नित्यज्ञान है वह ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्य्यन्त जितने जीव हैं उन सबमें एक सा अद्वितीय चैतन्य नाना प्रकारकी विद्याओंकी प्राप्तिके योग्य जो यह देह तिसमें अखण्ड सच्चिदानन्द रूप से बुद्धिकी साक्षितारकरिकै स्थित होकर प्रत्यक्ष अहं इस पदसे कहा जाता है वह स्वतः पूर्ण परमात्मा ब्रह्म है–और माया जो ब्रह्मकी एक इच्छा शक्ति है उसीका नाम है वह जीवात्माके अन्तःकरणमें अज्ञानकी जवनिका (पड़दा) रूप है जो ब्रह्मके स्वरूपको नहीं जानने देती है और वेदाद्युपदेशद्वारा ब्रह्मसाक्षात्कारसे

वह जवनिका उठती है—अन्यथा नहीं यहीं ज्ञेय रूप बन कर संसारको बनाती है फिर अन्तमें ब्रह्महीमें लीन हो जाती है इस कारण प्रधान ज्ञान रूपी ब्रह्मही है ज्ञेय नहीं अर्थात् ज्ञानही ज्ञेयको बनाता है इससे ज्ञेय मात्र ज्ञानहीकी सत्तासे सिद्ध होता है और ज्ञान तत्सत्ता सिद्ध नहीं। इति शम्।

* श्रीसरस्वत्यष्टकम् *

नमस्ते दयापूर्णदृक्शोभितास्ये, नमस्ते स्वभक्तौघवत्साभिलाष्ये। नमस्तेऽम्ब वाग्देवि वीणाविलास्ये, मयि त्वं प्रसीद स्थिते तेऽत्र दास्ये ॥ १ ॥ नमस्ते सुविद्याभिलाषैरुपास्ये, नमस्ते सुविद्यानिधीशत्वदास्ये। नमस्ते शरत्पूर्णचन्द्रप्रभास्ये, नमस्तेऽसकृच्छोभि सन्मन्वहास्ये ॥ २ ॥ अनाद्यन्तरूपप्रकाशप्रकाश्ये, समस्तं जगत् त्वत्सुदास्येऽविनाश्ये। कृपाङ्कुर्वहं सद्गुणांस्तेभिधास्ये, नमो ब्रह्मचिच्छक्तिरूपेण भास्ये ॥ ३ ॥ नमस्ते धृतश्वेतवस्त्रोचकास्ये, नमस्ते स्वलङ्कारराशिप्रकाश्ये। स्वपाणिस्थमालावराऽभीतिभास्ये, ऽन्यहस्तस्थिते पुस्तके योजितास्ये ॥ ४ ॥ नमस्ते सिताम्भोजदिव्याऽधिवास्ये, नमस्ते सदा सर्ववेदादिभाष्ये। नमस्तेऽविनाशिस्वरूपातिभास्ये नमस्ते सदा विद्वाज्जिह्वानिवास्ये ॥ ५ ॥ विधाता व्यधाद्विश्वमेतत् सुदास्ये, स्थितोऽभूद्दाते समस्तं सुलास्ये। तथैतत्सुरत्राविधौ ते सुदास्ये, स्थितो माधवो देवि सर्वप्रकाश्ये ॥ ६ ॥ विनाशेऽस्य देवो महेशोऽपि दास्ये, स्थितस्ते सदा सर्वलोकप्रकाश्ये। महेश्वर्ययित्वत्पदाधो निवास्ये, मयि त्वं प्रसीद स्थिते तेऽम्ब दास्ये ॥ ७ ॥ जयोहं विपूर्वोष्टकं ते प्रदास्ये, प्रणीयार्पयामिप्रभापुञ्जभास्ये। नमस्तेऽम्ब वाग्देवि वीणाविलास्ये मयि त्वं प्रसीद स्थिते तेऽत्र दास्ये ॥ ८ ॥ इति शम्।

॥ श्रीः ॥

❀ अथ सदाचाररत्नमाला ❀

सत्य बोलनां सर्वदा रहना शुद्ध सदैव ।
विना प्रयोजन अधिक जो भाषण वहै वृथैव ॥ १ ॥
व्यर्थ न करनी नष्टमति करिकैं कुत्सित कर्म ।
रहना दूर कुसंगतें सुकृत जानि निज धर्म ॥ २ ॥
मन प्रसन्न रखना सदा धरना जिय सन्तोष ।
करना शुभ उद्योग अरु सुभग नीतिका पोष ॥ ३ ॥
परसम्पति अति देखिकें जलना नांहि कदापि ।
परतिय त्यागो प्रणवको करो जाप मन थापि ॥ ४ ॥
साधु सन्त अरु महतजन पंडित सुजनहु सेइ ।
भगवतगुण अनुवाद नित सुनिकें निज चित देह ॥ ५ ॥
करो अनादर कबहु नहिं वृद्धनको जग मांहि ।
अपने धर्म रु कर्ममें राखो चित्त सदांहि ॥ ६ ॥
सतसङ्गति करिये सदा चित धरिये श्रुति ज्ञान ।
ज्ञानी अरु गुरु सुजनका मानों वचन प्रमान ॥ ७ ॥
अनुचित करिये नां कभी कोई कार्य मन चाय ।
शीघ्र करै नर मोक्षका जतन सुअवसर जाय ॥ ८ ॥
समझो धर्महि निज हित रखहु चित्तकी शुद्धि ।
निज विद्याकी वृद्धि अति करो प्रबल निज बुद्धि ॥ ९ ॥
पर उपकारी तत्त्वविद ज्ञानीका नर जन्म ।
जानहु सफल हि जगतमें सज्जन जो सुख सद्म ॥ १० ॥
अतिस्नेह उन्मादकर जिमि मदिराको पान ।
शब्द आदि पांचों विषय अतिके अति दुख दान ॥ ११ ॥

इनमें अति आसक्ति तजि तृष्णा तजि जग वेल ।
अनुद्योगको समझिये निज वैरी तजि खेल ॥ १२ ॥
मौत वही जातें नहीं होवै पीछै मोत ।
जन्महु सोही सुभग जग पुनि पीछै नां होत ॥ १३ ॥
लघुताकी जड जाचनां समझो यह दृढ बात ।
बलिपें जाचत ही भये ईशहु वामन गात ॥ १४ ॥
यौवन धन अरु आयु हू चंचल जग विख्यात ।
इनको गर्व न कीजिये किये सुजनता जात ॥ १५ ॥
अभिमानहु कों मानिये जड अनर्थ की तात ।
आलसको जानों सदा प्रबल शत्रुकृत घात ॥ १६ ॥
सदुपदेश देकरि करो सदा पराया हित्त ।
यही सार संसारमें सच्चा जानों मित्त ॥ १७ ॥
काम क्रोध मद लोभ ये अतिके अति दुखदान ।
यातें इनमें मत करो अति आसक्ति सुजान ॥ १८ ॥
पहिचानों निजरूपकों को तुम जग यह कौन ।
अवसर बीता जात है यामें धरो न मौन ॥ १९ ॥
मनुजजन्म अति कठिन है यातें करो विचार ।
अपने२ हित्तको जातें हो उद्धार ॥ २० ॥
ज्ञान भक्ति इन दोयमें जो चाहो चित धारि ।
दृढता धरि नर जन्म कों अवतो लेहु सुधारि ॥ २१ ॥
सदाचार शुभरत्नमय माला विजै बनाइ ।
याकों जो निजचित धरै मनुज जन्म सफलाइ ॥ २२ ॥

समाप्तेयं सदाचाररत्नमाला सं० १९९५ भा० शु० ८
शुभं भवतु । श्रीरस्तु । श्रीः ।

॥ श्रीः ॥

॥ अथ ॥

प्रश्नोत्तररत्नमाला



(श्लो ३ मू)

सर्वाधार अपार गति निराकार साकार ।
निराधार अरु एकहू, लसै अनेक प्रकार ॥ १ ॥
सत चित आनँद रूप अरु जग जनि लय थिति हेत ।
विजयत सो अतिप्रबल प्रभु भवसागरकी सेत ॥ २ ॥

कहा ग्राह्य गुरु वचन अरु कहा त्याज्य अपकर्म्म ।
कौन गुरू जो तत्त्वविद जगहित जासु स्वधर्म्म ॥ ३ ॥
शीघ्र कहा करना उचित मोक्षप्रद शुभ कर्म्म ।
कहा मोक्षतरु बीज है सम्यग् ज्ञान सुधर्म्म ॥ ४ ॥
मदिरा ज्यों मोहै कहा स्नेह सुतादिक जन्य ।
कौन चोर मनकों हरै विषय पांच नहिं अन्य ॥ ५ ॥
बेल कहा संसारकी तृष्णा बैरी कौन ।
अनुद्योग किससे डरै मरनेसे नर जौन ॥ ६ ॥
अन्धेसे हू अधिक को अन्धो रोगी जौन ।
कौन शूर जो तरुण तिय दृगशर विंधै न तौन ॥ ७ ॥
कर्ण अंजलिनतें कहा पीजे शुभ उपदेश ।
अमृत ज्यों या जगतमें जो सुख देत हमेश ॥ ८ ॥
महतपनेकी जड़ कहा परतें जाचन त्याग ।
लघुताकी जड़ जाचना यातें दूरहि भाग ॥ ९ ॥
गहन कहा स्त्रीचरित है चतुर कौन जग भौन ।
जो जन स्त्रीके चरिततें खंडित हो नहिं तौन ॥ १० ॥
क्या दारिद है जगतमें असन्तोष दुख दैन ।
कहा तुच्छता जाचना दुःखदाइ दिन रैन ॥ ११ ॥
जीवन कैसा सुभग जग अपजस दोष विहीन ।
कहा मूर्खता सुमति हो विद्याभ्यास न कीन ॥ १२ ॥
कौन जागता है जगत जन विवेकयुत जोहि ।
क्या निद्रा है मूढता चंचल कहु को होहि ॥ १३ ॥
धन जोवन अरु आयु है शशिकर सम शुचि कौन ।
सज्जन अरु कहु नरक क्या परवशता ही जौन ॥ १४ ॥

क्या सुख सबसे विरति ही क्या करनो जग मांहि ।
सबको हित करनो सदा प्रिय क्या प्राण कहांहि ॥ १५ ॥
कहा दान त्यागहि अहै आकांक्षाका जोहि ।
मित्र कौन जो पापसे करै निवृत्तहि सोहि ॥ १६ ॥
भूषण जनको है कहा शील वचनको सत्य ।
कहिय किससे होतहै जगमें बहुत अकृत्य ॥ १७ ॥
अभिमति से शुभ संगती कहा सुखप्रद जोहि ।
मैत्री व्यसनविनाशिनी का विरक्ति अति सोहि ॥ १८ ॥
अन्ध कौन जो करत है विना विचारें काम ।
बधिर वही जो सुनत नहिं वचन स्वहित अभिराम ।१९।
कौन मूक जो समय पै कहि न सकै हित बात ।
मरण कौनसी वस्तु है महामूर्खता तात ॥ २० ॥
कहा अमोलिक जगत में जो अवसर पै दान ।
मरनें तक सालै कहा गुप्त पाप मन मान ॥ २१ ॥
काहेमें करनों जतन विद्या शिक्षा मांहि ।
अरु शुभ औषध दानमें कबहू नटनां नांहि ॥ २२ ॥
कहा उपेक्षा योग्य है खल परतिय परद्रव्य ।
कहा ध्येय निशि दिन अहै ईश्वरगुणगण भव्य ॥ २३ ॥
ध्येय और हू दूसरी जग असारता जोहि ।
स्त्री धन पुत्रादिक सकल ममताबन्धन होहि ॥ २४ ॥
कहा क्रिया करतव्य अति दया दीन हित जोहि ।
सज्जन सँग मैत्री कहो कौन न वशमें होहि ॥ २५ ॥
अभिमानी रु कृतघ्न अति हठी मूर्ख जो होहि ।
मरने तक हू होय नहिं ताही को मन सोहि ॥ २६ ॥
कौन पूजने योग्य है सदाचारयुत जोहि ।

कौन अधम जग मांहि है अनाचारयुत सोहि ॥ २७ ॥
किसनें जीता जगत सब सहनशील नर जोहि ।
कहां वास करनां उचित सुजन समीपहि सोहि ॥ २८ ॥
अथवा काशीके विषैं कौन नमस्करणीय ।
देव रु दया प्रधान ही भय जग वनस्मरणीय ॥ २९ ॥
किसके वश सब जग रहै जो प्रिय वचन सुज्ञान ।
सत्यवादि जो मनुज है ताके वश जग जान ॥ ३० ॥
कहां अचल रह सुमति नर न्याय मार्गमें सोहि ।
यहँके अरु परलोकके लाभ लहन जग जोहि ॥ ३१ ॥
विजली ज्यों चल कौन है दुष्टप्रीति अरु तीय ।
अचल कौन कुलशीलमें कलि सज्जन कमनीय ॥ ३२ ॥
कहा शोच्य वैभव छुतें मूंजीपन जो होइ ॥
कहा प्रशंसायोग्य तव दातारी अति सोइ ॥ ३३ ॥
निर्बल अरु बलवानका कहा प्रशंसित कर्म ।
सहना गपसप जो करै निबल सबल गुनिधर्म ॥ ३४ ॥
चिन्तामणिके सदृश क्या दुर्लभ है जग मांहि ।
च्यार बात ये सुभग जो हम आगें दरसांहि ॥ ३५ ॥
दान मान अरु प्रेमतें ज्ञान मानतें हीन ।
क्षमासहित अतिशूरता दान भोग धन लीन ॥ ३६ ॥
विजय विनिर्मित पद्य ये भाषा मांहि रसाल ।
सब साधारण सुजन हित प्रश्नोत्तर मणिमाल ॥ ३७ ॥
संवत उन्नीसे तथा पैंसठ भादों मास।
कीन्हीं निर्मित विजयनें भाषानीतिप्रकास ॥ ३८ ॥

इति प्रश्नोत्तररत्नमाला समाप्ता ।

॥ श्रीः ॥

॥ कवित्त ॥

श्रीमान् राज राजेन्द्र श्री सवाई जैसिंहजी के परम प्रसिद्ध महाप्रतापी श्रीमानजे। महामान्य राय ज्वालानाथ जी अमात्य रहे तिनके वंश अवतंस सज्जन प्रधान जे। रायजी श्रीमान् भोलानाथजी सुविज्ञ अतिही सद्गुण निधान हरिभक्ति रत्नखानजे। खत्रीकुल कमलन कों भान के समानजे। सुनि हरि लीला गाँन खुश हों महान जे ॥ १ ॥ इन्ने छपवाई हरि भजन रत्नमाला यह जसुमति के लाला के प्रेम की सुशाला है। भगवत नन्द लाला खुशी हो कृपाला जातें सुनैं याहि खुलै ता भव बन्धन ताला है आला दरजे की भक्ति अमृत का प्याला यह राधा ब्रजबाला नन्दलाला का सुहाला है। सुजस बढने कार्यों सुकृत्य करते हैं सदा राय भोलानाथ जी जो भक्त नन्द लाला हैं ॥ २ ॥ दानी अतिज्ञानी सनमानी बुध लोकनके भगवत की भक्ति जिन्ने जग बडी जानी है। आपनी बिरानी सब सम्पत कों तुच्छ जानी मुक्ति की निसानी हरि भक्ती पहिचानी है। कहै विजयेन्दु राय श्रीमान् भोलानाथ जी ये नाहीं अभिमानी सुखसानी भक्ति ठानी है वेद शास्त्र बानी धर्म रीति नीतिसानी तामें, करि विश्वास निज हितकर प्रमानी है ॥ ३ ॥

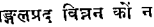
॥ श्री ॥

॥ हरिभजन रत्नमाला ॥

❀ मङ्गलाचरणम् ❀

॥ राग भिंझोटी प्रभाती ॥

सिद्धि सदन एक रदन शम्भु नदन ध्यावें सिद्धि सदन एक रदन ऋद्धि सिद्धि लक्ष लाभ सहित मुद बढ़ावैं । नाम लेत विघ्न मेटि सम्पति सरसावैं ॥ सिद्धि० ॥ १ ॥ देवन के देव महादेव सुत कहावैं प्रथम पूज्य सकल सौख्यदायक मन भावैं ॥ सिद्धि० ॥ २ ॥ सुर नर मुनि आदि सर्व जिनके गुन गावैं । मङ्गल के कार्यन में जिनहिं सब मनावैं ॥ सि० ॥ ३ ॥ मोदक प्रिय मङ्गलप्रद विघ्नन कों नसावैं । विद्याप्रद बुद्धि दानि गणपति कहलावैं ॥ सिद्धि० ॥ ४ ॥ विजय आदि भक्त जिनके चरनन कों ध्यावैं । नाम लेत शीघ्र सकल मन वाञ्छित पावैं । सिद्धि० ॥ ५ ॥



॥ संस्कृत गाँन पद राग काफी ॥

विज्ञप्तिं शृणु श्याम हरे कृपयामे स्वामिन् श्रीयुत करुणा निधान । वि० । अधमोद्धारण विषये प्रभुवर महिमा तेऽस्ति महान् । अहमति कुकृती विषयाऽऽसक्तो दीनः सुगतिप्रदान दानलिप्सा मे मुक्तेर्विज्ञप्तिं० ॥१॥ ज्ञात्वा ते महिमानं पूर्णं प्रबलं सर्व प्रधान । जातो दासस्ता वकपदयोरत्यक्त्वाऽन्यं सुख दान दान मयि कुरु मे मुक्तेर्विज्ञप्तिं० ॥२॥ शरणागत रक्षण नियमीत्वं जनिमृती रुन्धीशान । दुस्तरभवसागर निस्तारण

विधौचामो ऽस्ति भवान् कान मोचय भव मुक्ते र्विज्ञप्तिं० ॥ ३ ॥ सृष्टि स्थितिलय पालन कर्त्ता जगतो वासस्थान । विजयेन्दुं ते पदयोः पतितं रक्षखगाधिपयान ज्ञानवाञ्छात्वयियुक्ते र्विज्ञप्तिं ॥ ४ ॥

॥ गाँन पद राग भैरवी ॥

श्रीगोविन्द कृपालोमांत्वं कृपया पालय शरण गतम् । संसारेऽस्मिन् नास्ति त्वादृग्यो वै रक्षेद् दीन जनम् । श्रीगो० +॥ मच्चेतोलिः पद्म इवेदं ते पद पद्मे रममाणम् सुमुदं यातु श्रीमच्छ्रीज् जगत; सकलादपि विमुखम् ॥ ॥ श्रीगो० ॥ १ ॥ पूरय करुणासागर भगवन् प्रार्थनमेतद्विजय कृतम् प्रार्थयते विजयः खलचेनं नह्यस्मादन्यन्तु वरम् ॥श्रीगो० २ ॥ त्वत्पादाम्बुज सेवनलग्नो वेत्ति त्वत्तो न ह्यन्यम्। दुग्धेघृत मिवतत्वन्त्वत्रत्वं श्रीयुत नह्यस्त्यपरम् । श्रीगो० ॥ ३ ॥ इन्द्रादिकदेवानां वृन्दं सकलं त्वदीयकृत दास्यम् । संसारोऽयं सकलोभवता व्यधायिरक्षस्य ध्येनम् ॥ श्री गो० ४ ॥ त्वद्वाञ्छाव्यतिरे केणुभोः किमपि न भवति विभो कार्यम् । भूमिर्भाग्यिति सूर्योदेवः प्रकाशते सर्वत्रा ऽयम् ॥ श्री० ५ ॥ चन्द्र, भवनो ऽनलस्तथा ऽन्ये विदधति स्वं स्वं यत् कार्यम् । त्वद्वाञ्छा वशतःखलुसर्वञ्चलति जगच्चप्रति घसूम् । श्री० ६ ॥ ब्रह्माद्या अपिदेवाः केचित् त्वन्माया वशत; कृत्यग् व्यदधुरयोग्यं किला ऽत्रपूर्वं तदपि त्वंक्षलुपश्येदम् । श्री० ७ ॥ त्वद्रोवत्सा दनिं हरणं चक्रे जगतः कर्त्रेदम् विगतधिया विस्मृत्य बलन्ते विहितं बहु कर्मा ऽयोग्यम् ॥ ८ ॥ शम्भुरुचापि मुमोहैवैषा त्वन्मायाकिल योगशिम् । मोहन्यां समवाप्य समोहं कुर्त्तुदधावतदग्रहणम् ॥ श्री० ९ ॥ तस्मा द्वेदा ऽयं त्वांजेतुं कोपि न योग्यो दधद्वलम् । भक्ताधीनस्तेभ्य प्रेष्ठं नहि मनुषेस्वं तथा ऽन्यकम् ॥ श्रीगो० १० ॥ तस्माद्विजयस्त्वत्यददास्ये लग्नो ऽस्यैत च्चकार्यकम् । साधय दयानिधिस्त्वंपूर्णः प्रबलं तावक सामर्थ्यम् ॥ श्री० गो० ११ ॥ लीलावर्णन मेत द्विघ्नो र्विजयविरचितं निरन्तरम् । प्रातः सुपठेद्वोबिन्दाग्रे लप्स्यति सर्वं स्ववाञ्छितम् ॥ श्री० १२ ॥ गोविन्दस्तोत्र

मेतद्धि तारकं भव वारिधेः। तारकं सर्व रोगाणां भक्तानन्द प्रदायकम्॥ १३ ॥ श्रीराधोल्लसितः कृष्णोभक्ता भीष्टप्रसाधकः। एतत्स्तोत्रेण सङ्गीतः प्रसादं समवाप्नुयात्।

इतिश्री मद्गोविन्दस्तोत्रं विजयकृतं समाप्तिं मगात्।

॥ आरती श्री हरि की ॥

आनंद कन्द मुकुन्द गोविन्द श्रीयुत गिरिधारी श्रीयुत० करुणा पारावार श्रीपति मनहारी। जय देव जय देव ॥ १ ॥ श्री जगदीश्वर मोहन निज जन हितकारी, निज जन हितकारी। मुरलीधर सब सुख कर नाना अवतारी जय देव २ ॥ २ ॥ तुम ही मात पिता मेरे बन्धू सुख सिन्धू भारी, सुख सिन्धू भारी शरणागत प्रति पालक दैत्यन संहारी। जय देव० २ ॥३॥ निर्गुण हूं तुम भक्त जनन हित सगुण रूपधारी सगुण रूपधारी। गोपी जन मन मोहन जमुना तट चारी। जय देव० २ ॥ ४ ॥ विजय करै तुम सें यह विनती श्रीजगदाधारी श्रीजगदाधारी। भव व्याधी है दुःखद यो इहिं तुम टारी। जय देव २ ॥ ५ ॥

॥ झिंझोटी चाल लावणी ॥

नाथ हम शरणागत तेरी इस चाल पर

एजि श्री हरिके गुण गावो जगत में नर भव सफलावो। जोहि निज हित जग में चावो। हरीके सेवक बन जावो। जो हरिकों ध्यावैं नहीं रहै जगत लवलीन सो संसार समुद्र में डूबत रह सुख हीन लीन हो यातें हरि ध्यावो एजि श्री हरि के ॥ १ ॥ हरि बिन जग में कोय नहिं रक्षा करण समर्थ। यातें जग में अन्य को सेवन समझो व्यर्थ अर्थ यहि सच्चो मन ल्यावो। एजि श्री हरिके ॥ २ ॥ मात पिता प्रिय दार सुत इत्यादिक गृह लोग। निज स्वारथ के प्रेमि हैं इनतें भलो वियोग योग इनकेम न ललचावो। एजी श्री हरिके ॥ ६ ॥ काम

क्रोधादिक सकल माया जाल कराल इनके फन्दे सें बचो तौ हरि मिलै दयाल बाल बनि मतनें दुख पावो । एजि श्री हरिके० ॥ ४ ॥ सदा धर्म पालन करो तजो अधर्मरु पाप । करो साधु सङ्गति अरु हरि नामन को जाप आप यों करो जो हित चावो । एजि श्री हरिके ॥५॥ लख चौरासी नाहिं तो भोगो गेहि सुमित्रा विजय करै शिक्षा जो यह तिहिं समझो सुपवित्र मित्र यों करो जो हित चावो । एजी श्री हरि के० ॥ ६ ॥



॥ राग काफी ॥

दीन दयाल गोपाल करो तुम मेरी रक्षा दीन दया० । नाथ अनाथ कि रक्षा करते यह प्रण तोर विशाल । मैं अनाथ तुम दीनन नाथ हो सुध ल्यो मेरि कृपाल हाल मेरो यह लखो स्वामी । दीनदयाल गोपाल ॥ १ ॥ शरणागत के पालक तुम हो में तुव शरण विहाल । भवसागर में पड्यो बहत हों लिपट्यो माया जाल काल ज्यों दीसत मोकों दीन दयाल० ॥ २ ॥ काल अनन्त तें बहतो हूँ मैं कोंन करै प्रतिपाल पालक तुम सो और न कोऊ तुम्हही करिहो सम्हाल । बाल हूँ तुमरो में स्वामी । दीन दयाल० । ३ ॥ शरणागत कइ तारे तुमनें अबतक हे गोपाल । जिनकी संख्या को कर सकता ऐसो परम दयाल हाल यह तुमरो है स्वामी दीन० ॥४॥ या संसार समुद्र के माहीं कामादिक उत्ताल मकर निकर ग्रसते दिन राती यें हैं अति हि कराल चाल मेरि इन नें बिगाड़ी । दीन दयाल गोपाल० ॥ ५ ॥ अब आकर तोरे चरन पड़ा हूं काटो यह जंजाल । बालनन्द के सुध ल्यो मेरी मेरे ये अति साल काल ज्यों दुख दे मोकों ॥ ६ ॥ विजय करै कर जोरि बीनती तुमसें तुम हो दयाल । औगुन मेरे देखो मतनें करयो मोहि निहाल । बाल हूँ दुखिया तेरो दीन दयाल ॥ ७ ॥

॥ चाल ठुमरी । काफी ॥

प्रबल बल धाम मौपै करिये कृपा श्री राम प्रबल बल० । नभ जल पृथ्वी वायू अग्नी आदिक वस्तु तमाम विरची अरु पालत नाशत हो तुमही पूरण काम । मो पै करिये० । १ ॥ सत चित आनद रूप तिहारो निर्गुण सद्गुण ठाम व्यापक नभ ज्यों सब जग तुमकों ध्यावै आठो याम । मोपै० ॥ २ ॥ भोगी जोगी साधु मुनी जन स्मरत तोरही नाम मन वांछा पूरण हित तिनकी धरत रूप अभिराम । मोपै० ॥ ३ ॥ धरि अवतारन प्रगट होय तुम पूरत जन मन काम दैत्यन मारि के भार उतारत भूमी को सब ठाम मो पै करिये ॥ ४ ॥ विजय कहै मैं चरनन चेरो मेरो हु साधो काम भव व्याधी मेटो प्रभु मेरी ध्यात तुम्हहिं प्रति याम, मौपै करिये कृपा श्री राम ॥५॥

राग हुम्माक

[नाथ कैसे, इस चाल पर]

जसोदा तेरो श्याम है ओगुन गारो तन को कारो मन को प्यारो माँखन चोरन बारो जसोदा तेरो० । १ । टेर । मांखन चोरत मटकिन फोरत सनकारत ग्वालन कों, खावै खुवावै और लुटावै दूध रु धई हमारो, जसोदा० । १ । जाके डर सें छींके पै रखती माँखन दूध को भाँड़ो, ताके हु छेद करै चटिया तें पीवै, दूध को धारो, जसोदा० । २ । दूध धई को मांगत दान रि तेरो कान दुलारो, आय सकारे हि इत उत फिरतो मानत नाहिं ललकारो, जसोदा० । ३ । बरजत क्यों नहिं याकों री तू करत बिगाड़ हमारो हमतो या कों पीटहुँ नाहीं जानि रि तेरो बारो जसोदा० । ४ । अब लोकों आकर हमनें कहि अब तो याहि सुधारो नाहि तो हम पीटैं मारैंगी को देही इहिं सारो । जसोदा तेरो० । ५ । झपटे चीर कंचुकी फारै यह याको दिन चारो नित्य हमें दुख देवै यहतो

पिंड छुड़ारि हमारो, जसोदा० । ६ । रस्ते चलति को मारग रोकै मानत नाहिं दुलारो, यों कहि ताको हाथ पकरि के जसुदा पास प्रचारो, जसोदा० । ७ । ल्याय जसोदा के ढिग कृष्णहि गोपी बचन उचारो । करी शिकायत बहु विध कृष्ण कि तव बदल्यो उणिहारो । जसोदा० । ८ । सुनताहिं यों बोली तब जसुमति लखरी यह पति थारो, मतवारी कैसे भइ गोपी यह नहिं मेरो बारो, जसोदा० । ९ । यों सुनि चाली लज्जित होके लीन्हों निज गृह द्वारो, वह गोपी यों जानी मन में कृष्न जगत पति बारो, जसोदा० । १० । विजै श्याम जगपति या विध किइ लीला जिन को न पारो मेरी सुध ल्यो मोहि सम्हारो मैं हूँ वाको बारो, जसोदा० । ११ । मेरी भव व्याथी वह टारो, मेरे ताको सहारो; औरन कों ना जानूँ मैतो ताको भरोसो भारो जसोदा तेरो श्याम है औगुन गारो । १२ ।

❀ राग गारो ❀

जग जीवन राधिका नाथ धणी, रखते हो कृपा भकतों पै घणी, जग जीवन० । + । जग में महिमा प्रभु तोर तणी, जिहिं कह सकें नाहिं अजेशफणी, जग जीवन० । १ । शरणागत रक्षण के सुप्रणी, चह पापिहि होय भया शरणी, जग० । २ । करिकें जो कृपा रक्षा करणी, नहिं या विध अन्य प्रभू सो धणी, जग जीवन० । ३ । जब ही गज ग्राह के आयतणी, तजि दौर गये खगराज मणी, जग० । ४ । किय रक्षण ग्राह तें हस्ति धणी; गज ग्राह के राड जबैहि ठणी, जग जीवन । पुनि द्रौपदि की रखि लाज घणी, दुःशासन गर्व निवारे बणी, जग० । ५ । बकसी बिजयेश जगसुमणी, जब पाण्डु के पुत्रन को जो रणी, जग जीवन० । ६ । कुरु वंशि रु पाण्डव राड ठणी, तब हार गये कुरु वंश

धरणी, जग जीवन० ॥ ७ ॥ तुम सीपम को प्रण राख्यो धरणी निज के प्रण टारि दियें हिं वरणी, ॥ जग जीवन० राधिका नाथ० ॥ ८ ॥ इहिं रीति अनेकन तो शरणी । तुम कों जुपड़ी रक्षा करणी । जग जीवन० ९ ॥ सुध ल्यो विजयेन्दु कि आप धणी । यह मुक्ति नहिं जग तें अपणी ॥ जग जीवन० । १० ।

॥ राग हुभाभ ॥

श्याम तुम अति ही नट खट होजी । दूध धई को दान माँगते नई रीति यह खोजी । श्याम० १ । दूध धई को लालच पाकर यहँ तुम आवत होजी । तुमरे बाबा नन्दरायनहु कभि लिय दान कहोजी । श्याम० । १ । नई लाग हम नाहिं लगावत यों चह जितनोंहि ल्योजी श्याम सुँदर लम्पट तुम क्यों हमँ लपट झपट दुख योजी । श्याम० । २ । दूध धई की गगरी फोरी बैयाँहु पकरि मरोरी । बर जोरी को लाला अब तुम दुर्गति लाभ लहोजी । श्याम० १ । कंसराय पहं जाय पुकारिहँ या को मजा चखोजी । पकरि मगावहि दण्ड दिवावहि तब तुम कहा करोजी । श्याप० ४ । नाहीं तो तुम पीछा छोड़ो लैरौं मतना लगोजी । यह सुन कृष्ण कहै गोपिन सें अरि तुम बावरि होजी । श्याम । ५ । कौन कंस में तातें डरों नाहिं खूब पुकार करोजी । जमराजहु सें नाहि डरों पुनि कंस बापुरो कोजी । श्याम० । ६ । जो नाहिं देहो दान दूध धई तो सब छीन लेओंजी । यों सुनि मृदु मुसकाती बोली सबही राजी होजी । श्याम० ७ । राजी किय तिन कृष्ण प्यारे कों तिन सँग पुनि सो रम्योजी । या विधि क्रीडा करत कृष्णजी मेरो दुःख

हरोजी, श्याम तुम० ॥ ८ ॥ विजे कहै मैं तो शरणागत मेरी बाँह गहोजी. शरणागत रक्षक ब्रज बारो जनि मृति दुःख दहोजी। श्याम० ॥ ९ ॥

॥ उझाझ ॥

मैंतो तोरे चरन परयो जि ब्रजचन्द, आनद कन्द मुकन्द, मैतो तोरे ०॥ टेर ॥ तुम जग के करता हरता प्रभु तुम पालक नदनन्द, ब्रज बनि तन संग कौतुक करते सुख तिन देत अमन्द मैतो तोरे ०॥ १ ॥ बेहू तुमसे अति खुश हो के क्रीडत नित सानन्द, खेलन जब जाते बन तिन संग होते युवक स्वछन्द। मैतो० ॥ २ ॥ जब घर आते माता के ढिंग तब शिशुरूप धरन्द। बन में रमते तिन संग नित ही या विध कर्म करन्द। मैं तो० ॥ ३ ॥ अति उत्पात करत नित जा कर तिनके घर सानन्द। दूध धई चोरत माखन हू खा लेते ब्रजचन्द, मैतो० ॥ ४ ॥ खाते खिलाते ग्वाल जनन को ढोरत दूध अमन्द। करत बिगाड़ नित्य नित तिनको उत्पाती ब्रजचन्द। मैतो० ॥ ५ ॥ यह लखि इक दिन इक गोपी तब बांह पकरि नदनन्द, लेगइ खुद जसुमति के ढिंगतिहिं, ओगुन तासु कहन्द। मैतो० ॥ ६ ॥ जसुमति तेरो लाला नट खट मानत नाहिं रिमन्द, दूध धई के मटकन फोरत करत बिगाड़ स्वछन्द। मैतो० ॥ ७ ॥ ताहण कृष्ण बनें ताके पति स्वयं तहां नदनन्द, देखि ताहि जसुमति तब बोली, कौनरि लखि यह मन्द। मैतो० ॥ ८ ॥ यह तो तेरो पति है पगली नाहीं यह ब्रजचन्द जाहि पकरि कै ल्याई मोढिंग करती छल क्यों मन्द। मैतो० ॥ ९ ॥ यों सुनि लज्जित हो तब सटकी वह गोपी मतिमन्द। कृष्ण जगत पति याविध करते, कौतुक रचि छलछन्द। मैतो० ॥ १० ॥ कहै विजय मेरो रक्षक सो मेटो जनि मृति फन्द शरणा गत रक्षण व्रत जाको सोभत बसो मुकन्द। मैतो० ॥ ११ ॥

॥ नाथ कैसे इस जाल पर ॥

॥ उभाझ ॥

श्याम मेरी पूर्ण करोजी आस, मैतो तुव चरनन को दास। श्या० शरणागतरक्षक करुणानिधि दीनोद्धारक खास, पतितपाल तुम निजदासन की दया लेत मुख रास। श्याम मेरी० ॥१॥ दीनरु पतितहु में हूं स्वामी तुव चरनन किय वास, पतित उधारण तुव व्रत दृढ है यहि मोकों दृढ आस। श्याम में ॥ २ ॥ जनि मृति व्याधी अति ही असार्ध जाकि नाश किन आस। यातें तुव शरणूँ लिय स्वामी करिये याको नाश। श्याम मे० ॥ ३ ॥ कइ जन्मन तें यह दुख भोगूँ यहि फन्दो मम खास, और काट नहिं सकता याकों तुम समरथ सु प्रकाश श्याम मे० ॥ ४ ॥ इन्द्रादिक देवरु योगी मुनि सबही तुम्हरे दास। तुम सम और न या जग माहीं कोई हू श्री निवास। श्याम० ॥ ५ ॥ विजय चरन प्रि अरज करत है याकों पूर्ण तुव आस। पतित अनेक उधारे तुमने यातें किइ अरदास। श्याम मे० ॥ ६ ॥

॥ खमाच ॥

नन्दके फरचन्द श्रीव्रजचन्द आनद कन्द हो। भक्त जन भवफन्द मेटत देत ऋद्धि अमन्द हो। निष्काम भक्तन कों प्रभू सारूप्य देत स्वच्छन्द हो। जेहि भक्त सकाम उनके काम कैरव चन्द हो। नन्द के० ॥ १ ॥ संसार सर्व असार इक तुम सार देवकि नन्द हो। शरणागतों के तुमहि स्वामी पूज्यपाद द्वन्द हो। नन्द के० ॥ २ ॥ वेद बोध्य ब्रह्म तुम प्रभु सत्य चित आनन्द हो। भक्तजन सुख दायि खल जन बन्ध के दृढ़फन्द हो। नन्द के० ॥ ३ ॥ विजय श्रीपति दास तेरो अरज करत सुमन्द हो। मेटिये भव फन्द या को जातें यहु सानन्द हो। नन्द के फरजन्द श्री व्रजचन्द आनन्द कन्द हो ॥ ४ ॥

॥ उझाझ ॥

(नाथ कैसे० इस चाल पर)

श्याम तुम मेरेहो रखवैया मैतो तोरे चरनन को सेवैया । श्याम तुम मेरे हो रखवैया । दीन हीन में कछु नहिं जानों कामादिक में छैया । केवल तुव चरनन को शरनो मोहि सकल सुख दैया । श्याम तुम० ॥ १ ॥ अधम नीच पापिन को स्वामी खल अरु नामी कामी । मैं श्री युत तुव चरन पर्‍यो अब मो सुध ल्यो बल भैया । श्याम० ॥ २ ॥ दीनन नाथ कृपा सिन्धू तुम पार लगावो नैया । या असार संसार समद में भरमत अति दुख पैया । श्याम० ॥ ३ ॥ मैं अनाथ श्री नाथ नाथ तुम और न कोई रखैया । मेरी सुध ल्यो अबतो श्रीयुत तुमही बापरु मैया । श्याम० ॥ ४ ॥ जग जीवन मन मोहन प्यारे कइ पापिन तुम तारे । जे तुव चरन शरन में आये तिनके पाप नसैया श्याम० ॥ ५ ॥ धोखे सें इक नाम उचार्‍यो अजामेल तिहिं तार्‍यो । ऐसी तोर नाम की महिमा तो सेवक सुख लैया । श्याम० ॥ ६ ॥ शरणागत रक्षक तुम स्वामी मैं हूं तुव अनुगामी । भवसागर सें पार निकारो येहि अरज मेरि सैंया । श्याम० ॥ ७ ॥ बिजै बीनती येही स्वामी कर रह्यो दास तिहारो चरन पर्‍यो सुध लेवो याकी शरण तोर । यह ऐया । श्याम तुम मेरे हो रखवैया । मैं तो तोरे० ॥ ८ ॥

(ध्रोबनियां लुटगईरे. इस चाल पर)

॥ कहरवा ॥

जगनाथ कृपा करिये हमपै हम चाकर तुव चरनन के जगनाथ कृपा । तुमरी महिमा श्री जगदीश्वर जग में अपरम्पार, शेषादिक हू हारे वरणत वर्णे जो हो योग्य योग्य नहिं कोइ ता वरणन के । जगनाथ० ॥ १ । ब्रह्मादिक तुव आज्ञा बरती सब जगदीश्वर देव. यातें तुमरे सम कोइ नाहीं जाकी करैं हम सेव देव तुम योग्य हो पालन के । जगनाथ०

॥ २ ॥ शरणागत विजयेन्दु तुमरो पन्यो चरन तुव आय, वाकी सुध लयो हे जगदीश्वर यह तुमरो कहलाय जाय कहं आश्रित पावन के। जग० ॥ ३ ॥

(खबर नहिं है जग में पल की, इस चाल पर)

॥ झिझोंटी ॥

सुन्दर छवि छाईरे श्याम की सुन्दर छवि छाई ललित त्रिभंग सुरूप विराजत शोभा अधिकाई श्याम की सुन्दर छवि छाई। मोर मुकुट मकराकृति कुण्डल कानन झलकाई। गल वैजन्ती माल प्रभू के अतिही विलसाई। श्याम० ॥ १ ॥ रत्न जटित भुजबन्द मुद्रिका चमकत दरसाई। शरदपूर्ण विधु वदन विलोकत मन अति हरसाई। श्याम की० ॥ २ ॥ प्रभू की कान्ती उमगाई रे, प्रभू की कान्ती उमगाई। घनश्याम जगधाम श्याम को दर्शन सुखदाई। श्याम की० ॥ ३ ॥ जरी के वस्त्र अंग मांई रे, जरी के वस्त्र अङ्ग मांई बाजत वंशी अधर श्याम के शोभत मन भाई। श्याम० ॥ ४ ॥ गजरे नाना विध पुष्पन के सुगन्ध सरसाई, हीरा पन्ना माणिक मोती माला झलकाई। श्याम० ॥ ५ ॥ निर्गुणहू प्रभु भक्तन के हित सगुण भये आई। शरणागत रक्षक मन मोहन शोभा अति पाई। श्याम की० ॥ ६ ॥ केसर तिलक विराजत सुन्दर ललाट के मांई। नाना विध भूषण सोहैं अति सब अंगन छाई। श्याम० ॥ ७ ॥ अधम उधारण दुःख विदारण करत लसैं सांई। भक्त इष्ट प्रद दुष्ट नाश हित जग में प्रगटाई। श्याम की० ॥ ८ ॥ महदी लाली चरनन मांही सुन्दर ढग आई। मन्दस्मित युत सोहत अतिही मुख जिन को भाई। श्याम० ॥ ९ ॥ विजैचरन को दास शरन में पड्यो अबै आई। दरशन हित तरसै यह अतिही इहिं मन ललचाई। श्याम० ॥ १० ॥ इच्छा याकी पूर्ण करेंगे दान समझियाई भक्त मनोरथ पूरण करते, आप दया ल्याई। श्याम की० ॥ ११ ॥

(खबर नहिं है० इस चाल पर)

॥ झिंझोटी ॥

श्याम तुम दीनन दुख हरते २ ज्यो जन शरणों लेत तिहारो तिहिं अपनों करते । श्याम० ॥ १ ॥ रिपु को भ्राता आय विभीषण शरण लियो जबही राम भये जब अपनायो तिहिं दया यों चित धरते । श्याम० ॥ १ ॥ गजकी टेर सुनी जब तुम खुद गरुड़ त्यागि भागे । जाकर ताहि बचायो जल्दी यों रक्षा करते । श्याम० ॥ २ ॥ हिरणाकुश नें प्रहलादहु को जब दुख दियो अतिही । खंभ फारि प्रगटे नृहरी हो बचाया तिहिं लरते श्याम० ॥ ३ ॥ विप्र सुदामा दारिद दुखिहो शरण लियो तुमरो । ता कों दीन्ह अतुल धन तुमनें यों जन सुखि करते । श्याम० ॥ ४ ॥ ध्रुवहू जब सोतेली मातें दुखित होय निकसा । शरण लियो तब ता दुख हरियो यों कृत आचरते । श्याम० ॥ ५ ॥ बिजै कहै मैं हूं अति दुखिया श्याम सुंदर प्रभुजी । भव व्याधी दुख मेरोहु मेटो विलंब क्यों करते । श्याम तुम दीनन दुख हरते ।

(वह ही चाल)

❀ झिंझोटी ❀

शरणों सुखदाईरे, श्याम को शरणों सुखदाई । जन्म मरण दुख मिटै सटै हरि जातें जग माई । श्याम को० ॥ भिनखा जूण मोक्ष की सीढी यह समझो भाई । लख चौरासी भुगतत भुगतत मिलैं कभी आई । श्याम को० ॥ १ ॥ हरि की पूर्ण कृपा हो जबही मिलती यह आई । और जूण में सुकृत न बणता अवसर विनसाई । श्याम को० ॥ २ ॥ मोक्ष को सीधो पथ भाई रे मोक्ष को सीधो पथ भाई । गहो याहि उतरो भवसागर पार सौख्य छाई । श्याम को० ॥३॥ और उपाय कठिन मुक्ती के चलो याहि मांई बिजै कहै यह भवसागर की नौका जगमाई । श्याम० को० ॥ ४ ॥ या रस्ते में पार हुये कइ नर तन रूकलाई । यातें हरि को

शरणों लेवो या सम कोइ नाईं। श्याम को० ॥ ५ ॥ यातें होय श्याम अनुकूला रुक्मिणि को दूला। हुयँ अनुकूल श्याम के मुक्ती सुखतरु सघनाई। श्याम० ॥ ६ ॥ जग अतार इकसार हरि को शरणो या मांई। या तें तज जगकार सार गुनि मन वो इहिं माई। श्याम को शरणों सुखदाई ॥ ७ ॥

॥ सोरठ ॥

महर करोजी मोपै राधा गोविन्द, काटो जनि मृति फन्द, महर करोजि मोपै राधा गोविंद। करुणा सागर परम उजागर आपहो आनँद कन्द। किरपा करो० ॥ १ ॥ भक्त वछल शरणागत रक्षक सेउँ में तुव पद द्वन्द। महर० ॥ २ ॥ भक्त इष्ट पूरण करने को तुम समरथ नदनंद ॥ ३ ॥ पापिहु जो तुव शरणा लेता तिहिं अपनात स्वछन्द महर ० ॥ ४ ॥ या विधि आपको विरद भक्त के दोष न लखत अमंद। महर० ॥ ५ ॥ भक्ता धीन होत तुम खुदही ऐसे तुम ब्रज चंद महर० ॥ दै॥ यह कृतज्ञता तुमरी स्वामी जगत विदित है मुकुंद, महर० ॥ ७ ॥ आप अखण्ड भुवन मण्डल में भक्त कुमुद हित चंद, महर० ॥ ८ ॥ मत चित आनद रूपतें राजैं मेटैं दुःखन वृंद, महर० ॥ ९ ॥ विजय करै विनती कर जोरें बोमोहि मोक्षा नंद, महर ॥ १० ॥ मेरो रक्षक श्याम मुकट वारो मेरो रक्षक शरणागत रक्षण व्रत जाको दृढ अति व्याविध नँदवारो, मेरो र० ॥ १ ॥ इंद्र कोपतें व्रजजन दुखियन लखि जानें गिर वर धारो, मेरो रक्षक० ॥ २ ॥ द्रुपद सुता कों दुखिया लखि के ताको चीर बढा डारो, मेरो र० ॥ ३ ॥ गजकी टेर सुनी जब जानें ग्रसा किइ ग्राह हिं माऱ्यो, मेरो र० ॥ ४ ॥ विप्र सुदामा कों लाखि दुखिया ताको दारिद दुख टारो, मेरो र० ॥ ५ ॥ मिट्टी खाते देखि जसोदा बोली मुख दिखला थारो, मेरो र० ॥ ६ ॥ तब मुख फारि दिखायो जाने निज मुख माहिं जगत सारो, मेरो र० ॥ ७ ॥ ऊखल कै बांध्यो रस्सी से तब

यमलार्जुन को तारो, मेरो र० । ८ ॥ पाण्डुसुतन की रक्षा कीनी कौरव कुल विनसा डारो, मेरो र० ॥ ९ ॥ विजै कहैं याविध ब्रजबारो मेरिहु सुध लेगो प्यारो० मेरो र० ॥ १० ॥ रथी महारथि अति रथि जातैं युध में नहिं जीतन वारो, मेरो रक्षक० ॥ ११ ॥

॥ आसावरी जोगिया ॥

करुणा करि मोहि त्यारो प्रभू मैं तो शरणागत हूँ तिहारो । भक्त वछल शरणागत रक्षक दीनदया उर धारो, भव सागर में डूब रह्यो हूँ यातें पार निकारो । प्रभू मैं तो० ॥ १ ॥ शरणागत पालन व्रत तुमरो जानत है जग सारो, कइ शरणागत त्यारे तुमनें अब अवसर है म्हारो । प्रभू मैं तो० ॥ २ ॥ में अनाथ तुम नाथ हो मेरे और को नाहिं सहारो । तुमहीं मात पिता अरु बन्धू मैं तुमरो ही बारो, प्रभू मैं तो० ॥ ३ ॥ अशरण शरण दीन बंधू तुम मैं अतिदीन दुख्यारो येही समझि मोहि अपना लीजे निज दृढ व्रत न विसारो प्रभू मैं तो० ॥ ४ ॥ पतित पाल ना दृढ व्रत तुमरो मेरी ओर निहारो मुझ गरीब की रक्षा के हित ताकों हि आप सम्हारो । प्रभू० ॥ ५ ॥ औगुन मेरे नांहीं देखो अपनी ओर निहारो । जग माया तें मोहि हटाओ निज पद भक्ति प्रचारो प्रभू० ॥ ६ ॥ मोहि टारें नहिं सरि है स्वामी तुमरो हि मेरे सहारो । जो न सुनो गे मेरी विनती तो मैं ताजि हुँ न द्वारो । प्रभू० ॥ ७ ॥ संख्या तीत पतित तुम त्यारे त्यारण मोरे न भाज्यो । दीना नाथ गोविन्द सांवरे मैं शरणो तुव धाज्यो । प्रभू० ॥ ८ ॥ विजै करै यह विनती स्वामी मेरो दुःख निवारो । भव व्याधी है असाधी अतिही यह ही दुःख है भाज्यो प्रभू० ॥ ९ ॥

उझाझ

श्याम मेरी सुधल्यो करुणा निधान। अरज सुनो भगवान। श्याम मेरी सुध ल्यो ॥ टेर ॥ मैं तुव चरनन को हूँ दासा यो मोहि शुभ वरदान। या अपार संसार अब्धितें त्यारो मोहि श्री मान। श्याम मेरी सुध० ॥ १ ॥ मङ्गल करण अमङ्गल हरणा मोक्ष प्रद जग खान। सुर नर मुनि योगीजन तुम को ध्यावैं नित धरि ध्यान। श्याम मेरी० ॥ २ ॥ दुख मेटत हो निज भक्तन के उनको अपने जान। जग जीवन मन सोहन स्वामी नामी जगत प्रधान। श्याम मेरी० ॥ ३ ॥ दीनो द्वारक जगके नायक जग बहु तुमरो मान। निर्गुण हूँ सगुणात्मक होते निज भक्तन हित ठान श्याम मेरी० ॥ ४ ॥ या अपार संसार आब्धि में नौ तुव नाम महान जाके स्मरण मात्र तें उतरे भव निधिपार सुजान। श्याम मेरी० ॥ ५ ॥ शरणागत रक्षक तुम स्वामी मैं अघ अवगुन खान। विजै कहै सुनि के सो विनती सुध ल्यो मो जग भान श्याम मेरी० ॥ ६ ॥

हुझाझ

रेमन क्यों तू अपानों भयो जग झंझट में फँस ही रह्यो है मानत नाहिं कह्यो रेमन० ॥ जानत नाहीं चोरासी को चक्कर किन ना सह्यो। तैंनें अपनो मरनो न सोच्यो क्या तू अमर भयो रेमन० ॥ १ ॥ जनमत मरत रैन दिन नर जग यह सब देख रह्यो। जो जग जनमे सो सब मरते को जग अमर भयो। रेमन० ॥ २ ॥ जनम कि त्रास सहि ह जग रमाड्यो विषय न तोहि दह्यो। जनम मरण व्याधी तें बचनो अब तक नाहिं चह्यो रेमन० ॥ ३ ॥ राधाकृष्ण बिमल पद पङ्कज शरणो क्यों न गह्यो। बीती ताहि बिसार दे मूरख अबही मान कह्यो। रेमन० ॥ ४ ॥ रैन दिना अरु छिन छिन अबतो हरि भज जनम गयो शरणो लेतू हरिको अबही बहु दुख अबलों सह्यो। रेमन० ॥ ५ ॥

शरणागत रक्षक श्री नर हरि कहजन दुःख दह्यो। तेरी हूँ भव व्याधि कों मेटिहि वह सब देख रह्यो। रेमन ॥ ६ ॥ लखि प्रहलाद कि आपत मेटी तिहिं अपनाय लयो। यातें सब तजि हरि को भजरे क्यों दुख भुगत रह्यो। रेमन ॥ ७ ॥ विजै जगत की माया तज कर हरि पद शरण गह्यो। सन्त जन ने यातें उनने हरि पद वास लह्यो। रेमन ॥ ८ ॥

हुकाफ

श्याम तुम गुन के गाहक हो जि मेरे औगुन मत नें लखो जि श्याम तुम०। टेर। अजामेल नें पापहि कीन्हे तिनको न ध्यान रख्योजी। मरते दम नारायण बोलत निज पद ताहि दियो जि। श्याम तुम० ॥ १ ॥ निज सुत नारायण कोहि तातें मरते न नाम लियोजी। तातें ही ताकों अपनो गुनि औगुन माफ कियोजी। श्याम तुम० ॥ २ ॥ जस के लोक में जाने न दीन्हो नरक तें टार दियोजी। अपने लोक माहिं तिहिं भेज्यो यह जस छाय रह्यो जी। श्या० ॥ ३ ॥ ऐसो और दयालु न कोई तुम सो समरथ मोजी ॥ तुम राई कों शैल करोजी शैल कों राई करोजि। श्या० तुम० ॥४॥ ऐसे पूर्ण दयालु को शरणो लयो अरु मोज करोजी। मनुज जन्म निज सफल करन कों याहि को ध्यान धरोजि। श्याम तुम० ॥ ५ ॥ ऐसे प्रभु कों जो नहिं ध्यावै विषयन सुख में छावै। सो मद भागी लख चोरासी भुगतिहि यहि समझोजि। श्या० तुम० ॥ ६ ॥ ताकिहि किरपा तें भव फन्दा कटता येहि लखोजी। विजै कहत यहि गुनि मन माहीं ताकों नित सुमिरोजी। श्याम तुम गुन के गाहक हो जि ॥ ७ ॥ ॥ २० ॥

(खबर नहि है इस चाल)

॥ लावणी छोटी बहर ॥

श्याम में जाकि प्रीति लागी, सोहि है जग में बड भागी। जगत के धन्धों कों त्यागी। भूख विषयन तें जिहिं भागी। सार

एक जग में हरी मन मोहन यदुराय जाके भजने सें मनुज जन्म सफल होजाय, जाय भुज भव व्याधी आगी। श्याम में ॥ १ ॥ पुरातन कर्म रेख जागी। श्याम में भया जो अनुरागी। राधिका जासु प्रेम पागी। कृष्ण खेलत जिहिं सँग लागी। जो जग में हरि कों भजै हो अनन्य इकतार। ताके पाप सभी मिटैं पिटै न सो जम द्वार। कार यह करै सो हरि रागी। श्याम में ॥ २ ॥ भव सागर अति गहन है यामें क्लेश अनन्त। यातें हरि के भजन तें होता मनुज निचिन्त सन्त जन याके अनुरागी। श्याम में० ॥३॥ जो हरि कों भजता नहीं जानत जग सुख क्षेम। सो जन चोरासी भुगत लहत न सुख यह नेम दुःख ही लहता दुर्भागी। श्याम में० ॥ ४ ॥ विजै कहै यह ही समझि जग ऊंझट कों त्यागि भजै अहर्निश श्री हरिहिं ता चरनन अनुरागि रागि हो हो हरि तालागी। श्याम में जाकि प्रीति लागी सोइ है जग में बड़ भागी ॥ ५ । २१ ॥

॥ राग काफी ॥

मोक्ष कठिन जग मांही बिना लियें शरणों कनाही। मोक्ष कठिन०। ध्रुव प्रहलाद आदि जग माहीं, मुक्त भये इहिं राही। अंबरीश नारद शुक आदिक की हू हरि गहि बांही राही यहि सुगम महा ही। मोक्ष कठिन० ॥ १ ॥ सफल जनम नहिं मुक्ति बिना जग समझ लेहु मन मांही। याही राही तरे हैं बहुतजन यातें चलो इहिं राही नांही तो जनम नसाहीं। मोक्ष कठिन० ॥ २ ॥ वेद पुराण शास्त्रहू सबही यह ही मार्ग बताही। साधु सन्त अरु ऋषि मुनि आदिक या विध कथन कराहीं राहि यहि सुगम सुहाहीं। मोक्ष कठिन० ॥ ३ ॥ विजै कहै इहिं कारण मेंतें चरण गहे हैं कनाही अति दयालु हैं ये जगदीश्वर भेविहु पार लगाहीं। याही तें प्रभुता लखाही। मोक्ष क० ॥४॥२२॥

॥ रागिणी पीलू बरवो ॥

सफल जन्म जग होवै तबही जब हरि नाम जपै नित नितही।

सफल जन्म जग० । चित्त लगाके हरि कों ध्यावै जग के धन्धों सें हट जावै । ममता मोह में मन नहिं लावै प्रेम होय हरि में हरदम हीं सफल० ॥ १ ॥ धर्म के मार्ग में चालै तितहीं हरि चर्चा में रत रह जबही । पर उपकार करै जो अतहीं दुःख न देवै काहु कों कबही । जन्म सफल० ॥ २ ॥ सत संगति में रह नित जबही । कुत्सित कर्म तें हटता तबही । वेद शास्त्र के मत में रमही भगवतगुण गण निज मन धरही । जन्म सफल० ॥ ३ ॥ विजै कहै ऐसो जन जोही सफल करै नरतन कों सोही । अन्त मोक्ष पा जन्म मरण तें हट जाता है जन निरमोही । जन्म सफल० ॥ ४ ॥

(खबर नहीं है जगमें पल की ० इस चाल)

॥ कहरवा झिंझोटी ॥

श्याम तोहि शरणागत प्यारे, रे श्याम २ पापि सुरापी चरन परे तिन सब ही कों तारे श्याम तोहि श० । लक्ष्मी हलधर आदिक जेते निज के कुलवारे ऐसे प्रिय नहिं तोकों जैसे भक्त वर्ग वारे श्याम० ॥ १ ॥ भक्तों के लारे लारे रे तू फिरता है प्यारे, सच्चे प्रेमी जे हैं तिन के सबहि काज सारे श्याम तोहि ॥ २ ॥ अजामेल गणिकारु निषादा दिक जन संसारे । शरणागत अति नीचहु तैनें सब कों उद्धारे । श्याम० । ३ ॥ द्रुपद सुता कों दुःखित लखि के चीर बढायारे । आय द्वारका सें अति जलदी तादुख टारारे । श्याम० ॥ ४ ॥ खैचत चीर दुशासन हार्‌यो तासु गर्व गारे । निज शरणागत विप्र सुदामा दारिद दुख टारे श्याम० ॥ ६ ॥ राम भये जब प्रहलादहु के देखे दुःख भारे हिरणाकुश के अंग चीर कर ताके दुख जारे श्याम० ॥ ६ ॥ विजै कहै मेंहू शरणागत मो सुध लयो प्यारे । मोकों अवगुन भांडे कों अब नहिं सरिहैं टारे । श्याम ॥ ७ ॥२४॥

॥ नाथ कैसे गैंजको इस चालपर ॥

॥ हुंकार ॥

श्याम तुम समरथ हो अति भारे रथी महा रथि अति रथि आदी

सबही तुमतें हारे । श्याम तुम० । शेष रूप तें सब जग तुम नें अपने शिर पर धारे । वामन होय छल्यो बलि राजहिं लियो त्रिपद जग जारे । श्याम० ॥ १ ॥ दावानल को पान कियो जब बन में खेल प्रचारे । ग्वाल बाल और गायनके तुम अग्नि तें कष्ट निवारे । श्याम० ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने जब ग्वाल बाल गउ वत्स हरण किय प्यारे । तब तुम एक वर्ष तक वैसेहि रचि गो ग्वाल प्रचारे । श्याम तुम० ॥ ३ ॥ दीन सुदामा दारिद दुखिहो जब तुव पास सिधारे । बिन मांगे दिय ताहि अतुल धन दारिद दुःख निवारे श्याम तुम० ॥ ४ ॥ कंस रावणादिक कइ असुरन तुमनें युध करि मारे । जो सब जग के जीतन वारे तिन का गर्व हरारे । श्याम० ॥ ५ ॥ देवकि के तुम सुत सुत ल्याये जम के लोक सिधारे । निज गुरु का मृत सुत ल्या दीन्हा या विधि कर्म प्रचारे श्याम० ॥ ६ ॥ पाण्डु सुतन की रक्षा के हित यत्न किये बहु भारे । कौरव कुल विध्वंस करा के, तिन्हैं जिताये प्यारे । श्याम तुम० ॥ ७ ॥ निज प्रण कों तुम टारि प्रभुजी भीषम के प्रण सारे । शरणागत रक्षण प्रण अपना गुनि निज भक्तन तारे । श्याम ॥ ८ ॥ विजै तोर शरणागत प्यारे इहिं सुध ल्यो ब्रजवारे । यह अनाथ तुम नाथहु याके काहे विलँब कियारे । श्याम० तुम ॥ ९ ॥ २५ ॥

॥ आसावरी जोगिया ॥

ललित त्रिभंग सुहाइ श्याम की सूरत मोमन भाई । जा विध मोर मेघ गर्जन तें चातक स्वाति कि बिन्दुहिं पाई । हर्षे त्यों मोमन श्री श्याम कि छवि लखि अति ललचाई श्याम की । जाविध सूरज कमल खिलाई ज्यों विधु तें कुमुदहु विकसाई । ताविधि श्याम सुन्दर रवि मोमन कमल अतिहि हरसाई । श्याम० ॥ २ ॥ जा विध निर्धन धन निधि पाई तृषावन्त शीतल जल पाई । हर्षित हो त्योंही मोरतहु तातें अति विकसाई । श्याम की० ॥ ३ ॥ ज्यों सज्जन सतसंगति पाई धेनु लवाई वत्स लखाई । हर्षित हो अति विजै कहै त्यों मो मन श्याम

लखाई श्याम की० ॥ ४ ॥ राधारमण चरण युग छांही जैसें भ्रमर कमल बन मांही । तैसा रमें त्यों मोसन भूमरहु रमें सेहि मन चाई । श्याम की० सू० ॥ ५ ॥ शरणागत रक्षण तत्पर अति श्याम सुंदर यदुराई । में शरणागत श्री चरनन को मोसन ता छवि छाई । श्याम की० ॥ ६ ॥ भव सागरमें भ्रमेत २ भैंने कल नाहिं पाई । अन्तरजामी जानत यह सब तोहू सुध में दिलाई । श्याम की० ॥ ७ ॥ मोहि अवश्य दयालू श्री पति भवसागर तें छुडाई । मोसम दीन अनेक उधारे मेरो भारत ताई । श्याम की० ॥ ८ ॥ अधम उधारण दीन जानि के नौका पार लगाई । पूर्ण भरोसो मोहि श्याम को आस पूरिहै सांई । श्याम की० ॥ ९ ॥ करुणा पारावार न जाई नाम लेत अघ कोटि नसाई । अति पापिहु जो शरणैं आई ताहिहु ले अपनाई श्याम की सूरत० ॥ १० ॥ २६ ॥

॥ पहाड़ी खमाच ॥

जगनाथ विना सुख को लेवै मन वांछित दानहु को देवै । यह संसार अपार वारनिधि या में नाव न कोइ खेवै । जगनाथ० ॥१॥ यामें बहते नर कों सहारा नाविन अन्य न कोइ देवै । जगनाथ ॥२॥ अति समर्थ करुणानिधि श्रीपति वहही पार लँघा देवै । जगनाथ० ॥ ३ ॥ अशरण शरण यही जगदीशा या को न जानें कोई भेवै । जगनाथ ॥ ४ ॥ जो जन या को शरणों लेवै ताहि हि आवें लिया देवै । जगनाथ० ॥ ५ ॥ अधम उधारण दीन दयालू या कोंहि जग में सब से वै ॥ जगनाथ ॥ ६ ॥ जग जनि पालन नाशन कर्त्ता यहि निज जन हित नित देवै । जगनाथ० ॥ ७ ॥ या को प्रेमी नेमी जो जन मन वांछित फल पा लेवै । जगनाथ० ॥८॥ यहि जगदीश्वर हो अनुकूल तो सब सम्पत बकसा देवै ॥ जगनाथ० ॥ निज कर मेरी सुनि बिनती यहि मोकों अपना लेवै । जगनाथ ॥ १० ॥ कृपा निधान कृपा करि मेरोहु जनि मृति दुःख नसा देवै ॥ जगनाथ ॥ ११ ॥ ऐसे प्रभु कों

भजैन जो नर लख चोरासी शिर लेवै । जग नाथ० ॥ १२ ॥ २७ ॥

❀ खास खमाच्च राग ❀

ब्रज के बिहारीजीसूँ मेरी बीनती यह तो चरननमें मेरी भक्ती रह। जग माया को जाल अग्नि सम यह मोकों प्रभु अब नांही दह । ब्रज के बिहारी जी सों० । १ । यातें जलतें जनम बीत गये कइयक मेरे दुख यह दुःसह ॥ ब्रज के० ॥ २ ॥ अब तो विनती सुनि के दयालू फन्द छुडा-वो दासन हित चह । ब्रज के० ॥ ३ ॥ में तुव चरनन को हूं दासा आसा पूरो विजय यही कह । ब्रज के० ॥ ४ ॥ शरणागत रक्षक तुम स्वामी विहरत प्यारी श्री राधासह । ब्रज के० ॥ ५ ॥ पतित पावनी तोर चरन रज तामें लोटूँ शरण तोर गह। ब्रजके० ॥ ६ ॥ कई पतितन तारे तुमनें प्रभु शरणागत तिन संख्या को कह । ब्रजके ॥ ७ ॥ अब मेरि बारी दीनदयालू प्रण त पाल तोरिमोपै निगा रह । ब्रजके० ॥ ८ ॥

॥ गारो ॥

ब्रजराज कुंवर को शरण गह्यो मेरो कर्म दोष सब दूर भयो। ब्रजराज कुंवर को शरण गह्यो । शरणागत रक्षक दीन धणी यदुवंश मणी जग जाग रह्यो । ब्रजराज कुँवर को ॥ १ ॥ में हूं अनाथ नाथ ब्रजनायक अब मोहि जम को भय न रह्यो । ब्रजराज ॥ २ ॥ अधम उधारण दृढ व्रत जाको यहि लखि मैनें शरण गह्यो । ब्रजराज० ॥ ३ ॥ मेहुं पतित पतित पावन श्री जगदीश्वर मेरो हाथ गह्यो । ब्रजराज० ॥ ४ ॥ अति समरथ राधापति प्यारो मेरेभव दुख जान रह्यो । ब्रज० ॥ ५ ॥ अन्तरजामी अति सरनामी शरणागत दुख जार रह्यो । ब्रजराज० ॥ ६ ॥ निज आश्रित आ दीन जानि के अघ अरु दोष न नाश रह्यो । ब्रजराज० ॥ ७ ॥ नाम लेत अघ कोटि नसावत यह निज विरद निभाय रह्यो । ब्रजराज० ॥ ८ ॥ जाके स्मरण मात्र हे उन को जन्मरु मरण विलाय रह्यो । ब्रजराज० ॥ ० ॥ जाने निज शरणागत पालन हेतुहि जग में जनम लह्यो । ब्रजराज० ॥ १० ॥ विजय जासु चरनन को दासा निज उद्धारहि चाहि रह्यो । ब्रजराज० ॥ ११ ॥

॥ यह छोटी बहर की लावणी ॥

प्रीति जब हरि पद में लागै मुक्ति सुख मिलै भाग्य जागै। राधा पति पदरति किये सफल मनुज तन होय। दुःख कटै भव भय हटै हरि प्रसन्नहू होय जोय मन हरि में अनुरागै। प्रीति जब० ॥ १ ॥ श्री गोविन्द कृपालु अति भक्त वछल श्रीमान। निज भक्तों की सुध लहैं यह निश्चय मन जान मान यों लागै हरि सागै। प्रीति जब० ॥ २ ॥ भव व्याधी के हटन को यह ही सुगम उपाय। यज्ञादिक अति कठिन जग यातें यहि मन लाय लाय मन तो सुख हो आगै। प्रीति जब० ॥ ३ ॥ विजै कहै हरि प्रेमही सुलभ मुक्ति को द्वार। यातें सब तजि हरि भजै तजै जगत को कार सार यहि यातें दूख भागै। प्रीति जब० ॥ ४ ॥ ३० ॥

॥ गारो ॥



जगनाथ हमारि सुनों विनती हम दोउ कर जोरि करैं प्रणती। जगनाथ हमारि ॥ तुम हो प्रभु दीन दयाल धणी। हम पै इहिं काल विपत्ति घणी। इहिं कारण हे यदुवंश मणी किरहै तुम सें हमनें विनती। जगनाथ० ॥ १ ॥ भव रोग सतावत है हम को अब लाज अहै हमरी तुम कों शरणागत होय पड़े चरणों विनि वारिये नाथ यहै कुगती। जगनाथ ॥ २ ॥ शरणागत दुःख तुम्हें हरणों हमनें तो लियो तुमरो शरणों। अति योग्य धणी तुमहीं हमरे समरत्थ हरो हमरी विगती जगनाथ० ॥ ३ ॥ करुणानिधि श्रीयुत आप अती हम नाथ अनाथ करैं विनती शरणागत रक्षण को तुमरो दृढ नेमहरो हमरी विपती ॥ जगनाथ ॥ ४ ॥ नहिं और तुम्हार समान कोई जिहिं पास हि जाय पुकारँ रोई। विजयेन्दु कहै तुमही करिहो जगदीश हमारि अबै सुगती। जगनाथ हमारि सुनों विनती हमँ, ॥ ५ ॥ ३१ ॥

॥ यह नाथ कैसे गजको इस का० ॥

॥ हुमरी ॥

श्याम तुम गोपियन के मन भाये तिनके चित्त चुराये श्याम तुम ० ॥ जमुना तीर विहार करत तुम तिनके संग लुभाये । तुमरी सूरत अति सुन्दर प्रभु कोटि काम छवि छाये । श्याम तुम० ॥ १ ॥ राधा प्यारी कों सँग लेकर अद्भुत लीला बढाये । जग जीवन मन मोहन तुमरे सन्त जतन गुण गाये । श्याम तुम० ॥ २ ॥ सत चित आनद रूपतैं तुमको वेदन नें हू गाये । चौदह लोकन के तुम स्वामी तुम सबके मन भाये श्याम० तुम० ॥ ३ ॥ रास विलास कियो गोपिन सँग देवहु देखि लुभाये । दै दै गोपी मण्डल के बिच इक इक तुम बिलसाये , श्याम तुम ॥ ४ ॥ तिनके करमें करधरि मोहन नाचत रंग रचाये, आनद घन मन मोहन प्यारे तुमसे तुमहि सुहाये, श्याम तुम० ॥ ५ । शेष महेश सुरेशादिक हूँ तुवगुण पारन पाये, तुमरी महिमा कौन कह सकै ब्रह्मादिक हू थकाये, श्याम तुम० ॥ ६ ॥ जगमें सार एक तुम स्वामी और असार लखाये,लीला अपरंपार आपकी सबमें आप समाये, श्याम तुम० ॥ ७ ॥ जे शरणागत तुमरे मोहन उनमें तन मन लाये, दुख लेतेहो तुम खुद उनकी भक्त वछल कहलाये, श्याम तुम० ॥ ८ ॥ विजै कहै मैं हू शरणागत मेरे तुमही सहाये, भवसागर से पार निकारो सरि है मोहि अपनाये, श्याम तुम० ॥ ९ ॥ ३२ ॥

❀ काफी ❀

श्याम सुन्दर रंग भीना मेटो भव व्याधी प्रवीना, जन्म मरण चक्कर अतिदुःसहाग्रातें में अति छीना कभी नीच काभे उच्चयोनि में वहुतें दुख नहि लीना प्रभु मैं हू अति दीना, श्याम सुन्दर० ॥ १ ॥ मानुष जन्म पाय हू कबिभी कछु सुकरत नहिं कीना । काम क्रोध मद लोभादिक

में रहा सदा लवलीना प्रभू में हुँ अति ही मलीना । श्याम सुन्दर० ॥ २ ॥ अब तुव चरना आय पऱ्यो हूँ अहूँ तुम्हार अधीना । शरण आयो मोहि अपना लीजे में हूँ अति दुखपीना । और गुण ज्ञान विहीना । श्याम सुँदर । ३ । जग झंझट से जलद हटाओ दर्शन दो रँगभीना । दर्शन आस मुझे अति भारी ताबिन में नहिं जीना । बिजै तुम हो चित चीन्हा । श्याम सुँन्दर ४ । ३३ ।

॥ काफी ॥

मै तो शरणों लियो प्रभु तेरो और नाहिं रक्षक मेरो मै तो शरणों । × । जो तुम हो सो तुमही स्वामी और न सबल घनेरो । तुम जैसो कोउ दृष्टि न पर तो कीन्हों बहुत ढुढेरो प्रभू बिन किहिं को हूँ चेरो मै तो । १ । जग जनि पालन नाशन कर्त्ता यातें तुम जग भर्त्ता । अति समरथ सर्वज्ञ हरी तुम मेरो दुःख निवेरो और नहिं रक्षक मेरो । मैतो । २ । दीनबन्धु अरु अन्तर जामी अतिही हो,सरनामी, शरणागत की बिनती चित दो जानि मृति दुखबहुतेरो । और नहिं रक्षक मेरो । मैतो । ३ । शरणागत पालन निज जसकों जरा निगादे हेरो । में शरणागत दीन दुखी हूँ भव चक्कर तैं उबेरो कहा अब इत उत हेरो । मैतो । ४ । करुणा करि मेरि और निहारो । मेटो जनि मृति फेरो । बिजै पतित पावन श्री पति तुम मैं चरन न को चेरो मुझे या विपतिन घेरयो मैतो । ५ । ३४ । मन वांछित फल पावो श्याम मैं प्रीति लगावो । + । कहां से आये कहाँ जावो गे किसनें तुम्हैं उपजाये । मन भाये करते हो कारज निज हित चित नाहिं लाये । वृथा क्यों । आयू गमावो मनवां । १ । जमते हू तुम नाहीं डरते कुकरम करि न लजाते जन्म मरण दुख जगमें जो भारी ताहि भुगत दुख पावो वृथा क्यों समय बितावो । मन । । २ । संसारी सुख सदान रहता या में क्यों ललचावो मरना तो अपना चितल्यावो ईशाहिं सदा मनावो सदा ताके हि गुण गावो । मन । । ३ । यह

संसार असार न या की माया में लिपटावो। बीती ताहि विसारो अब तो निज पर लोक बनावो। कार यह सुभग लखावो। मनवां छित फल पावो श्याम में प्रीति लगावो। ४। शरणागत हो जगदीश्वर के ताहिं हिं खूब रिझावो अति समरथ है प्रभु जगदीश्वर ताको ध्यान लगावो ताहि में मनकों रमावो। मन। ५। शरणागत रक्षक जगदीश्वर ताहि हि स्वामि बनावो। जन्म मरण की व्याधी छुड़ावो नर तन को फल पावो पशूज्यों क्यों दुख छावो। मन। ६। विजे कहै त्यागो जग मर्या सुकरत रत हो जावो। सार असार विचारो मन में भवव्याधी विनसावो ईशध्या मन हरसावो। मन०। ७। ३५।

॥ काफी ॥

श्याम सुन्दर अलबेला सुनों जी मेरो हेला, श्याम सुन्दर अलबेला + भव सागर में पड्यो बहत हों रक्षक हीन अकेला। तुमहीं मात पिता अरु बन्धू मैं तुव पुत्र रु चेला करो रक्षा इहिं वेला। श्याम सुन्दर० ॥ १ ॥ मात पिता निज पुत्र कि रक्षा करैं करैं न झमेला। यातें सुध लेवो हे श्रीपति दुख में कर्म न पेला यातें तुम कों दिय हेला। श्याम० ॥ २ ॥ तुम समरथ अरु परम कृपालू तुम में मन मैनें ठेला। शरणागत हो चरन पड्यो हूँ अब ना विलँबाकि वेला और कोउ मुक्ति न देला। श्याम० ॥ ३ ॥ और कोउ मेरो रक्षक नाहीं रक्षक तुमहिं अकेला। विजय विनय करता है स्वामी मुक्ति देन तुक खेला। छुडाओ जग को मेला। श्याम सुन्दर अलबेला सुनों जी मेरो हेला। श्याम० ॥ ४ ॥ औगुन मेरे मत नें देखो में पातकि अन मेला। अधम उधारण निज व्रत स्वामी यातें दिय मैनें हेला करो मोहि निजमें मेला। श्याम० ॥ ५ ॥ ३६ ॥

॥ धोवनिया लुटगई रे इस चाल पर ॥

॥ खमावज को खैरवो ॥

एजि ब्रज राज प्रभू हमें दरशन दो लगी लालसा दरशन की

व्रज राज प्रभू हमँ दरशन दो ॥ + ॥ श्याम सुन्दर हम तुव दरशन बिन तरसत हैं दिन रैन। तडफत हैं ज्यों मछली जल बिन कछु नाहिं है हमँ चैन नैन छइ झड़ि जल बरसन की। दरशन दो व्रज राज लालसा लगि हमँ दरशन की ॥ १ ॥ सुनिये श्रीपति अरज हमारी प्यारे सब गुन ऐन। राधा युत क्रीडत व्रज कुँजन भक्तन के सुख दैन भैन ज्यों शोभा तुव तनकी। दरशन दो० ॥ २ ॥ दरशन बिन बेरे भय हम अति चित थिर रहता है न। चैन बोलते अट पट सुधहू रहती तन मन की न आस पूरो हमरे मन की। दरशनदो। ३। बिजै आस तुम निज भक्तन की सकल करत श्रीमान। यातें तुव चरनन हम नमते करते तुव गुन गाँन बान जब आशा पूरन की। दरशन दो व्रजराज लालसा लगि तुव दरशन की ॥ ४ ॥

॥ खमावज को रेखरवो ॥

श्री राधा गोविन्द ध्यावोरे विषयन चित न फंसावोरे नर राधा। गोविन्द ध्यावोरे। विषयन मैं जे फंसे जीव हैं सुनिये तिनका हाल। जन्म किया निज निष्फल उन नैं व्यर्थ गमाया काल बाल बनि हित न नसावो रे राधा गोविन्द ध्यावोरे नर ॥ १ ॥ रस बस हो मछली नें खोयो जल मैं अपनो प्राण। चूनाकि गोली खा कांटे मैं फंसि प्रत्यक्ष प्रमाण। जाणयों मन विषयन तैं हटावोरे। राधागोविन्द ध्यावोरे। २ रूप अनूप देखकर मोहा पतँग दीप ढिग आय। जलकर भस्म भया क्षण मांही ताविधि तन विनसाय हाय यों मत दुख पावोरे। राधा गोविन्द० ॥ ३ ॥ शब्द अधीन होय बन मृगहू फांसा व्याध के फांस खोया निज जीवन तहँ फसि के ताविधि फंसो न फांस। आस तजि आनद पावोरे। राधा गोविन्द० ॥ ४ ॥ गन्ध अन्ध हो भोंरे नैहू कमल बसेरा कन्हि। सांझ भयें पङ्कज मुदते ही फंसि तहं प्राण न दीन्ह चीन्ह यों मन न रमावोरे। राधा गोविन्द ॥ ५ ॥ स्पर्श फंसा हाथी हू वन में हथिनी में मन देय। गिरा गढ़े में बन्धन पाया पर वश आपद

सेय हेय में मन न जमावोरे। राधा गोविंद० ॥ ६ ॥ धर्म ध्यान के हित जित ने में शरीर रक्षा होय। उतना विषय काम में लेवो सेवो अधिक न जोय जोय यह नहिं ललचावोरे। राधा० ॥ ७ ॥ अति लालच विषयन में त्यागो हरिगुण गावोरे । ईश्वर सेवन हित तन रक्षा करि आसक्ति हटाय लाय चित ईश मनावोरे। राधा० ॥ ८ ॥ विजय करै यह तुम कों शिक्षा सुन चित लावोरे। करो याहि विध नित्य कृत्य तुम मन हरसावोरे। राधा० ॥ ९ ॥

॥ सिन्ध भैरवी ॥

श्री जगदीश को नाहीं ध्याया व्यर्थहि जनम गमाया रे। श्री जगदीश को० । लख चोरासी
भुगतत भुगतत दुर्लभ नर तन पायारे। या में रहा मनुज तू गाफिल अपना काम नसायारे। श्री जगदीशकों । १ । धन दारा अरु पुत्र गृहादिक इन के सुख ललचायारे। यहां का विषय सौरव्य अरु सम्पत सब अनित्य बतलायारे । श्री जगदीश । २ । भगवद्भजन स्मरण अरु ध्यानहि जग में सार बतायारे। सच्चे मन से ईश्वर ध्याया जिननें तन सफलायारे। श्री जगदीश । ३ । जनि मृति दुख मेटत है वोही सच्चे मन से ध्यायारे। निज पदपंकज में निवसाता वोही खूब रिझायारे। श्री गजदीश । ४ । जो जग आया सो बिन सा या माया ने लिपटायारे यह संसार समुद्र अपाराया में गोता खायारे । श्री जगदीश । ५ । यातें हो छुटकारा तब ही जब हो प्रभु की दायारे । या तें ईश्वर भजनहि सुग में मोक्ष मार्ग बतलायारे । श्री जग० । ६ । तन मन धन अरु आत्म समर्पण कर ज्यो दास कहायारे । दासन का यह करतब प्यारे । या विध तो हिस मझायारे श्रीजगदीश० । ७ । विजय ईश थिर मन सें ध्यायें अवश्य करि है दायारे यातें निशि दिन चित्त लगाकर करहु ध्यान यदुरायारे । श्री जगदीश कों । ३८ । ८ ।

प्रभाती भिझोटी

शरण आयो तोरि श्याम कीजिये सहाई काम क्रोध आदिकनै लियो है दवाई । ÷ । ममता मोहमाया जाल काल ज्यों लखाई । इन के जाल माहिं फँस्यो छुटने नाहिं पाई । शरण, आयो० । १ । अगाध औ अपार संसार पारावार यहै या में जन्ममरण भँवर चक्र दुःख दाई । शरण० । २ । बहते बहते यामें स्वामि कल न कभी पाई । बीते हैं युगान युग कोटिन समुदाई । श० ३ । थाहन कुछमिलत कहीं यातैं घबराई । तूँवा नाव झाझ आदि कोई ना रहाई । शरण आयो० ४ । राग द्वेष आदि विविध मगर भयदाई । खेवट हू कोइ नाहिं यामैं दरसाई । शरण० । ५ । केवल तोर चरण शरण सेतु मन भाई । तोर नाम कीर्तन अरुस्मरण नावपाई । शरण । ६ । खेवट प्रभु आप कृपा सिन्धु यदुराई । सुधेलेवो दीन बन्धु शरणागत सहाई । शरण । ७ । आप बिना बेड़ा पार कोई ना लगाई । यातैं विजय आप के हि चरनन मैं आई । शरण० । ८ । दोऊ-कर जोड़ विनय करत दुःख छाई । सुनियनाथ सुनियनाथ विनय जादु-राई । शरण० । ९ । शरणागत पालन तोर प्रबल नियम सांई । काढ़ो भवनिधि तें मोहिं दीनजन लखाँई । शरण० । ३९ । १० ।

॥ माढ ॥

विनय सुनोजी प्रभूश्याम सुखरास । हे किरपाकरो जिमोपै मै हूँ तुवदास । हे विनय सुनोजी प्रभूश्याम सुखरास । + जग जीवन मन मोहन प्यारे आनद घन स्वप्रकाश विनय ॥ १ ॥ सगुण निगुण द्वै रूप तिहारे सब जग तोर निवास । विनय० ॥ २ ॥ यद्यपि निर्गुण आप प्रभू जी सगुण भक्त हित खास । विनय० ॥ ३ ॥ सब जग उपजायो प्रभु तुम नें ब्रह्मादिक तुव दास । विनय० ॥ ४ ॥ गंगा तुव पद उपजी प्रभुजी तोतें रवि विधु भास । विनय० ॥ ५ ॥ अग्नी जलत वायू हू बहत है तोरेहि आश्रय खास । विनय० ॥ ६ । पृथ्वी नभ जल

आदिक तुमतें उपजत अरु लहँ नाश। विनय० ॥ ७ ॥ योगी अरु मुनि श्रुति शास्त्रादिक तुव गुण करत प्रकाश। विनय० ॥ ८ ॥ तुव लीला अरु महिमा अनहद वर्णन हो नहिं जास। विनय० ॥ ९ ॥ शेष शारदा ब्रह्मा आदिक थकिगे करत प्रकाश। विनय० ॥ १० ॥ भव वारिध तें मोहि निकासो धो मोहि तुव पद वास। विनय० ॥११ विजय तोर चरनन को चेरो याकी पूरो आस। विनय० ॥ १२ ॥

॥ ठडोल सारँग ॥

हाँरे व्रजबाला के नँदलाला के दरशन में दरशन में मन ललचावत है दरशन में। राधा प्यारी श्री गिरिधारी खेलत मन हरसावत है। दरशन में० ॥ १ ॥ मोर मुकट मकराकृति कुण्डल वंशी अधर सुहावत है। दरशन में० ॥ २ ॥ चन्द सो वदन मैन मद मर्दनलोचन अति छवि छावत है। दरशन में ॥ ३ ॥ गोल कपोल सुभग अति सोहत मन्दस्मित मन भावत है। दरशन में० ॥ ४ ॥ ललित त्रिभंग सुरूप विराजत राधा युत सरसावत है। दरशन में० ॥ ५ ॥ आनन्द कंदन श्री यदुनन्दन जग वन्दन मन भावत है। दरशन में ॥ ६ ॥ श्री वृषभानु कुमारी प्यारी भक्तन मोद बढावत है। दरशन में० ॥७॥ जगदीश्वर श्री कृष्ण मुरारी जनिमृति दुःख नसावत है। दरशन०। कृपा सिन्धु यदुनन्दन प्यारे सुख सम्पत सरसावत है। दरशन में॥ ८ ॥ विजयेन्दू चरनन को चेरो दरशन आस मनावत है। दरशन में। ॥ ९ ॥ भक्त हितैषी श्री नदनन्दन भक्तेच्छा सफलावत है। दरशन में ॥ ४१ ॥

॥ देश सोरठ ॥

लोगो श्याम सुँदर को ध्याकर मूकी पाय ल्योरे। ताके सद्गुण निशि दिन गाकर ताहि रिझाय ल्योरे ॥ लोगो० ॥ सच्चे मन से ताकों ध्यावो ताके चरणां चित्त रमावो अपनो जनम सफल कर जावो जग दुख हाथ ल्योरे॥ लोगो० ॥ १ ॥ जग में हरि नाम हि है सार याको

स्मरण करो इकसार श्रीहरि करुणा के आगार इनकों ध्याय ल्योरे । लोगो श्याम० ॥ २ ॥ यह ही भव सागर की नाव यातें सहज हि होय बचाव यातें सहज न और उपाव हरिगुण गाय ल्योरे ॥ लोगो श्याम० ॥ ३ ॥ जग में जनम मरण को दुःख यातें बचनों नर कृत मुक्ख क्षणिक हैं सकल जगत के मुक्ख दुःखन साथ ल्योरे । लोगो श्याम० ॥ ४ ॥ ये हैं दीन उधारण श्री पति देते निज भक्त नकों सद्गति इन तें और न कोई सत्पति इन्हैं रिझाय ल्योरे लोगो श्याम० ॥ ५ ॥ जो ही हरि कों जग में ध्यावै सो ही मायातैं बच जावै नर भव सफल करै सुख पावै दुःख नसाय ल्योरे । लोगो श्याम० ॥ ६ ॥ विजै करै यह शिक्षा यह हैं उत्तम तुम कों दिक्षा धारो चित में मेरी शिक्षा इहिं चित्त चाय ल्योरे १ लोगो श्याम० ॥ ७ ॥ ४२

काफी

श्री रघुनाथ कृपा लो खोलो भव बन्धनतालो श्री रघुनाथ कृपालो ।ऽ। कृपा दृष्टि कूँची कर लेके माया आड निकालो काम क्रोध आदिक की उलझन जकड़ी जिहिं सुरझाल्यो महूँ प्रभु तुमरो बालो । श्री रघुनाथ ॥ १ ॥ मेरे चित्त भवन में जो जो पातक कपट रसालो । आशा तृष्णा आदिक को है ताहि आप निकालो । मेरो इनतें भयटालो । श्री रघुनाथ० ॥ २ ॥ निज शत्रू रावण को भ्राता अधम दैत्य कुल वारो । शरणागत जो भयो हो विभीषण ताकों हु तुमने पाल्यो मोहि हूँ त्योंहि अपना ल्यो । श्री रघुनाथ० ॥ ३ ॥ मैं शरणागत भयों हुँ तिहारे शरणागत कों पालो । शरणागत पालक तुम स्वामी यह निज विरद सम्हालो प्रभू निज व्रत पर चालो । श्री रघुनाथ० ॥ ४ ॥ अधम उधारण तुम हो स्वामी मैं हूँ अधम भु आलो । विजै करै बिन ती चित दीज्ये मेरी राम दयालो । दीन गुनि दास बनालो । श्री रघुनाथ० ॥ ५ ॥ ४२ ॥

॥ गारो झिझोटी ॥

ब्रजबारे हमारे पालक हो तुम दुःखि जनन दुख टारक हो । ब्रज बारे हमारे पालक हो ।❀। प्यारे प्यारे तुम्हारे शरणैं आये जग जाये मरे फिर जग आये तुम ही भव बन्ध निवारकहो । ब्रजबारे० ॥१॥ सारे सारे रे तुमनें भक्तों के काज प्यारे तुम को हि है अब हमारि लाज रक्षा करिये दुखित दुख टालक हो ब्रजबारे० ॥ २ ॥ तारे तेरे हैं तुमनें भक्त अनेक तुम अवम उधारण व्रत धर एक प्यारे तुम निज दृढव्रत धारक हो । ब्रजबारे० ॥ ३ ॥ हारे हारे सकल युव कर्त्तारे बल बारे जो कं सादिक सारे प्यारे तुम हि अपार बल धारक हो । ब्रजबारे० ॥ ४ ॥ प्यारे शरणागत पालक तुम नेक दृढ अति ही टलै तुमरी नहि टेक तुम ही जगके उत्पादक हो । ब्रजबारे ॥ ५ ॥ आरे आरे हमारे मन अन्दर में बस प्यारे सदा या मन्दर में अघ हारक दुःख निवारक हो ब्रजबारे ॥ ६ ॥ मारे मारे महारिपु भक्त के सारे सारे मनोरथ सन्तन के सुर शत्रुन के तुम घातक हो ॥ ब्रज० ॥ ७ ॥ धारे धारे विविध अवतारे रे जग जाहिर तो गुण सारे रे विजयेन्दु जन्म मृति टारक हो । ब्रजबारे० ॥ ८ ॥ ४३ ॥

पीले रे प्याला हो जा मतवाला प्याला प्रेमहरी रसकारे

इस चाल पर

॥ जँगला ॥

श्री नदनन्दन के गुण गाकर आवा गमन छुडा तन कारे ।श्री नदनन्दन, के, । ❀ । जो जगकों उपजावत नाशत काम करै जो हीं पालनकारे । ताके नाम निरन्तर लेकर लाभलहै किन नर तन कारे । श्री नदनन्द के ॥ १ ॥ सहज मनोहर मूरति श्रीपति भक्त बन हु राधा युत कारे जाको ध्यान धरत शिव शारद नारद पूजित पद युग कारे । श्री नदन न के ॥ २ ॥ जग पालक यशु मति को बालक घालक दुष्टरु दैत्यन

कारे । जाकी माया वशजग चलता हैलेन ता बिन इक तिन कारे । श्री नदनन्द के। ३ । जाकी माया के फन्दे में फँसता है मन जग जन कारे। जब वो कृपा करै माया का फन्द कटै तब निज जन कारे । श्री नदन-न्दन के । ४ । करुणा निधि शरणागत पालक मुक्ति विधायक भक्तन कारे । कलि युग्मे हरि स्मरण रु कीर्त्तन मुख्य कर्म है जग जन कारे । श्री नदनन्दन के ॥ ५ ॥ पापि हुजे शरणागत होते गहते हाथ शीघ्र उन कारे । अधम उधारण खुद को व्रत यह ताहि निभावत बड मन कारे श्री नदनन्द के ॥ ६ ॥ भव व्याधी विजयेन्दुकि टारो यहै दास तुव दामन कारे । कृपा सिन्धु तुम अधम दीन में शरणागत तुव चरनन कारे श्री नदन्दन के ॥ ४४ ॥

॥ खमावज पहाडी ॥

श्री गोविन्द पदाम्बुज ध्यावो भवसागर तरि जनि सफलावो । श्रीगो० । × । आनद कन्द मुकुन्द मनावो जगमें मन बांछित फल पावो । सार यही है यह चित ल्यावो । जग माया तें मन विलगावो । श्री गोविन्द० ॥ १ ॥ जगमाया सुखदाया नाहीं यही समझ याकों छिटकावो । यह दुखदाया हित कर नाही यह गुनि या में मन न फँसावो । श्री गोवि-न्द० ॥ २ ॥ काम क्रोध मद लोभादिक ही माया है यातें हटजावो । धनदारासुत कुल परिवारा ममताहु माया इहिहू हटावो । श्री गोविन्द० ॥ ३ ॥ हरि के भजन तें मन शुधि पावो मन का पातक सकल नसावो । छल छन्दादिक दूर चलावो । माया ताजि आनन्द मनावो ।श्री गोविन्द ॥ ४ ॥ मन शुद्धी करि ज्ञान बढावो ज्ञान बढें निज रूप लखावो । निज के रूप लखें श्रीनाथा स्वयं प्रगट हो लखि सुख पावो । श्री गो० ॥ ५ ॥ जाके । निज पार्श्व दवनजावो । यह बेहद सुख काहे गमावो । श्री गोविन्द ॥ ६ ॥ विजै कहै यो करो सुजाना नित्य करो हरि के गुणगाना । हरि प्रसन्न करि मन हरसावो या विध नरभव सफल बनावो ॥ श्री गोविन्द० ॥ ७ ॥ ४५ ॥

॥ काफी ॥

श्याम सुँदर ब्रजवासी मेरी सुध ल्यो अविनासी श्याम सुँदर। १। पूर्ण ब्रह्म तुम अलख अनादी निर्गुण नित्य प्रकाशी। भक्तन मानस इष्ट पूर्ति हित सगुण भये सुख राशी। दुष्ट असुरन के विनाशी। श्याम सुँदर० ॥ १ ॥ शरणागत रक्षण को तुमरो है अति दृढ़ व्रत खासी, करि हो अवश्य प्रभू मेरि रक्षा दीनदयालि इलासि नाहिं मोहि कौन निभासी। श्याम सुँदर० ॥ २ ॥ शरणागत लोकन की तुमही काटत जमकी फांसी। जाका कार्य जगत यह सबही सो माया तुव दासी यातें प्रभु पिण्ड छुड़ासी। श्याम० ॥ ३ ॥ तुमने सूरज चन्द बनाये तारा आदि विकासी। भू जल नभ आदिक के करता हरता तुम अवभासि खास तुम घट घट वासी। श्याम०॥४॥ मैं शरणागत तुव चरनन को पूरो तुव विसवासी किरपा करि हो जब तुम मोपै तव जनि मृति दुख जासि करूं तुमरी हीवबासी। श्याम० ॥ ५ ॥ विजै कहै मैंने शरण तोर लिय तुम बिन कोइ न निभासी। तुमही मेरे रक्षक श्रीपति काटो जनि मृति फांसी नाहिं तो होगि तुव हांसी। श्याम० ॥ ६ ॥ ४४

॥ दुमाभ ॥

श्याम तुम भक्तन के रखवारे उन के सबही दुःख निवारे। श्याम० नाम तुम्हारे जग के मांही जितने मुख में उचारे। तिनके तुमने पाप सहज में कोटिन भस्म कियारे। श्याम० ॥ १ ॥ जैसे तूल राशि को अगनी कणिका देत जलारे। जैसे तोर नाम की महिमा कोटिन पाप दहारे। श्याम० ॥ २ । जाके स्मरण मात्र तें फन्दा जनि मृति का विनसारे। श्री जगनाथ अनाथ भक्त कों करते ते अपनारे श्याम० ॥ ३ ॥ विदुरादिक जे कइ शरणागत जिन तुव शरण लियारे वे कृत कृत्य होय जग मांही पुनि वैकुण्ठ गहारे। श्याम० ॥ ४ ॥ विजै कहै मैं हूं शरणागत दीन रु अति दुखियारे मेरी सुध ल्यो श्री जगनाथा शरणों तोर लिया रे। श्याम० ॥ ५ ॥ ४ ॥ श्याम तुम

भूले मोही । मैं तो रात दिना भजूं तोही श्याम० । ❀ । आप समान न समरथ जग में शरणों ल्यों जा कोही । आपहिं नाथ अनाथन के तो दयावान अति होही । श्याम० ॥ १ ॥ बड़ २ बलवान जगत में शरणों लें तेरोही । देव दनुज मुनि योगी आदिक भजते हैं तुमको ही श्याम० ॥ २ ॥ श्याम० ॥ २ ॥ कंस जरासंध आदिक जेते अति बलि थे तुव द्रोही । दुर्योधन आदिक अभिमानी तिन को नाश कर्यो ही । श्याम० ॥ ३ ॥ प्रह्लादादिक भक्त तुम्हारे जिन तुव शरण गह्यांही । तिनकी रक्षा के हित तुमने क्लेशहु अतिही सह्यो ही । श्याम तुम० ॥ ४ ॥ भक्त के हित दुखहू सहते धरते तनुहू कोही । जातें भक्तन को हो रक्षा यातें दयालु कहैं तोही । श्याम तुम० ॥ ५ ॥ मैं हूँ दीन तोर शरणागत बिजै कहत है बोही । जाकों कोई नहिं अपनायि ज्ञानि करैं सब जोही । श्याम० ॥ ६ ॥ ४८ ॥

॥ खमावज पहाड़ी ॥

गोविंद गोविंद रट मेरे मनवा सट श्री राधापति चरणां रे । गोविंद० २ ॥ ÷ ॥ जो तू चाहै भव निधि तरणां नित २ ताका कर स्मरणां रे । यहहि सार समझ भज हरि पद जो जग जन्म सफल करणां रे । गोविंद० २ ॥ १ ॥ यह संसार ओस का मोती यामें तू मत नैं फँसणा रे । विषयन सुख में मत ललचाणां लेले श्रीपति का शरणां रे । गोविंद० २ ॥ २ ॥ क्षणिक विषय सुख यह सच लखणां अचल सुख प्रद हरि शरणां रे । याही में मन निशि दिन धरणां जो भव सागर है तरआं रे । गोविंद० २ । यह भव सागर अति हि अगाधा यामें जनि मृति दुःसह बाधा । यह लखि जानें हरि आराधा सो तरणां हरि चित धरणां रे । गोविंद० २ ॥ ४ ॥ मनुज जन्म नहि मिलता पुरि पुनि । लख चोरासी में फिरणां रे । अवसर चूकें अति पछिताही । यातें सब तजि हरि भजणां रे । गोविंद०

॥ ५ ॥ हरि अनुकूल भयें तुव सब दुख सहज मिटेंगे यह लखणांरे। दरशन देकर निज चरनन में राखि हैं तोहि दया धरणांरे। गो० २ ॥ ६ ॥ विजै कहै शरणागत पालक श्री हरिनिज जन सुख करणांरे। यातें श्रीपति पद चित धरणां जो निज चाहै उद्धरणांरे। गो० २। ॥ ७ ॥४८॥

॥ खमावज पहाड़ी ॥

जोहि रामजि चरण चित लावैगा सोहि जमका भय नहिं पावैगा जो निशि दिन ताकों ध्यावैगा सोहि आवागमन छुड़ावैगा। जोहि० लख चोरासी भुगतत नांतो दुःख सदा अति पावैगा। परम कृपालू श्री रघुराई ध्यायें दुःख नसावैगा। जोहि रामजि० ॥ १ ॥ शरणागत प्रतिपालक स्वामी सोही जनम निभावैगा। जाके सम जग कोऊ नांही वोही भय सें बचवैगा। जोहि रामजि० ॥ २ ॥ जब २ अधरम छावैगा दुष्टन कों मारि गिरावैगा। अवतार लेय निज भक्तन कों प्रभु अतिही सुख सरसावैगा। जोहि रामजि० ॥ ३ ॥ विजै कहै मेरिद्ध सुध लेगा जनम मरण विनसावैगा। ऐसा स्वामी दीन दयालू मोकूं राम निभावैगा। जोहि रामजि चरण चित लावैगा सोहि० ॥ ४ ॥ ४९ ॥

॥ कालेंगडो ॥

[मोहन रातडली कहां वसिया इस चाल पर]

प्यारे तो में मो मन फँसिया एजि जन, जीवन मोहन रसिया प्यारे तोमें मोमन फँसिया ॥ + ॥ तो विन मो मन यों तलफत है जैसे जल विन मछिया। प्यारे० ॥ १ ॥ दरशन द्यो मोहि जलदी आकर किण घर जाकर बसिया। प्यारे० ॥ २ ॥ भक्तन के जीवन धन प्यारे प्राणपती दिल घसिया। प्यारे० ॥ ३ ॥ तूहि जीवन धन प्राण तें प्यारा तो विन सब जग तुछिया। प्यारे० ॥ ४ ॥ तो दरशन विन

मेरो जिवड़ा घबरावत अति दुखिया । प्यारे० ॥ ५ ॥ तों बिन प्राण निकासिया एरे कहँ जाकर तू बसिया । प्यारे० ॥ ६ ॥ राग रंग अरु खाना पीना मेरा सब सुख नसिया । प्यारे० ॥ ७ ॥ खेल कूद अरु ताना गाना अब मैंने सब तजिया । प्यारे० ॥८॥ शरणागत रक्षण निज प्रण कों कैसे अबहि बिसरिया । प्यारे० ॥ ९ ॥ शरणागत हूं दीन दुखी में मो सुध ल्यो बलभइया । प्यारे० ॥ १० ॥ कैसे निरदय भइया एरे दे दरशन कर सुखिया ॥ ११ ॥ विजय दास कों अति दुखि गुनि के आय जिवाय जल दिया । प्यारे० ॥ १२ ॥ अधम उधारण तुम हो स्वामी विजय अधम जन मुखिया । प्यारे० ॥ १३ ॥ मोहि भूलें नहिं सरि है स्वामी मेरे तुमहि रखिया । प्यारे० ॥ १४ ॥

(खबर नहि है जग में पल की इस चाल पर)

॥ झिझोटी ॥

श्याम मोहि पालहु में तेरा । तोर बिन और न कोइ मेरा । जगत में मोहि कर्मन गेरा । मिटा देहु भव वारिध फेरा । काम क्रोध मद आदिक मोकों अति आके घेरा । निज स्वरूप का ज्ञान देय के मेटहु भ्रम मेरा । श्याम मोहि ॥ १ ॥ करुणासागर सुनहु बीनती में चरनन चेरा । में अधमन सिर मोर दीन अति पार लगा चेरा । श्याम० ॥ २ ॥ माया ममता के फन्दे में मैहूं उरझेरा । आप सदृश कोइ नाहिं दयानिधि जो कर सुर झेरा । श्याम० ॥ ३ ॥ अधम उधारण शरणागत का पालन व्रत तेरा । में पापी अति दीनहु मेरा करिये सुर झेरा ॥ श्याम मोहि० ॥ ४ ॥ विजय करै बिनती सुनिये प्रभु रक्षक तोहि हेरा । जोनहि सुनि हो तो कहँ जाऊं जगाहि कोई मेरा श्याम मोहि पालहु में तेरा । तोर बिन और न कोइ तेरा ॥ ५२ ॥

[शिव साम्ब बिना दुख कौन हरै ? इस चाल पर]

॥ गारो ॥

जगदीश कि पूर्ण कृपा जो भई तबही यह मानुष देह लई। जगदीश कि । भजन कियो नहिं कभि जगदीश को आयू सब योंही खोय दई। जगदीश कि० ॥ १ ॥ लड़कपनों हँस खेल गमायो युवतिन सँग युवा आयु गई। जगदी० । २ ॥ निस दिन भज हरि किरपा सागर शरणागत सुध लें सचई। जगदी० ॥ ३ ॥ जग झंझट सें चित्त हटाके नाम सुकीर्ति न कर नितई। जगदी० ॥ ४ ॥ किरपा करि तोकों अपना ही हरि अति कृतज्ञ सच है यहई। जगदी० ॥ ५ ॥ निज पद शरण राखि हैं तोकों भूल किये अति दुख लहई। जगदी० यातें चेत अचेतन मत धी नातर जनिमृति दुख लहई। जगदी० ॥७॥ सुगम मार्ग यह हरिगुण कीर्तन और उपाय कठिन बनई। जगदी० ॥ ८ ॥ बिजय करै यह शिक्षा प्यारे यामें भूल कियें नसई ॥ जगदी० ॥ ९ ॥ ५३

[करुणा निधान सुनिये इस चाल पर]

॥ सोरठ ॥

श्री मुकुन्द गोविंद माधो शरणागत के दुख बाधो प्रभु दया निधान सुनिये जन औगुन चितना धरिये। श्री मुकुन्द० ॥ तुम पतित उधारण स्वामी में पतितन में सरनामी। तुम अपनी ओर निहारो मोहि अपनों गुनि दुख टारो। श्री० मुकुन्द० ॥ १ ॥ मैं शरणागत हूँ तिहारो करि किरपा मोहि निहारो। मोहि भव बन्धन तें टारो। मेरे और को नाहीं सहारो। श्री मुकुन्द० ॥ २ ॥ तुम समरथ नन्द दुलारे कइ भक्तन के दुख टारे। इहिं हेत लेत अवतारे दिति जन्मन को संहारे। श्री० ॥ ३ ॥ तुम पतित उधारण प्यारे कइ पतितन को तुम तारे। तिन गिनत गिनत हम हारे गुण अगन्त को कह सारे

श्री० ॥ ४ ॥ मेरी जो बेर प्यारे। तुम कैसे हिम्मत हारे। वे निज गुण काहि बिसारे। जिनतें कइ पतित उबारे। श्री० ॥५॥ विजयेन्दु आपको चेरो अब याके दुःख निबेरो। भव व्याधिन तें सुरझेरो मेरो करिये में हूं तेरो। श्री० ॥ ६ ॥ तुम मेरे चित में डेरो करि मोहि सुखी कररि हेरो। मोहि है विश्वास घनेरो प्रभु नन्द दुलारे तेरो। श्री० ॥ ७ ॥ अब झट मेटो अन्धेरो करि किरपा रूप उजेरो। मोहि भव निधि में मत गेरो में शरणं लीन्हों तेरो। श्री मुकुन्द० ॥ ८। ५४

हुजाज

शरण आयो मोहि त्यारो हरी में शरण आयो मोहि त्यारो। + । काम क्रोध अरु लोभ मदादिक दैत्यन तें मोहि टारो। जन्म मरण दुःसह भव व्याधी फन्द तें मोहि निकारो। हरी में श० ॥ १ ॥ पतित उधारण बिरद आपको सो ताहि हि आप सम्हारो। कृपा करो। प्रभु शरणा गतपै मो बिनती चित धारो। हरी में श० ॥ २ ॥ विजै कहै में चरनन चेरो सेवै निगा पसारो। महापातकी हूँ में यद्यपि पर हुँ दास तिहारो। हरी में श० ॥ ३ ॥ ५५ ॥

॥ काफी ॥

मन मोहन मन मन्दिर में तब आनद छाई। मन मोहन मन माहि ।१। जाकी मूरति अति मन भावनि जब मन माहिं भमाई। सब सुख अरु अति आनद हुलसे जन्म सफल हो जाई दरस पा मोक्ष लहाई मन मोहन० ॥ १ ॥ यह संसार असार यहाँ इक केवल सार कनाई। जाविध सार दूध के मांई मक्खन त्यों यदुराई। भजो इहि चित्तलन गाई। मन मोहन० ॥ २ ॥ नाहि बसों योगिन के मन में बैकुण्ठ हुं ना रहाई। नारद प्रति कहँर हूँ में भाई जहां भक्त मम गाइ प्रेम तें मोहि रिझाई मन मोहन ॥ ३ ॥ भक्तों के आधीन प्रभू हैं श्याम सुँदर यदु राई। विजै कहै यातें चित्त देइके भजो ताहि सुख छाइ करै जो भक्त सहाई मन मोहन० ॥ ४ ॥ ५६ ॥

।। काफी ।।

श्याम सुँदर गुन गाय रे नर सुध तैरिलेही वह तेरे सन मुख आय रे नर १ । भक्त वछल आरत दुख हरता निज प्रेमहि अपनाय रे नर सुध १ ॥ सबी प्रीति प्रभू कों प्यारी करि सो मनहि लगायरे नर ॥ २ ॥ औगुन देखत ना निजजन को बेडा पार लगायरे नर । दीनदयाल कृतज्ञहरी अति भक्त जनन सुखदायरे ॥ ४ ॥ भक्ति किये हरिपद पंकजकी जन्म सफल हो जायरे नर० ॥ ५ ॥ पतित पावनी लीला जाकी ताहि गाय सुख पायरे नर ॥ ६ । विजै कहै यह सार जगत में दीन्हो तोहि दरसायरे नर ॥ ७ ॥ ५७ ॥

काफी

ओसर बीत्यो जात भजै किन हरिचरनन नर ओसर बीत्योजात । १ । मानुष तन यह दुर्लभ जगमें सहज न मिलता भ्रात । तापें भि पुनि उत्तम कुल में जन्मतो कठिन बतात । भजै किनलख चौरासी भुगतें पीछे मनुज जन्म जगपात । पूर्ण पूर्व सुकरत के बल तें यह तन मिलता तात । भजै किन ॥ २ ॥ अब जो सुकरत करि है प्यारे हरि पद भक्ति दृढ़ात । तो अवश्य भगवत के निकट हि रहि है दुख मिटजात ॥ भजै किन ॥ ३ ॥ यह बैकुंठ निसरणी रारे चूकै मत सुन बात । चूकें पुनि पछितै है । विजै कह अब चेन भट भ्रात भजै किन० ॥ ५ ॥ जग झंझट तजि हरि प्रेमी हो इहितें हरि अपनात । प्यारे यह ही सुगम मार्ग है हरि सें यहै मिलात भजै० ॥ ६ ॥

काफी

नाथ मोहि अबकी बेर उबारो मैं तो शरणागत हूँ तिहारो । नाथ

अशरण शरण दयालु आप प्रभु मोहि न दूजो सहारो। अधम उधारण आपको विर्द सो यह गुनि मोकूं त्यारो। नाथ मोहि ॥ १ ॥ सुकृत न बनें प्रभू मुझबें कछु में पापिन सरदारो। शरणागत हो चरन पर्यो हूँ आपहि को ले सहारो। नाथ मोहि० ॥ २ ॥ आप समान बली कोइ नांही दूजो यह चित धारो। ज्यो चित धरत आपके चरनन ताही जलद सम्हारो। नाथ मोहि० ॥ ३ ॥ येही समझ में आय पर्यो हूं शरणें मो दुख टारो। भव व्याधी अरु आधि न वेग्यो यह ही भार उतारो। नाथ मोहि० ॥ ४ ॥ निज चरनन में राखो मोही यह विनती उर धारो। विजै कहै मन मोहन प्यारे में हूं दास तिहारो। नाथ मोहि० ॥ ५ ॥ ६० ।

॥ भाव ॥

मै तो तेरे चरनारे दास जी प्रभु सुनु विनती मोरी मै तो तेरे चरनारो दास ।+। करि किरपा मोहि अपनों मानहु पूरहु मेरी आस जी प्रभु सुनु० ॥ १ ॥ तुम बिन औरन कों नहिं जानूं तुमरो हि रखुँ विसवास । जी प्रभु० ॥ २ ॥ शरणागत पालक तुम यातें लिय तुव चरन निवास । जी प्रभू० ॥ ३ ॥ दीन बन्धु करुणा के सिन्धू अधम उधारण खास । जी० ॥ ४ ॥ जन औगुन लखते नहि स्वामी करते ता दुख नाश । जी० ॥ ५ ॥ जो अनन्य हो भजता तुम कों तिहिं रखते निज पास । जी० ॥ ६ ॥ निज चरनन चित राखहु मेरो चित्त नहीं करि तहं बास । जी० ॥ ७ ॥ नाम तुम्हार मिटात यों पातक ज्यों तृण राशि हुताश । जी० ॥ ८ ॥ जग जीवन गुन खान मुरारी तुम सत चित सुखरास । जी० ॥ ९ ॥ विजै भनें श्रीपति सरवेशा काटो मम भव फांस । जी प्रभू० ॥ १० ॥ ६१

॥ सोरठा ॥

प्यारे नन्द किशोर मेरी ओरहु कछुक निहोर। प्यारे नन्द किशोर। +। एरे मक्खन चोर मटकन फोर प्यारे नन्द ॥ १ ॥ दूध धई के चोर तुव लगही मेरी दौर। प्यारे० ॥ २ ॥ विनती सुन यह मोर तुव चरनन आयो दौर। प्यारे० ॥ ३ ॥ शरणागत प्रति पालक तुम हो यातें करिये गौर। प्यारे० ॥ ४ ॥ दीनन दुख हर ता तुम स्वामी तुम विन और न ठौर। प्यारे० ॥ ५ ॥ भव व्याधी है अगाधी अतिही या को टारो जोर। प्यारे० ॥ ६ ॥ तुम सो समरथ ना लखि जग में लिय शरणों तुव दौर। प्यारे० ॥ ७ ॥ अधम उधारण दीनन पालन नियम यहै दृढ तोर। प्यारे० ॥ ८ ॥ चरन पर्‍यो विनवत हूँ तुमसों मेरो दुख यह घोर। प्यारे० ॥ ९ ॥ करुणा निधि प्रभु करुणा करिये मोहित चित धरि ठौर। प्यारे० ॥ १० ॥ विजय बीनती करता श्रीपति तुम सें दोउ कर जोर। प्यारे नन्द किशोर० ॥ ११ ॥ ६३

॥ सोरठ ॥

सुध लेओ नन्द दुलारे हम आये शरण तिहारे तुम करुणा सिन्धु अपारे वृषभानु सुता के प्यारे सुध लेओ। ÷। तुम गोवर्द्धन गिरि धारे। व्रजबासिन संकट टारे। कंसादिक दैत्यन मारे तुम सुरपति गर्व निवारे। सुध लेओ० ॥ १ ॥ तुम गजपति के रखवारे। ता रक्षा हित पग धारे। अरु ग्राह प्राण संहारे अरु दीनन के रखवारे। सुध ले० ॥ २ ॥ तुम शंखचूडकों मारे हो गोपिन के अति प्यारे अरु व्रजजन प्राण अधारे हिरणाकुश उदर विदारे। सुध ले० ॥ ३ ॥ प्रहलाद भक्त दुख टारे तुम द्रुपदसुता सुखसारे दुःशासन गर्व निवारे।

ता चीर बढ़ाकर प्यारे। सुध ले०। ॥ ४ ॥ तुम ध्रुव कों दर्श दियारे ता मन बांछित संचारे। यह विजयहु आशा धारै इहिं मेटो तुम दुख सारे। सुध ले० ॥ ५ ॥ घन श्याम पियारी राधे तैनें भक्तमनोरथ साधे एरि घनश्याम ।:। मेरि मेटहु भवकी बाधे यहजग में अतिहि असाधे। घनश्याम०॥ १ ॥ यह मिटै न रोग अगाधे बिनस्वामिनि तोहि अराधे। घनश्याम॥ २ ॥ तैंने शरणागत दुखबाधे तिन केरि मनोरथ साधे घनश्याम ॥ ३ ॥ मेरोभार तोर है कांधे मेरेमाफ़करहु अपराधे। घनश्याम०॥ ४ ॥ जगजननि अतुलबलराधे मेरिकोंनमेटि है व्याधे।घन०॥५॥ जे तो बिन कृष्ण अराधे वे भक्तजगत में आधे। घनश्याम०॥६॥ जे निज हित सम झत राधे वो लोग जगत में आँधे। घन०॥७॥ हेकरुणा सिन्धुअगाधे तोरे चरन पर्‍यो में राधे। घन०॥८॥ मेरि दया लेहु अब राधे तैने कइ भक्तन हितसाधे। घन०॥ ९ ॥ विजयेन्दु मात श्रीराधे तोहि सरिहै मेटें व्याधे। घन०॥ १०॥ मोहि आसा तोरि अगाधे इहिं पूर्ण करहु अबराधे घन०॥ ११ ॥

॥ रागिणी सोरठ देश ॥

साँवरा सलोना श्याम मेरा रखवारा है। मैंने वापै तन मन धन मेरा वारा है। साँवरा।- मेरे तो केवल एक ताका सहारा है। साँवरा।१ वोहि मेरि आँखों का अति प्यारा तारा है। साँवरा। २। ताबिन मेरा नहिं होत गुजारा है। साँवरा।३। वाहितें या जग माहिं उजारा है। साँवरा। ४। जाकि माहिंमा को नहिं वार रु पारा है। साँवरा।५। जग को रखैया जोहि नन्द को दुलारा है। साँवरा। ३। दैत्यन मारा अरु कंस पछारा है। साँवरा। ७। गरुड़ त्यागि जानें गज कों उबारा है। साँ। ८। भक्तों के पालन को लीन्हें अवतारा है। साँवरा। ८। दुष्टन मार भू भार उतारा है।साँवरा।११। विजै कहै मेरा करि है उद्धारा है। साँवरा०॥ १२ ॥

हुमाऊ

रामकृष्ण गुण गाइ करहु नर मनुज जन्म सफलाई। दुर्लभ नर तन भाइ लहहु किन लाभ यहँ जग आई रामकृष्ण ॥+॥यह अवसर पुनि नाहिं मिलेगा चूकें दुःख लहाई। नाना योनियँ लहत लहत यह अवसर देहि गमाई। करहु नर मनुज जन्म सफलाई। रामकृष्ण ॥ १ ॥ यहही सार अहै जगमाही समझ लेहु मन मांई। सावधान हो भजन करहु अबतो जग माया नसाइ करहु नर मनुज० ॥ २ ॥ हरि विमुखन की दुर्गति होती नरक भोगते जाई। कामरु क्रोधादिक में फँस कर भोगत दुःख सदाई। करहु नर मनुज ।३। मात पिता दारा सुत बन्धु को इन करिह सहाई। शुभ अरु अशुभ कर्म फल लहते कबहु न मुक्ति लहाई। करहु। परम दयाल राम अरु कृष्ण हैं चरन गहहु नर तू इनकाई। पार लगाइहैं येहि तेरि नैया भवसागर तें तराइ। करहु नर मनुज ।५। विजय कहै अनुकूल भयें हरि मनसा पूरिहैं भाई। पूर्वजन्मकृत पाप नसाई शुद्ध होइ गति पाइ करहु नर मनुज जन्म ।६। भजन किये कर्मन की फांसी सहजहि में कटि जाई। हरि प्रसन्न हो लेंगे ताकों जलदि हि खुद अपनाई। करहु नर मनुज । ७ ।६६।

छोटी बहर की लावणी

नाथ हम शरणागत तेरी इस चाल पर

मेरा तो रक्षक गिरि धारी भक्त हित जाने तन धारी। हरी जो समरथ अति भारी जाहिनें जगत किया जारी। मेरा तो ॥+॥ सत चित आनंद रूप जो भूप जगत का जोहि। निज माया के अंतर रचा जगत जिन सोहि मोहि दे सुख भव भय हारी। मेरा तो । १ । सूर्य चन्द्र रचि जिन किया निशि दिन का तम नाश। स्वप्रकाश सर्वज्ञ जो सब जग जासु प्रकाश रास सुख अति आनंदकारी। मेरा तो । २ । भूमि

पाद अरु नाभि जिहिं गगन महा परिमान । पवन प्राण सूरज रु विधु जाके नेत्र महान ज्ञान निधि मोहन मन हारी । मेरा तो । ३ । कर्ण दिशा मस्तक जिहीं स्वर्गहि मन में आन । मुख अग्नी जलनिधि हि जा वास स्थान पिछान । जान यों ता तन विस्तारी । मेरा तो ॥ ४ जाके भीतर बसत है सकल जगत यह जान । थिर चर खग गो आदि के तनु तें क्रीडत मान जान यों अद्भुत तनु धारी । मेरा तो० ॥ ५ ॥ विजय कहै याविध प्रभू सकल जगत पर धान । मन माना रमता सदा मेरा जो महमान । मान तिहिं भक्त विपत हारी । मेरा तो ० ॥ ६ ॥ ६७ ॥ एजि श्याम

छोटी बहर की लावणी

अरी तू साँचीरी माता ।

जिवाता है हम कों जोई हमारी जिवन जड़ी जोई। कहत जिहिं गोविंद सब कोई हमारा प्राण पती सोई । जिवाता है हमको० ॥ ❀ ॥ जाकी इच्छा मात्र तें होत जगत उत्पन्न । जोही पालत नाशता रहता जो प्रच्छन्न । धन्न जो जगत पती होई। जिवाता है हम को जोई । ॥ १ ॥ चोमासे में मे बरसाता शीत समय में शीत । गरमी में जो गरमी देता यों जग पालत मीत रीत यह जग रक्षण होई । जिवाता है हमको ० ॥ २ ॥ सूरज उपजा देत है जोही हमें प्रकाश । दिनमें चन्दा रात में उपजा देत उजास खास यह जगत पिता होई । जिवाता है । विजय कहै या विधप्रभू सब जग पालन हार ॥ ३ ॥ अति समर्थ सर्वज्ञ जो अति ही अहै उदार कार जिहिं ऐसा शुभ होई जिवाता है० ॥ ४ ॥ सुध लेवो मेरी प्रभू ता प्रति विनती येहि । भव व्याधी विनसाय के । दर्शन दे निज कोइ जोहि है लक्ष्मीपति सोई। जिवाता है ॥ ५ ॥ ६८ ॥

॥ पीलू ॥

एजि श्याम छविधाम पूरो मन के काम तुम अति अभिराम पूरण काम गुण ग्राम । एजि श्याम० । ॥ गोपिन के प्यारे व्रज जन रखवारे तुम पापिन्कों हु त्यारे जिन लिया तुव नाम । एजि श्याम छवि धाम० ॥ १ ॥ शरण तिहारे आये तोरे गुण मन भाये अधम उधारण आदि घनश्याम । एजि श्याम० ॥ २ ॥ दीनबन्धु तुम करुणा के सिन्धु हो औगुण न देखो त्यारो नदजी के जाम । एजि श्याम० ॥ ३ । असुरन मारे निज जन उद्धारे तुम प्यारे व्रज त्रारे उन्के सारे सारे काम एजि श्याम० ॥ ४ ॥ विजय हु जपै तेरो नाम आठों जाम प्यारे सुध लीजे याकि येभि तेरो ही गुलाम एजि श्याम० ॥ ५ ॥ ६९॥

[नाथ हम शरणागत तेरी० इस चाल पर]

॥ झिझोटी ॥

श्याम हमें जगतें टारो जी हमारो दुःख निवारो जी पूरण काम धाम करुणां के करुणां धारो जी । वारण तारण अधम उधारण विरद सम्हारो जी श्याम हमें० ॥१॥ तुम माता तुम पिता हमारे प्रिय परिवारो जी। बंधु सखाहू स्वामि हमें तो तोर सहारो जी । श्याम हमें ॥ २ ॥ अति गुणज्ञ तुम अन्तर जामी काज सुधारो जी। पतित पावनो सुजस तुम्हारो ताहि प्रचारो जी । श्याम हमें ॥ ३ ॥ भक्त वर प्रद बेहद तो गुण मायहिं मारो जी । मेंपापी मोहि त्यारो जबही त्यारण थांरो जी । श्याम हमें ॥ ४ ॥ विजय कहै तुम भक्त जनन हित नरतन धारो जी । निर्गुण हू सगुणात्मक होके लिय अब तारो जी । श्याम हमें ॥ ५ ॥ ७० ॥

॥ पहाडी झिझोटी ॥

सांवरे सलोने श्याम तोकों नित ध्याते हैं । सांवरे ॥× ॥ सुमिरत तेरो

नाम सधत तमाम काम आठों जाम राधे श्याम राधे श्याम गाते हैं। सांवरे ॥ १ ॥ तूहि जग तात मात तेरे गुन नित गात निशि दिन आत जात तेरे रँग राते हैं। साँवरे ॥ २ ॥ तोरे बिन जगमें हमारो नहिं कोई भ्रात रक्षक क्षण क्षण तो कोंहि मनाते हैं। साँवरे ॥ ३ ॥ शरणा गत पालक तुहि जगमें करुणा निधान तोहि ध्यात सुखपाते हैं। साँवरे ॥ ४ ॥ दरशन देवो श्रीपति करुणा करि नाम सुमिर नरतन सफलाते हैं साँवरे० ॥५॥ विरद रावरो दीनउधारण यह मन गुनि हम विनति सुनाते हैं सांवरे० ॥ ६ ॥ अधम उधारण मंगल कारण तो सम और न कोई दृग आते हैं। साँवरे० ॥ ७ ॥ विजय कहै भव व्याधि भङ्कर याहितें प्रभु हम अति दुख पाते हैं। साँवरे० ॥ ८ ॥ विनती सुन कर पार लगावो भवसागर तें यहि हम चाते हैं। साँवरे० ॥ ९ ॥ सुध ल्यो श्री पति अबतो हमरिहु पापी हमअति यातें शरमाते हैं। साँवरे० ॥ १० ॥ पाप उधारन दुःख निवारण तो बिन और कों हम नहिं पाते हैं। साँवरे० ॥ ११ ॥ ७१ ॥

॥ जिलफ ॥

क्या माया ललचाया मुसाफिर दोदिन जगरहि जाना है रे। क्या मा० । धन दौलत अरु सुन्दर नारी इनकों अतिप्रिय माना हैरे। क्षणिक विषय सुख यहमन गुन तू लखत लखत बिन साना हैरे। क्या माया० ॥ १ ॥ स्वर्गादिक का सुख हू तुच्छहि इहिहूं अस्थिर माना हैरे । क्षीण पुण्य भये गिरता तहसें जनि मृति चक्र फँसाना हैरे। क्या माया ॥ २ ॥ यह संसार सराय समाना यामें कुछ रह फिर उठ जाना । माल खजाना सँग नहि जाना यहहीं सब रह जाना हैरे । क्या माया ॥ ६ ॥ यातें सब तजि हरि कों भजरे वोही सुख सरसाना हैर। क्या माया ॥ ४ ॥ सुकरत करले हरि को सुमिर ले जो हरि सन्निधि जाना हैरे। माया जाल कराल कालसम यातैं हरि हि छुडाना हैरे। क्या

माया० ॥ ५ ॥ विजय कहै मेरी शिक्षा चित धर । जो मुक्ती सुख पानाहैरे । क्या माया ॥ ६ ॥ ७२ ॥

॥ झिझोटी ॥

लगन लगी रे श्याम तोसों निभाजे मेरे मन तोरी प्रीती अति ही बढाजे । लगन लगी रे ॥ + ॥ दिन दूनी अरु रात चोगनी वढ़त रहै यौं करि अपनाजे । लगन० ॥ १ ॥ करुणा निधि यह किरपा कीजे मेरा बेड़ा पार लगाजे । लगन० । २ ॥ भवसागर में डूब रह्यो में बांह पकरि मोहि यातें तिराजे । लगन० ॥३॥ पतित पालना विदर सिहारो शरण गहे की लाज रखाजे । लगन० ॥ ४ ॥ निज जन जीवन श्रीमन मोहन कइयन जग में तुमनें निवाजे० ॥ ५ ॥ अबके मेरी बारी श्रीयुत यह लखि मोहि निज दरस दिखाजे ॥ ६ ॥ विजै कहै में चरनन चेरो मेरो भव भय जलद मिटाजे । लगन० ॥ ७ ॥ ७३

॥ परज बिहाग राग ॥

लीला म्हानें प्यारि लागै थांरि नदलाल, मोहि लिई तेनें सब ब्रजबाल । लीला म्हाने० ॥ + ॥ मिट्टी खाता सुनरी माता नित्य कृष्ण तेरो लाल । लीला म्हाने० ॥ १ ॥ यों बलभद्र की सुनि के बानी जानी तासु कुचाल । लीला म्हाने० ॥ २ ॥ कुपित होय बोली जसुमति तब मुख दिखलारे लाल । लीला म्हाने० ॥ ३ ॥ तब झट बोले कृष्ण खिलारी झूँट कहत वल करता जाल । लीला म्हाने० ॥ ४ ॥ मैनें मिट्टी नहिं खाइ माता मुख लखरी मेरो याही काल । लीला म्हाने० ॥ ५ ॥ यों कहि निज मुख फारि दिखायो सब जग तहँ जगपाल । लीला म्हाने० ॥ ६ ॥ देखि जसोमति इचरज में आ सुनि भई लखि ताको हाल । लीला० ॥ ७ ॥ क्या भयो मेरे

या लाला के यों किय सोच कमाल। लीला० ॥ ८ ॥ झाड़ा फूंकी करवाने का यत्न किया तिहिं काल। लीला० ॥ ९ ॥ इतने में सुध भइ जसुमति कों हरिहै क्या मेरो बाल। लीला० ॥ १० ॥ लखि यह हाल कृष्ण नें ताकी सुध फेरी ततकाल। लीला० ॥ १२ ॥ लाल २ फिर कहने लागी फाँसि माया के जाल। लीला० ॥ १३ ॥ या विध लीला जाकि अनेकन को कह सकता हाल। लीला० ॥ १४ ॥ विजै कहै मोहि जग तें छुड़ावो करत मनोहर ख्याल। लीला० म्हाने ॥७४॥

॥ माढ ॥

मन तो चुरायो म्हाँ को कहँ गये भागि। प्यारे कहँ गये भागि। मन तो चुरायो म्हाँ को कहं गये भागि ॥ + ॥ दरशन बिन मन तरसत म्हाँ को आय मिलो बड़ भागि। मन० ॥ १ ॥ दरशन देकर करिये कृतारथ बुझा देहु विरहागि। मन० ॥ २ ॥ मन मोहन तुम जानत नांही हम तुव पद अनुरागि। मन० ॥ ३ ॥ किरपा करो अब श्रीयुत हम पै हमरे हित महं लागि। मन० ॥ ४ ॥ शरणागत हम तुव चरनन के कहं गये हमँ दुख दागि। मन० ॥ ५ ॥ सुध ल्यो हमरी श्री नट नागर सोवत हो कि जागि। मन० ॥ ६ ॥ जो या दुख महु सुध ना लेहो तो हम कहं जांय भागि। मन० ॥ ७ ॥ विजय कहै हम तोरे भरोसे सबही जग दियो त्यागि। मन० ॥ ८ ॥ ७५

॥ राग परभाती झिझोटी ॥

राम कृष्ण भजन सार जग में यहि विचार यार भवसागर उतर पार नर तन सफलाई। राम०। तात मात भ्रात सखा घर में जो द्रव्य रखा कोइ नाहिं साथ चलै यहँ ही रह जाई। राम० ॥ १ ॥ काम क्रोध लोभ माहिं लिपट्यो है जगत आइ। हरि के

गुण कभी न गाइ यह ही दुखदाई। राम० ॥ २ ॥ जड़ है जब जमके द्वार खड़ है तब अपार मार सुनि है नहिं कोइ पुकार यह गुन मन मांई। राम० ॥ ३ ॥ दुर्लभ नर देह पाइ कर रे हरि भजन भाई। ताके गुण नित्य गाइ भव भय विनसाई। राम० ॥ ४ ॥ हरि हरसाय विजै करिहै सहाय तेरी। तेरि मेरि छोड भजहु यदुपति रघुराई। राम० ॥ ५ ॥ ७६ ॥

॥ सरपरदा विलावल ॥

साँवरे सलोने श्याम मेरि सुध लीजे। दीन अनाथ जान किरपा कीजे। साँवरे० ॥ + ॥ माया जाल में उरझयो हूँ मैं अब तो मोहि प्रभू सुरझा दीजे ॥साँवरे०।१॥ प्रणतपाल तुम शरणागत मैं दास जानि मोहि अपना लीजे। साँवरे ॥ २ ॥ तुमरिहि आस भरोसा मुझको स्वामी पीड़ा यह हर लीजे। साँवरे ॥ ३ ॥ विजय विनय करता कर जोरी मोरी अविनय माफ कर दीजे। साँवरे० ॥ ४ ॥ ७७ ।

॥ छोटी बहर की लावणी ॥

श्याम की छवि लागै प्यारी मोहनी मूरत सुखकारी। मुख द्युति अद्भुत अनियारी पूर्णिमा चन्द लजै भारी। श्याम० ।—। यह छवि यह छवि यह छवी ऐसी दूजि न कोय। राधा अरु श्री कृष्णजी अतिहि मनोहर दोय कोय नहिं या विध छवि धारी ॥ १ ॥ देखतही मन हरत हैं भक्त जनन को येह। भक्त उधारण हेत ये सगुण भये करि नेह येह हैं अछेह छवि धारी। श्याम० ॥ २ ॥ पूर्णब्रह्म प्रगटे यहां रमणेच्छामन ल्याय। निराकृतिहु साकृति भये निज जन हित ललचाय। आय जग नर तन अनुकारी। श्याम०

॥ ३ ॥ विजै कहै यह छवि सदा बसो मोर मन माहिं । राधा अरु श्रीकृष्ण की जहँ मो दृग ललचाहि नाहिं कोइ जिन सम अवतारी । श्याम० की० ॥ ४ ॥ ७८ ॥

॥ ईमन कल्याण ॥

मेरो मन लाग्यो रह तोर चरन में यहि बर चाहुँ मैं आयो शरन में । मेरो० ॥ = । सब तीरथ तुव चरन कमल में । अति समरथ उद्धार करण में । मे० मन० ॥ १ ॥ ब्रह्मादिक सब देव नमत जिहिं निशि दिन रहँ जाकी भक्ति करण में । मे० मन ॥ २ ॥ जाके भजन तें सब सिद्धी हो योगिहु रहते ध्यान धरण में । मे० मन० ॥ ३ ॥ जो मन बांछित दे भक्तों कों सब जन रहँ जाके ध्यान स्मरण में । मेरो० ॥ ४ ॥ अति पापिहु जो सेवै ताके पापन मेटै एकहि क्षण मे । मे० मन० ॥ ५ ॥ पतित पावनी गंगाजी हू जा तें उपजी रह ता शरण में मे० मन ॥ ६ ॥ जाकी रज कों शिर धरते ही बांछित सिध हो ताही क्षण में । मे० मन ॥ ७ ॥ जिहिं शिर धर शेषहु बलवत भो या सब जग के भार धरण में । मे० मन ॥ ८ ॥ विघ्न राजहू ताके ध्यायें अति समरथ भो विघ्न हरण में । मे० मन० ॥ ९ ॥ ब्रह्माहू ताकों शिर धर अति समरथ भो या जग के करण में । मे० मन० ॥ १० ॥ या विध तुव चरनन की महिमा अपरंपार न आवै वरणन में । मे० मन० ॥ ११ ॥ विजै कहै में ताको हि सेवक ध्याबूं में तिहि अन्तःकरण में । मे० मन० ॥ १२ । ध्यान रहै नित अति ताको ही विघ्न न हो कभि ताके स्मरण में । मे० मन० ॥ १३ ॥ यहि मेरि मनसा पूरो श्री हरि चाहुँ येहि परि तो चरनन में । मे० मन० ॥ १४ ॥ जाकी रज कों सिर धरते ही बांछित सिध हो ताही क्षण में । मे० मन० ॥ १५ ॥ ७९ ॥

॥ हुमाऊ राग ॥

श्याम मेरी करिये अब तो सहाय लिय मोहि कामादिक नें दबाय। श्याम० । ÷ । नाथ अनाथ के रक्षक यातें चरन पच्यो में आय। कृपा सिन्धु दीनन के बन्धू रक्षा करिये धाय। श्याम० ॥१॥ भवसागर में भ्रमत २ मेरि ऊमर गई बिताय। या में डूबत है मेरि नैया याकों पार लगाय। श्याम० ॥ २ ॥ भक्त वछलता तुमरी भारी जानत सब संसारी। हिरणाकुश कों मारिकें तुम नें लिय प्रहलाद बचाय। श्याम० ॥ ३ ॥ दुःखित गज की टेर सुनत ही खगपति त्यागि के धाय। पांय पयादेहि ग्राह तें जलदी गज कों लीन्ह छुड़ाय। श्याम० ॥ ४ ॥ या विध नना भक्त उबारे करुणाचित में लाय। दीन अभक्त विजय कों त्यारो त्यारण तव कहलाय। श्याम० अन्तर्यामी जग के स्वामी सरनामी सिरनाय। करूं बीनती में विजये न्दु सुनिये श्रीयदुराय ॥ ६ ॥ ८०

॥ हुमाऊ राग ॥

श्याम तेरी वंशी कामण गारी यातें मोही सब व्रज नारी। श्याम० ॥ ● ॥ जलचर मोहे थलचर मोहे मोही सब जनतारी। सुर अरु असुर आदि सब मोहे ऐसी मधुर पियारी। श्याम० ॥१॥ सुनत जासु धुनि चकित होय सब या विध अति सुखकारी। जो सुनता ताकी मधुर ध्वनि सुनत अनन्द लहारी। श्याम० ॥ २ ॥ श्याम सुँदर मन मोहन प्यारो निज कर गिरिवर धारी। जाकी रूप माधुरी भारी अति अद्भुत छवि धारी। श्याम तेरी० ॥ ३ ॥ नटवर वेश केश घुँघरारे वर पीताम्बर धारी। मोर मुकट की छवि अनियारी। मुखलखि चन्द लजारी। श्याय० ॥ ४ ॥ भूषण भूषित श्याम सुँदर तुव सब तन अति विलसारी। जगमगात मोतिन

की माला ता शोभा अति भारी। श्याम० ॥ ५ ॥ शरणागत रक्षक बनवारी सुध ल्यो अब तो म्हारी। विजै कहै मोहि भव व्याधी तें अब तो देहु छुडारी। श्याम० ॥ ६ ॥ चरण कमल को सेवक में तुव मोही ल्यो अपनारी। दीन बन्धु करुणा के सिन्धू करि ये मो रखवारी। श्याम० ॥ ७ ॥ ८१

॥ हुक्काफ ॥

हरिगुण नित्यहि गायरे नर हरिगुण नित्यहि गाय। तामें चित्त लगाय रे नर। आवा गमन छूटै नहिं तावित व्यर्थहि जन्म नसाय ॥ रे नर० ॥ १ ॥ हरि प्रसन्न हो लेंगे तुझकों अपने पास बसाय। रे नर ॥ २ । यातें अधिक लाभ जग क्या है यह अति लाभ लहाय। रे नर० ॥ ३ ॥ हरि विमुखन की दुर्गति होती दुख लहैं नरकहि जांय। रे नर० ॥ ४ ॥ विजय कहै यह सुगम मार्ग है मुक्ती को सुखदाय। रे नर० ॥ ५ ॥ या तें सब तज हरि कों भजरे नर तन लाभ लहाय। रे नर। ८२ ॥

।जंगला झिझोंवा ॥

दर्शन को मोहि चाव साँवरा दर्शन को मोहि चावरे। करि किरपा मोहि दरशन दीजे नमों तुम्हारे पांवरे। नमों तुम्हारे पांव साँवरा नमों तुम्हारे पांवरे। करि किरपा० ॥ — ॥ तेरोहि मेरे पूर्ण भरोसो जपों तोर में नांवरे ॥ भवसागर सें पार उतारो अब तो मेरी नावरे। अब तो मेरी नावरे साँवरा अबतो मेरी नावरे। करि किरपा मोहि दरशन देवो दरशन को मोहि चावरे ॥ १ ॥ तुव दरशन सें जन्म सफल हो यातें यह मन भावरे। भवसागर सें निकसूँ या को मेरे मन उमगावरे। मेरे मन उमसांवरे। करि किरपा०

॥ २ ॥ जिन कों दिय प्रभु तुम ने दर्शन वे जन धन्य कहांवरे। उननें जग में कीन्हा निज का आवागमन नसावरे । आवागमन नसाव साँवरा आवागमन नसावरे । करि किरपा० ॥ ३ ॥ विजै कहै जग में मुक्ती को और न कोऊ दावरे । तोर शरण लियँ भव व्याधी तें जन को होय बचावरे । जन को होय बचाव साँवरा जन को होय बचावरे । करि किरपा० । ४ ॥ चरण गहे की लज्जा राखो मत धो मोहि तरसावरे । दीन अभक्त कों त्यारो जबही त्यारण तोर कहावरे । त्यारण तोर कहाव साँवरा त्यारण तोर कहावरे ॥ ५ ॥ रूप माधुरी बासत बाँसुरी, की धुनि मोहि सुनावरे अन्त समय में मो सुधि लीज्यो दीज्यो मोहि दरसावरे। दीज्यो मोहि दरसाव सांवरा दीज्यो मोहि दरसावरे । करि कि० ॥ ६ ॥ नित्य दरस तें खुश होऊं अरु ऋन्तहु में दृग आवरे । प्रेम पयोधि बढ़ै त्यों गोविंद तुव दरशन पर भावरे । करि कि ॥ ७ ॥ अन्तहु में दृग आव सांवरा अन्तहु में दृगआवरे । भव व्याधी सब मिटै तुरतही तुव दरशन सुख छावरे ॥ २ करि किरपा मोहि दरशन देवो दरशन को मोहि चावरे ॥ ८ ॥ ८२

॥ राग परभाती भिझोटी ॥

शरणागत वत्सल श्याम खबर लीजे मेरी, जाको पार नहीं ऐसि महिमा है तेरी । शरणागत० ।=। कई दीन तारे तुमने किई ना अँवेरी । काहे प्रभु मेरि बेर करते हो देरी । शरणागत० ॥ १ ॥ मेरे तो तुम्हारिही आस है घनेरी । मो जैसे कइयन की आपदा निवेरी । शरणागत० । २ ॥ दीनबन्धु जानि अरण तेरिहि में हेरी । भव भय मेरो मेटि देहु येहि अरज मेरी । शरणागत० । ३ ॥ पहिर फिरूं मैं तो प्रभू माया की बेरी। विजै काटो मेरि बेरि कृपा दृष्टि गेरी । शरणागत० ॥ ४ ॥ ८३

॥ बरवा काफी चाल तमासा की ॥

[अरी तू खांची री माता० इस चाल पर]

मै तो शरण तोर श्री नाथ मोही त्यारो जानि अनाथ । मैतो० आप बिना नहिं रक्षक दूजो जाके भरूं में बाथ । दीनन नाथ प्रभूजी मोपै कृपा करो यदुनाथ । मै० ॥ १ ॥ कृपासिन्धु दीनन के बन्धू धरो हाथ मेरे माथ । शरणागत पालन व्रत तुमरो पकड़ो मेरो हाथ । मै० शरण० ॥ २ ॥ भक्त पालना हित प्रगटे तुम यहि लखि लाग्यो साथ । मोहि अपनावो अब तो स्वामी करिये मुझे सनाथ । मै० श० ॥ ३ ॥ विजय करत कर जोरि बीनती धरि तुव पद निज माथ । मन मोहन मत भूलो अपनी जग प्रसिद्धगुण गाथ । मै० ॥ ४ ॥

॥ काफी ॥

राम रटोरे भाई जगत यह झूंठो लखाई राम रटोरे भाई : — । जा बिध स्वप्नाकि सबही वस्तू सुपने सच दिखलाई । जागें झूंठी ता बिध जग यह माया मय हि बताई काहि या में ललचाई । राम० ॥ १ ॥ मात पिता दारा सुत बन्धू कोइ ना करत सहाई । अन्त समय में केवल ईशहि सुध लेगा खुद आई । ताहि में ध्यान लगाई । राम० ॥ २ ॥ धन दोलत अरु माल खजाना यहहिं धरा रह जाई इन में त्यागो अब तुम ममता रामहिं ध्यावो सदाई मोक्ष सुख पावो जाई । राम० ॥ ३ ॥ राग द्वेष कामादिक त्यागो सुकरम चित्त रमाई । प्रेम लगा हरि में नर तन कों सफल करो सुख छाई । हरी निज जन सुखदाई । राम० ॥ ४ ॥ विजै कहै तुम चूको मतनें यह अवसर बिनसाई । पुनि दुर्लभ यह नर तन यातें हरि ध्यावो हो भलाई राम कों लेवो रिझाई । राम० ॥ ५ ॥ ८५

॥ हुमाऊ सोरठ ॥

देखो २ कैसा यह फूटा ढोल, समझत नाहीं अपनी पोल। देखो देखो कैसा० ॥ — ॥ जग माया में फंसकर नितही फिरता डांवाडोल। हरि का नाम लेत नहिं कबही जो है अतिहि अमोल देखो० ॥ २ ॥ भूल गया यह गर्भ के मांही कीन्हा था जो कोल दे० २ ॥ ३ ॥ जमके द्वारै पहुँचैगा जब खुलि है याकी पोल। दे० ॥ ४ ॥ जमदूतन सें पैहै जब यह दंडहु तहां अतोल। देखो २ ॥ ५ ॥ शरणागत रक्षक हरि विसरा, ऐसा है बगलोल। देखो २ ।६॥ हरि का ध्यान भजन नहिं करताँ क्या लागै इहिं मोल। देखो० २ ॥ ७ ॥ सुकरत का इहिं नाम न मावै मानै न सज्जन बोल। देखो० ॥ ८ ॥ अब भी याकों सूझत नाहीं आयु बीती होल। देखो० ॥ ९ ॥ जगदीश्वर का शरण लेय कर जग में निर्भय डोल। देखो० ॥ १० ॥ विजै कहै अबही तू हरि भज यह अवसर अनमोल वृथा जात है विन हरि ध्यायें यह कहि खूब सतोल। दे० ॥ ११ ॥

॥ धनासरी राग ॥

जनम अकारथ जायरे नर निश दिन हरि भज जन्म अकारथ जाय ॥ ❀ ॥ डाँवांडोल फिरै क्यों मूरख जग माया दुख दाय। येहि समझ या में मत फंस तू कोइ न करिहै सहाय। रे० नर० ॥ १ ॥ जगमाया फंसि नरक भोगि है जम तोहि पकरि मगाय। तहं कोइ साथि न संगी तेरो लेहै कौन बचाय। रे नर० ॥ २ ॥ हरि भक्तन तें जमहू डरपै दूर रहै भय पाय। शरणागत रक्षक गिरि धारी करि है सोहि सहाय। रे० नर० ॥ ३ ॥ यातें भज तू नित अति प्रेम तें, हरि हीं जो सुखदाय ! विजय कहै यह सुगम मार्ग है इहिं हिं पकरि चित लाय रे नर० ॥ ४ ॥ ८७

युगल विहारी अति छबि धारी गिरिधारी श्री मान । मेरि सुध० ॥ १ ॥ मोहन मिन्ता जगत नियन्ता रन्ता सकल जिहान । मेरी सुध० ॥ २ ॥ जन सुख कर्त्ता सब दुख हर्त्ता भर्त्ता जगत प्रधान । मेरि सुध० ॥ ३ कारण के कारण खल दारण हारण मोह महान। मेरि सुध० ॥ ४ ॥ ऋिद्ध सिद्ध शुभ बुद्धि के दाता त्राता शुभ गुण खान । मेरि सुध० ॥ ५ ॥ सर्व ज्ञाता जगत विधाता देते शुभ बर दान । मेरि सुध० ॥ ३ ॥ निराकार साकार रूप तुम नहिं कोई तोर समान। मेरि सुध० ॥ ७ ॥ श्री जग नाथ अनाथ नाथ तुम तुमहीं जगत निधान मेरि सुध० ॥ ८ ॥ विजय कहै भव भय मेरी मेटो चरन परन्यो में आन । मेरि सुध० । ९ ॥ शरणागत रक्षण को तुव यश छायो सकल दिशान । मेरि सुध० ॥ १० ॥ ८९ ॥

॥ सोरठ देस ॥

मोकूँ त्यारो जी करुणा निधान मैतो चरना परयो हूँ आन । मोकूं त्यारो जी ० ॥ + ॥ नारद शारद भोगी योगी धरते तुमरो ध्यान । दरसकों आये नभ में छाये सुर करैं तुव गुण गांन। मोकूँ त्यारो जी ॥ १ ॥ गोविंद प्यारे नन्द दुलारे तुम सम जग म न आन । शेष महेशादिक हुं तेरे थके करत गुण गान ॥ मोकूं ० ॥ २ ॥ अन्त न तोरी महिमा को प्रभु हारे करत बखान। मोकूं ॥ ३ ॥ थिर चर जग बस्तू सब तुम नें रचे विधू अरु भान । मोकूं ॥ ४ ॥ सब के आलय तुमही स्वामी भक्तन जीवन प्रान । मोर मुकट मकराकृति कुंडल झल कत तुमरे कान । मोकूं ॥ ५ ॥ वेंशी अधरन सुन्दर सोहत भूषण लसत महान। मोतिन माल गले अति सोहत जग मग ज्योति वि-

तान । मोकूं ॥ ६ ॥ हीरन हार विविध रत्नन तें जटित कटक विलसान । मोकूं ॥ ७ ॥ अधर विम्ब ज्यों लाल विराजत सुन्दर मुख मुसक्यान । मोकूं० ॥ ८ ॥ पूर्णचन्द्र ज्यों मुख मण्डल छवि हरत चित्त सुख दान । चरन कमल निर्मल नूपुर छवि मनमोहनि झल कान । मोकूं० ॥ ९ ॥ श्री राधा युत सोभित यदुपति बसो विजै चित आन । दरश देय मेरी आशा पूरो देवो यहि वरदान । मोकूं० ॥ १० ॥ ९० ॥

। विहाग ।

प्यारे कृपा करो जि मोप सँवरे । मोहि तुव दरशन को चावरे । प्यारे ॥ —।— तुव दरशन सें मिटि है प्यारे भव व्याधी को घावरे । प्यारे ० ॥ १ ॥ तुव दरशन कों आतुर में अति मेरे निकट भट आवरे । प्यारे ० ॥ २ ॥ किरपा करि कइ भक्तन तारे प्रगट तोर पर भावरे । प्यारे ० ॥ ३ ॥ भव सागर तरणे कों प्रभु जी तोर भजन ही नावरे । प्यारे ० ॥ ४ ॥ तुव माया के फन्दे में प्यारे अबतो मोहि बचावरे प्यारे ० ॥ ५ ॥ यामें भरमत जनम कई गये अब तक भयो न बचावरे । प्यारे ॥ ६ ॥ विजय दयालू तुम अति स्वामी अबतो घाव मिटावरे प्यारे ॥ ७ । ९१ ॥

॥ परभाती भिझोंटी ॥

वंशी के बजाने वाले गोपिन के रिझाने वाले मेरी सुध लेवो श्री श्याम सुँदर प्यारे । वंशीके ० ॥ टेर ॥ धीर वीर जमुना तीर वृन्दावन वल के वीर रासरच्यो गोपिन मन काम सबै सारे । मेरीसुध ० ॥ १ ॥ सन्तन सुख करण हेत दुष्ट दैत्य दल

न हेत निर्गुणहू सगुण होय भूमि भार टारे । मेरी सुध ० ॥ २ ॥ आँनद के कन्द व्रज चन्द नन्द नन्दन तुम जग-में अवतार लेय सन्तन कों तारे । मेरी सुध लेवो ० ॥ ३ ॥ अमला वहु लीला किइ तुमनें कमला के कन्त कहत सुनत ति न्हैं लोक सुगति सुख लहारे । मेरी सुध ० ॥ ४ ॥ नन्द के किशोर तोर महिमा कोन ओर छोर शेष औ महेश आदि सुरहू कहि हारे। मेरी सुध ० ॥ ५ ॥ करुणा के सिन्धु विजय वन्धु दीन दुखियन के शरणागत लोकन के सबै दुख निवारे मेरी सुध ० ॥ ६ ॥ ९२ ॥

॥ छोटि बहर की लावणी ॥

श्याम मेरो रक्षक जग माहीं विना तुम और कोऊ नाहीं । दया करि गहि लीजे बांही पूरिये मेरी चित चाही । + । जग माया में फंस रहा में हूँ प्रभू अनाथ । शरण आय अरजी करूं सुनिये दीननाथ नाथ तुम भव भय के दाही । श्याम मेरो ० ॥ १ ॥ तुम समरथ वलवान अति शरणागत हित कारी । मो हि बचावो दुःखतें भव भय मेरो टारि धारि चित दया गुण ग्राही । श्याम ० ॥ २ ॥ जाविध गज की टेर सुनि दौरे खग पति छोडे पैदलही जलदी प्रभू गहि दयालुता भारि । टारि दिय तासु दुःख जाही । श्याम मेरे ० ॥ ३ ॥ धन्य दया सागर प्रभू प्रणत पाल जगदीश । विजय कहै मेरिहु अबै सुधल्यो ईशन ईश अीश अब चालिये इहिं राही । श्याम मेरो रक्षक जग माहीं ॥ ४ ॥ ९३ ॥

सोरठ देश

जसोदा तेरो ढोटो रीयो खोटो नँदलाल । नटखट करत कुचाल जसोदा + आडो होके रोकि गैलो कह मुख दिखलाएरि बाल । जसोदा तेरो ढोटोरियो खोटो ॥ १ ॥ एकवेर मोसों हँस कर बोलरि मो संग प्यारी चाल । जसोदा । २ । मांगत जोबन दानरि हमसे या विध करत कुचाल । जसोदा । ३ । मांखन चोरत मटकिन फोरत ढोरत दूध कमाल । जसोदा । ४ । सखन संग ले तान सुनावै गावै गीत रसाल । जसोदा । ५ । मृदु मुसकावै राग सुनावै नाचै दे दे ताल । जसोदा । ६ । यह सुनि जसुमति ऐसें बोली तुमरो झूंठो हाल । सुनोरि गोपी खोटो नाहिं मेरो लाल कछू नहिं करत कुचाल सुनोरि । ७ । तुमतो जोबन मातिरि गोपियो यह बालक इहिं काल । सुनोरि । ८ । कहा कहो तुम सोचत नाहीं झूंट बजावोरि गाल सुनोरि । ९ । यह सुनि गोपियां कहने लागीं यह यों करत कुचाल । जसोदा । १० । घर में बालक सुनरि जसोदा बनमें तरुण हो लाल । जसोदा । ११ । तू जानें नहिं याको करतब अजब ढंग यह बाल जसोदा । १२ । यह सुनि पुनि बोली जसुदा यों बोलोरि बचन सम्हाल । सुनोंरि । १३ । यह तुम बात कहोरि अनहोनी तुमही करो न खयाल । सुनोरि ० ॥ १४ ॥ एक सखी लेगई पकरिके कृष्ण कों ताही काल । जसोदा ० ॥ १५ ॥ सुनरि जसोदा तेरो लाला करता अतिहि कुचाल । जसो ० ॥ १६ ॥ दूध धई माँखन नित चोरत ढोरत दूध कमाल ० । जसोदा ० ॥ १७ ॥ आप खाय अरु सखन खिलावे याको ऐसो हि हाल । जसोदा ० ॥ १८ ॥ सुनरी गोपी क्या कहती तू यह तेरि हि बदचाल । सुनोंरी मैनाखों ०

। १९ । झूंटी री तू गोप बधूटी बोलत नाहिं सम्हाल गोपी री मेरो कनवो नहिं बदचाल । २० । मेरो लाला कृष्ण नहीं यह करती क्यों न खयाल । गोपीरि मेरो कनवो नहिं ह सम्हाल । २१ । यह तो तेरो खाविंद येरी रचती क्यों तू जाल । गोपीरि मेरो कनवो नहिं ह सम्हाल । २२ । झूंट मूंट ही कृष्ण बतावै धरूं चपत तेरे गाल । गोपीरि । २२ । यह सुनि देखि आपने पति कों हक बक भइ तिहिं काल । २४ । तब वह गोपी इचरज में आ शरमा चलि लखि हाल । गोपीरि । २५ । ताक्षण अपनी माया के बल ता पति भये जगपाल । गोपीरि । २६ । या विधि लीला अद्भुत जाकी ऐसो श्री गोपाल जसोदा ० ॥ २६ ॥ विजै कहत सो मेरी मेटौ भव बाधा इहिं काल । जसोदा० ॥ २७ ॥ जाकी माया अलखह ताकी जानि परत नाहिं चाल । जसोदा० ॥ २८ ॥ ९४ ॥

॥ पीलु ॥

आनन्द कन्द गोविंद गोपाला करिय कृपा मो पै नँदबाला । ÷ । वंशी बजा के तुमनें मोहन मोहलिई सबही ब्रज बाला । आनद ० ॥ १ ॥ वंशी बट जमुना के तटपर रास रच्यो तिन सँग जगपाला । आँनन्दकद ० ॥ २ ॥ छ महिने की रात्रि भई तब पूर्ण चन्द्रनहु निज गति टाला । आनदकन्द ० ॥ ३ ॥ अति आनन्द मगन ब्रज बाला क्रीडत बिलसी अति तिहिं काला । आनदकन्द ० ॥ ४ ॥ द्वै द्वै गोपिन बिच इक इक तुम नाँचे गिरिधर लसत विशाला । आनदकन्द ० ॥ ५ शोभा धाम श्याम के करपें कर धरि नाचत हुलसत बाला । आनदकन्द ० ॥ ६ ॥ गगन विमान चढे लखिदेवन वर्षाये पु-

ष्पन के जाला। आनदकन्द ० ॥ ७ ॥ आनद मग्न भये सबही सुर लखि रासेश्वर कुतुक विशाला । आनद ० ॥ ८ ॥ श्री राधा में प्रेम अगाधा साधा तिन मन काम कृपाला । आनद ० ॥ ९ ॥ याविध नाना लीला करि करि गोपिन आनद देत विशाला । आनदकन्द ० ॥ १० ॥ विजय कहै श्री युगल विहारी मेरी सुध लें परम कृपाला । आनद ० ॥ १२ ॥ करुणा करि मोहि अपनो गुनि के मेरो काटो भव भय जाला । आनदकन्द ० । १३ ॥ चरण शरण आयो में श्री युत पार उतारो दो मत टाला । आनदकन्द० ॥ १४ ॥ ९५ ॥

॥ पीलू कहरवा ॥

मेरो मन लाग्यो एरि नँदजी के काँन में मैतो रहुं रात दिन ताहि के ध्यान में । मेरो मन लाग्यो एरि नदजी के कांन में ० ॥ × ॥ जाहि लखत अचकहि चकित भइ देख्यो नाहिं ऐसो दूजो सुन्दर जिहांन में । मेरो मन० ॥ १ ॥ रूप माधुरी नयन छाई भइ मैंतो लोटा पोट ताहि के ध्यान में । मेरो नम० ॥ २ ॥ सुध नाहिं रहि मोहि निज तन कीहू चित्त चुरा गयो बस्यो मेरे प्रान मे । मेरो मन ० ॥ ३ ॥ कहाँ जाउँ कहँ हूँ हूँ वा मन मोहन को नाहीं जानूँ गयो वे तो कौंन दिशान में । मेरो ० ॥ ४ ॥ मोहि लखि वानें मोपै छाड्यो एरि मेरि प्यारि नैन सैन बान धरि भ्रकुटिक बान में । मेरो० ॥ ५ ॥ एरि सखि आयो कहा सामनें वो मेरो प्यारो ललिता विशाखा सँग खेलत सखान में । मेरो० ॥ ३ ॥ चल सखि मेरि सँग वासें मिलने को तूभि वाके सँग रमि मैतो रहूँगी मोजान में । मेरो ० ॥ ७ ॥ ऐसें राधे मन लाय जाय मिलि प्यारे सँग आनद

द्यो मोहि टार । जी प्रभु । १४ । मेरी मनसा पूर्ण करो प्रभु दासन पालनहार । जी प्रभु ० १५

॥ काफी ॥

मै तो आयो शरण तोरी श्याम, मोरि लीजे खबर जगधाम ॥ मै तो आ० ॥ या संसार के आदिम तुमही, थे न और को काम । रमणेच्छा जब प्रगटी खुदही द्वै भये राधा रु श्याम ॥ मै तो० १ ॥ जगमें ज्यों दीपक के माहीं कज्जल रहत ललाम । त्यों तुम द्वै एक हि थे श्रीयुत पुनि किय जगत तमाम । मै तो० २ ॥ या तें जगके कर्त्ता हर्त्ता पालयिता गुणग्राम । तुमही स्वामी ब्रम्हरु माया ध्याऊँ मैं प्रति याम ॥ मैतो० ३ ॥ शरणागत पालन तत्पर तुम जगमें हो सरनाम । भव व्याधी मेटो विजयेन्दु कि सिद्ध करो यहि काम ॥ मैतो० ४ ॥

॥ छोटी बहरकी लावणी ॥

युगल छवि जबही दृग आवै दिव्यतन मो मन हरषावै । हृदय में अति आनद छावै नीर नयननतें बरसावै ॥ युगल० ॥ श्रीराधा-गोविंदको परम अनोखो रूप । जाहि लखें भावै नहीं कोइहु अन्य सुरूप रूप यह आनद उमगावै ॥ युगल छवि० १ ॥ शोभा वरणी जाय नाहिं है वेहद इहिं हेत । शेषहु कहसक नाहिं जो द्वि सहस जिव्ह समेत नेत कह ब्रम्हहु हट जावै ॥ युगल० २ ॥ चोदह लोकन में हु नाहिं कोइहु तिन प्रतिमान । कामरु रति की क्या गिनत मोहे शिवहु सुज्ञान । मान अति सुन्दर ललचावैं ॥ युगल० ३ ॥ शिवहू मोहनि रूप लखि तिहिं अति सुन्दर जान । पकरन दौरे ताहि जब भये बहुत हैरान । जान तिहिं सुन्दर मन ध्यावैं ॥ युगल० ४ ॥ विजै कहै या विध प्रभू श्रीराधा अरु स्याम । मेरी भव बाधा हरो मोहिं निज दास पिछान जान निज मुझकों अपनावैं ॥ युगल छवि जबही० ५ ॥

उमग भरि खेली सखियन में । मेरो० ॥ ८ ॥ मिलत मोहन दौर ताकि गहि बाँह प्यारो क्रीडा किइ नाना विध आनद उतान में । मेरो० ॥ ९ ॥ ब्रन्दाबन रास रचायो गोपिन संग रसिक विहारी गिरिधारी रसियान में । मेरो० ॥ ११ ॥ या विध क्रीडत राधिका गोविंद मोहि कहै विजयेन्दु राखो निज चरणाँन में । मेरोमन ० ॥ ११ ॥ ९६ ॥

काफी

जी प्रभू सुनु विनती मोरी गोविंद परम उदार गोविंद परम उदारजी प्रभु सुनु विनती मोरी ॥-॥ जब जब भीर परी भक्तन में लीन्हे तुम उर धार । जी प्रभू ० । १ । भीर परी प्रहलाद भक्त में ताको दुख दिय टार जी प्रभू । २ । यों असंख्य भक्तन दुख मेटे चित में करुणा धार । जी प्रभू । ३ । द्रुपद सुता को चीर बढ़ायो दुःशासन मदगार । जी प्रभू ० ४ । लंकप कीन्ह विभीषण कों तुम दिय ता दुःख निवार । जी प्रभू ० । ५ । पाण्डु सुतन की रक्षा कीन्हीं कौरव कुल बिनसार । जी प्रभू । ० ६ अजामेल से पापी तारे कठिन जासु निसतार । जी प्रभू ० । ७ । मीरा की लखि निज में प्रिती दिय ता कष्ट निवार । जी प्रभू । ० ८ विषका प्याला दिय जब राणा भया अमृत गुण कार । जी प्रभु ० । ९ । सर्प खिनायो धर पेंटी में सो भयो पुष्पनहार । जी प्रभू० ॥ १० । सिंह हिं भेज्यो भक्षण कों ज्यो गाय भयो तिंहि बार । जी प्रभू ० । ११ । पूज्यो नरसिंह ताहि समझि के निज इष्टहि मन धार । जी प्रभू ० । १२ । अब विजयेन्दू कह मेरी बारी मेरो हु करैं उद्धार । जी प्रभू । ० १४ । जग माया मोहि खूब सतावै यातैं

ॐ

॥ श्रीराधाकृष्णायनमः ॥

॥ अथ श्री गोपाल चक्रचूडामणिः ।

असारे खलु संसारे तापत्रयतप्तानां नाना विधि भेदग्रस्तानां कं शरणं याम इति, विमुग्धानां निखिलजनानामुपकाराय वादि वादं निरस्य श्री गोपालचक्रेण श्री विष्णोर्भक्तानाञ्च हृदयङ्गम चूडामणि रिव श्री गोपाल चक्र चूडामणि नाम ग्रन्थो निर्मितो मया क्षमध्वं यत्रस्खलनं भवेदिति ॥

अथ मङ्गला चरणम् ॥

रेचित्त चिन्तय चिरं चरणौ मुरारेः
पारं गमिष्यसि यतो भव सागरस्य ॥
पुत्रा कलत्रमितरा नहिते सहायाः
सर्वं विलोकय सखे!मृगतृष्णिकाभम् १

गोपिकावृन्दवन्द्यो व्रजेशो व्रजे वेणुना वल्लरी । तंवनं वीणयन्; राधयासंयुतो देवकी नन्दनो वल्लवी वल्लभो माधवो नोऽवतु ॥ १ ॥ सर्वगंसर्वदानन्द रूपं विभुं सन्मनःशान्तिदं

सर्वतः सुन्दरं मानसागर मध्ये वसन्तं प्रियं सर्व भूतेषु गोपाल मेकं भजे ॥ १ ॥ नैवाकिञ्चिज्जगत्सागरे तादृशं त्वद् विनानंददं वस्तुस्यान्मादृशं-आग्रहं चैवमे देवमे तादृशं-सर्व भूतेषु गोपाल मेकं भजे ॥ १ ॥ शुद्धचित्तोऽस्मि जीवेश सत्यं शेष किंविलम्बं करोषि परीक्षां कुरु । मापरीक्षाद्य दासंविधेहि मुखे वीतरागोऽस्मि गोपाल मेकं भजे ॥ ३ ॥ संशयापन्न वाक्यं नमे विद्यते संशयं किं गतोऽसि सदासर्वतः । बुद्धिमन्तो विजानन्ति दासंक्षणे बुद्धिमत्स्वाग्रिमं कृष्ण मेकं भजे ॥ ४ ॥ सेवितुं तद्दिवाञ्छामि सत्यंवचः सेवते यत्र भक्तिः सकामे रहम् । नैवपापं विजानीहि शुद्धे ॅ जने पावनंतं मुकुन्दाख्यमेकं भजे ॥५॥ यन्नमे दर्शनं ते जगद् व्यापकं चक्षुषोगोपकं तद्धिदुःखं महत् । नैव याचे सुराज्यं नभोगं सुखं सर्व रूपंहि गोविन्द मेकं भजे ॥ ६ नोयदा सेवकं चेतसा पश्यसि ज्ञास्यसि त्वं कथंदासत्वं विभो । नोभयं यस्य कस्यापि वैश्रूयते निर्भयं तं रमाकान्त मेकं भजे ॥ ७ ॥ मन्मनोऽलिर्भव त्पाद पङ्के रुहे सर्वदानन्द भागी भवेच्छ्री निधे । एतदेवास्ति विज्ञापनं ते पुरस्त्वन्तुमन्यस्व वानो त्वदीयारुचिः ॥ ८ ॥ हेम

नेत्रादि दैत्यान्तकं लीलया-अम्बरीषादि हृदभक्त संरक्षकं । देववृन्देषु संदर्शनानन्ददंहसगोपाल मेकं सुरेशं भजे ॥ ९ ॥ वैष्णव धर्म्म प्रचारं कृत वन्तोये पुराजगति ध्याये बालकरूपान् परमविर-क्तांश्च सनकादीन् ॥ श्री कृष्णांघ्रि सरोजेषद् पद हवयः सदारमते तमृषिं वीणापाणिं नारद संज्ञक महं वन्दे ॥ १० ॥

सौदर्शनावतारो वैष्णव धर्म प्रर्वतको लोके श्री निम्बार्काऽऽचार्य्यो वर्ण वरश्च वन्द नीयोमे ॥ गुणिगण गणना गण्यं हृद्यतमं भाष्य कर्तारम् । बुद्धिमतांच वरिष्ठं वन्देतं श्री निवासाख्यम् ॥ अखंड मन्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् तद् पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवेनमः

इति मङ्गला चरण समाप्तिः ॥

इस संसार में प्राणि मात्र के सुखका उपाय कौन है । सज्जन विचार करेंतो " धर्मात्मात्मा सुखम् " इस वैदिक सिद्धान्तके व्यतिरिक्त अन्य कोई भी उपाय नहीं हैं, अतः भगवान जैमिनि मुनिने केवल लोकोपकारार्थ अति दुर्विज्ञेय वेदार्थ को पूर्व मीमांसा नाम द्वादशाध्यायात्मक ग्रंथ धर्म निर्णय करने में संगृहीत किया है ।

॥ अथातोधर्म जिज्ञासा ॥

धर्म नाम वेदोक्त पञ्चमहायज्ञादि चान्द्रायणादि व्रत प्रभृत्ति कर्म्मोंकी जिज्ञासा और दानादि नाम विचार करना चाहिये क्योंकि हिंसा रहित यज्ञ दम्भ पाखंड रहित तप जप वासना रहित दान यह अंतःकरण की शुद्धि करने वाले हैं– इस वास्ते अवश्य करना चाहिये श्री कृष्ण चन्द्र ने अर्जुन के प्रति कहा है–

यज्ञो दानं तपः कर्म न त्याज्यं कार्य्य मेवतद्।
यज्ञो दानं तपश्चैवपावनानि मनीषिणाम् ॥

हे अर्जुन यज्ञ दान तप कर्म यह त्यागने नहीं चाहिये अर्थात् करने ही चाहिये यज्ञ दान और तप मुनियोंको पवित्र करने वाले है ॥

एतान्यपि तु कर्माणि त्यागं कृत्वा फलानि च कर्तव्या नीतिमे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम्॥

हे अर्जुन ! जहां कहीं कर्म्मोका त्याग लिखा है वहां फलका त्याग लिखा है और कर्म अवश्य करना चाहिऐ यह मेरा निश्चयमत है (प्रश्न) महाराजशास्त्र में लिखा है कि शुभ अशुभ कर्मोका फल अवश्यही भोगना पडता है वगैर भोगे १० कोटिकल्पतक नहीं छूट सक्ते हैं ॥

अवश्य मेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्
नाभुक्तंक्षीयते कर्म कल्प कोटि शतैरपि ॥

उत्तर—कर्मोंके करने सेही कर्मोंका नाश होता है कर्मोंके न करनेसे कर्म अवश्य भोगने पड़ते हैं शुभ और अशुभ, सो योग दर्शन में लिखा है कि जीव दो प्रकार के होते हैं एक तो शुक्ल कर्म और कृष्ण कर्म। शुक्लकर्मोंके करने से कृष्ण कर्मोंका नाश होता है शुक्ल कर्म नाम यज्ञ तप जप आदि पुण्य कर्मोंका नाम है। औ कृष्ण कर्म लक्षों जन्मान्तर के पाप रूप संचित कर्मका नाम है यज्ञ तप दानादि शुभ कर्मोंके करनेसे कृष्ण कर्म नाश होता है ॥

धर्मेण हन्यते पापं धर्मेण हन्यते ग्रहः। धर्मेण हन्यते शुत्रुर्यतो धर्मस्ततो जयः

धर्म करनेसेही पाप नष्ट होतेहै-और धर्म करनेसेही ग्रहों का नाश होताहैं और धर्म करनेसेही काम क्रोध लोभ मोह आदि शत्रुओं का नाश होताहै। जिस्में धर्म करने से ही काम क्रोध लोभ मोह आदि शत्रुओंका नाश होता है। जिस्में धर्म विद्यमान है उसकी सदाजयहै धर्मात्मा पुरुष मोक्षरूपासिद्धि को प्राप्त होता है।

"ब्रह्म वैवर्त पुराणेश्री कृष्ण जन्मखंडे
राजादशरथ प्रति श्रीरामचन्द्रजीनै वन गमन के
समय कहाहै

नहि सत्यात्परो धर्मो नानृता त्पातकं परम् ।नहि गङ्गासमं तीर्थं नदेवः केशवात्परः॥ नास्ति धर्मात्परो बन्धुः, नास्तिधर्मात्परं धनम् ॥ धर्मात्परः प्रियः कोवा; स्वधर्मंरक्ष यत्नतः ॥ स्वधर्मे रक्षिते तात, शश्वत् सर्वत्र मङ्गलम् ॥ यशस्यं सुप्रतिष्ठाच प्रतापः पूजनं परम् ॥ इति ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहते हैं कि हे ! पिता सत्यके समान उत्तम और कोई दूसरा धर्म नहीं हैं और झूठके समान और कोई पाप नहीं हैं और श्री गंगाजीके समान और कोई उत्तम तीर्थ नहीं है और केशव भगवान के समान परे और कोई देव नहींहै इति संक्षेपटीकास्पष्ट त्वात्

सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः । सत्ये वायुश्च इन्द्रश्च सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम् ॥

टी०सत्यसेही पृथ्वी रुकी हुई है सत्य सेही सूर्य्य नारायण अपनी किरणों द्वारा सारे संसार में प्रकाश कर तपरहाहै सत्यसेही वायु और इन्द्र वर्तमानहै अधिक क्या सारा संसार ही सर्व ब्रह्मांड सत्य से स्थिरहैं ।

अथ टिप्पणी

जिस पुरुषमें सत्य विद्यमान है उसकी पूजा यज्ञ दानादिक करनासुफलहैं जिस पुरुषमें सत्य विद्यमान नहीं है उसका पूजा भजन आदिक करना सवबृथा हैं।

इति श्रीगोपाल चक्रचूडामणि
नाम. ग्रंथे श्री तपसी रामचरन दास
विरचित प्रथमोऽध्यायः
॥ श्री राधा गोपालदेवाय नमः ॥

(अथसृष्टि प्रकरण)

ब्रह्म वैवर्त पुराणे ब्रह्मखंडे
सर्वादौ ब्रह्मकल्पश्च चरितं कथितं द्विज ।
वाराह पद्म कल्पादौ कथयिष्यामि श्रोष्यासि ।
शूद्र कल्पा वहुविधा इति

सूतजी वोले शौनकादिक ऋषियोंसे सर्वके-आदिमें ब्रह्मकल्प होता भया तिस्के पीछे वाराह पद्म कल्प दो होते भये इनके पीछे शूद्र कल्प वहुत होते हुए।

अथ टिप्पणी ।

सर्वके आदिमें ब्रह्मकल्प होता भया जिस्में कि नारायण शिव शक्ति आदिक की उत्पत्ति परमा-

त्मा श्रीकृष्णचन्द्र जीसे हुई है इसके पीछे दो और कल्प होते हुए पद्म कल्प और वाराह कल्प होते हुये जिस्में मधुकैटभ दानव उत्पन्न होता हुआऔर विष्णु भगवानकी नाभिसे ब्रह्मा उत्पन्न होते हुए और उसी मधुकैटभ दैत्यकी पृथ्वी बनाई गई है और वाराह कल्पमें श्रीवाराह औतार हुयेहैं जो कि वहि पृथ्वीकु पातालसे लाये हैं ये तीन कल्पों के पश्चात् छोटे२ कल्पबहुत प्रकार के होते हैं जिस्में शिव शक्ति गणेश ब्रह्मादिकों की प्रधानता लिखी हुई हैं

अथ सृष्टि प्रकरण ब्रह्म वैवर्त पुराणे ब्रह्मखंडे

(सौतिरुवाच)

दृष्ट्वा शून्य मयंविश्वं गोलोकंच भयंकरम्॥ निरजन्तु निर लज्ये घोरं निवीत तमसा वृतम् ॥ १ ॥

सूतपुत्र शौनकादि ऋषिगणसे कहते भये कि हे शौनक साक्षात् गोलोकाधिष्ठाता श्रीकृष्ण चन्द्र सम्पूर्ण विश्वको शून्यजीव रहित वायु रहित जलरहित और अंधकार करके युक्त अत एव भयंकर देखकर।

आलोच्य मनसा सर्वमेक एवासहायवान्
स्वेच्छया स्रष्टु मारेभे सृष्टिं स्वेच्छामयःप्रभुः ॥

टी०स्वयं चित्तमें विचार कर अकेले प्रभु अपनी इच्छा पूर्वक सृष्टि रचनेलगे।

आविर्बभूवुः सर्वादौ पुंसो दक्षिण पार्श्वतः ॥
भवकारण रूपाश्च मूर्तिमन्तस्त्रयो गुणाः ॥ ३ ॥

तव सृष्टिके आदिमें परमपुरुष भगवान कृष्ण चन्द्रके दक्षिण पार्श्व से संसारके उत्पत्ति के कारण रूपमूर्ति वाले तीन सत्वरजस्तम गुण उत्पन्न भये (श्लोक) ततोऽहानहंकारः पञ्च तन्मात्र एवच ॥ रूपरसगंध स्पर्शशब्दा श्चैवेति सङ्गकाः ॥ ४ ॥

तिस्के पीछे महतत्व छः अहंकार पृथ्वी जल तेज वायु आकाश तथा इनके रूपरस गंध शब्द स्पर्श उत्पन्न भये

आविर्बभूव तत्पश्चात्स्वयं नारायणः प्रभुः ॥
श्यामो युवा पीत वासा वनमाली चतुर्भुजः ॥

तिस्के पीछे स्वयं नारायण जलशायी सबके प्रभुः श्याम वर्ण वाले १६ वर्षकी समान अवस्था हे जिसकी ऐसे युक्त पीत वस्त्र धारी कण्ठसे लेकर पैरपर्यंत पत्र पुष्पों की रची हुई मालाके धारन करने वाले चतुर्भुज रूप नारायण उत्पन्न हूये

शंख चक्र गदा पद्मधरः स्मर मुखाम्बुजः। रत्न भूषण भूषाढ्यः शार्ङ्गी कौस्तुभ भूषणः

शंख चक्र गदापद्म के धारण करने वाले मंद२ हाँसी करकेयुक्त जिनका मुख कमल है रत्नजटित अलङ्कारों से भूषित कौस्तुभ रत्न शार्ङ्ग धनुषकर्के जो सहित हैं ॥

सौतिरुवाच)

आविर्बभूव तत्पश्चादात्मनो वामपार्श्वतः ॥
शुद्धस्फटिक संकाशः पञ्च वक्त्रो दिगम्बरः ॥

तिसके पीछे श्रीकृष्णचन्द्र के वाम भागसे श्वेत स्फटिक के समान कान्ति वाले दिशारूपी वस्त्रों कर्के सहित पञ्चमुखी महादेव उत्पन्नहूऐ

तप्त काञ्चन वर्णाभ्यां जटाभार धरोवरः ईषद्धास्यप्रसन्नास्य स्त्रिनेत्रश्चन्द्रशेखरः ॥ त्रिशूल पट्टिशधरो जप माला करः परः । सर्व सिद्धेश्वरः सिद्धो योगीन्द्राणां गुरोर्गुरुः । मृत्यो र्मृत्युरीश्वरश्च मर्त्य मृत्युं जयः शिवः ॥

(सौतिरुवाच)

तप्त सुवर्ण कान्ती सुन्दर जटाके भार जिनके शोभित है मंद हंसने से प्रसन्न तीन नेत्रों वाले चन्द्रकी कला जिनके मस्तक में हैं त्रिशूल पट्टिश शस्त्र जपके वास्ते रुद्राक्ष माला के धारण कर्के परमेश्वर सब सिद्धोंके ईश्वर स्वयंसिद्ध योगी

न्द्रोंके गुरुवों के गुरू मृत्यु के जीतने वाले शिवजी उत्पन्न भये श्रीकृष्णचन्द्रजी के शरीर से शिवजी उत्पन्न हुए ।

अथ टिप्पणी ।

शिवजी के उत्पन्न होने के बाद भगवान कृष्णचन्द्रजी ने प्रकृति कूं उत्पन्न कीया गोलोक में श्यामसुन्दर की स्तुति दुर्गा भी करके बैठ जाती भई ॥ इति ॥

❀ सौतिरुवाच ❀

श्लोक–आविर्बभूव तत्पश्चात् कृष्णस्यनाभिपङ्कजात्
महातपस्वी वृद्धश्च कमंडलु करोवरः ॥

टी०–तिसके पीछे श्रीकृष्णचन्द्र के नाभि कमल से वृद्ध तपस्वी कमंडलु धारी कला पैदा हुये ।

श्लोक–तपसा फलदाताच प्रदाता सर्वसम्पदाम् ।
स्रष्टाविधाता कर्त्ताच हन्ताच सर्व कर्मणाम् ॥

टी०–सम्पूर्ण सृष्टी के रचने वाले तपके फलदाता सर्व सम्पतिदाता स्थिति संहार के हेतु ।

टिप्पणी ।

ब्रह्मा शिव आदिक के उत्पन्न होने के बाद कामदेव धर्मराज आदिकों की उत्पत्ति होती भई तहां सब देवी देवता भगवान श्रीकृष्ण चन्द्रकी

स्तुति पृथक २ करके विराम होते भये तत्पश्चात् श्रीकृष्णचन्द्र शिवजी से कहते भये।

(श्रीभगवानुवाच)

श्लोक-मत्सेवां कुरुसर्वेश शर्व सर्व विदाम्वर।
कल्पकोटि शतं यावत् पूर्ण शश्वदहर्निशम् ॥

भा०-अनन्तर श्रीकृष्णचन्द्र शिवसे बोले हे सर्व देवों में श्रेष्ट सर्वेश्वरकोट कल्पके सैंकडे पर्य्यंत तुम हमारी रात्रि दिन सेवा करो।

श्लोक-वरस्तपस्विनां त्वंच सिद्धानां योगिनांतथा
शान्तीनां वैष्णवानांच सुराणांच सुरेश्वर ॥

भा०-आप तपस्वियों में तथा योगियों में सिद्धों में ज्ञानियों में वैष्णवों में देवताओं में श्रेष्ट होवेंगे।

श्लोक-अमरत्वं लभ भव भव मृत्युं जयोमहान्
सर्व सिद्धिंच वेदांश्च सर्वज्ञत्वं च मद्वरात् ॥

भा०-श्रीकृष्णचन्द्र बोले हे ! शिव मेरे वर से तू अजर अमर भया और मृत्यु के जीतने वाला होवेगा और सर्व वेदों के जानने वाला तथा सर्व सिद्धि तेरे में निवास करेंगी मेरे वर करके।

श्लोक-असंख्य ब्रह्मणांपातं लीलयावत्स द्रक्ष्यसि
अद्यप्रभृतिज्ञानेन तेजसावयसा शिव ॥

भा०-हेवत्स मेरे वरसे तू असंख्यों ब्रह्मा का क्षय

देखेगा और आज से लेकर ज्ञान में तेज में पराक्रम कर्के अवस्था कर्के यश कर्के मेरे समान ही होवेगा ॥

श्लोक–पराक्रमेण यशसा महसा मत्समो भव ।
प्राणानामधिकस्त्वंच नभक्तस्त्वत्परोमम ॥

भा०–पराक्रम कर्के महत्व कर्के हे भव मेरे समान होवेगा तू मेरे प्राणों से अधिक प्रिय हैं तेरे समान प्रिय और मेरा कोई भक्त नहीं है ॥ इति ॥

टिप्पणी ।

इसी तरह से श्रीकृष्णचन्द्र ने अन्य देवी देवतों को वर प्रदान दिया विस्तार भय से मैंने नहीं लिखा ज्यादा देखना हो तो ब्रह्म खण्ड में देख लेना फिर श्रीकृष्णचन्द्र प्रकृति से बोले कि हे प्रकृति मेरी आज्ञा से तू शिवकूं अपना पति बनावो कालान्तर में तू दक्षकी कन्या होवैगी सती तेरा नाम होवैगा ।

अथ ब्रह्म वैवर्त्त पुराणे गणेश खण्डे
श्री गणेशोक्ति परशुराम के प्रति ।

श्लोक–यदा सृष्ट्युन्मुखः कृष्णः ससृजे प्रकृतिं मुदा
तद्योनौ द्युपितं वीर्य्यं वीर्य्या ड्डिम्भो बभूवह ॥
दिव्येन लक्षवर्षेण गर्भाड्डिम्भो विनिर्गतः

तदाचकार निश्वासं ततोवायु र्बभूवह ॥२॥
निश्वासेन समंभ्रान्त मुखविन्दु र्विनिर्गतः
ततो बभूव सहसा जलराशि र्हरेः पुरः॥३
तज्जलेच स्थितो डिम्बो दिव्यं वर्षंच लक्षकम्
ततोवभूवसहसा विश्वाधारो महाविराट् ॥४॥
पतन्ति गात्रलोमानि तस्यसन्ति महात्मनः
ब्रह्माण्डानिच तावान्ति विद्यमानानि निश्चितम्
तत्रैवप्रति ब्रह्माण्डे ब्रह्म विष्णु महेश्वराः
देवाश्च मुनयश्चैव विद्यमानाश्चराचराः॥
महाविराटश्च यश्च सर्वस्यच जनस्यच ।
निश्वास वायुर्भगवान् बभूव श्री हरेर्मुने ॥
महाविष्नु कला पतिताः क्षुद्रविराट् बभूवह
तन्नाभि कमले ब्रह्मा शंकरस्तत्ललाटजः ॥
विष्नुर्ददर्श वातायः श्वेतद्वीप निवासकृत्
एवन्ते प्रतिब्रह्माण्डे ब्रह्मादिमहेश्वराः ॥

टिप्पणी ।

भगवान् कृष्णचन्द्रकी आज्ञा से ब्रह्माने हजार वर्ष तप करने पश्चात् अपने मन से चार पुत्र उत्पन्न किये ।

श्लोक-सनकश्च सनन्दश्च तृतीयश्च सनातनः।
सनत्कुमारो भगवांश्चतुर्थो ज्ञानिनांवरः ॥

(ब्रह्मोवाच)

सृष्टिं कर्तुं महाभागो महाभागवतान्द्विज
ययुस्तेच न तत् कृत्वा तप्तु कृष्णपरायणाः।
नारदपञ्चरात्रे श्रीमहादेवोक्ति।
श्लोक–द्विभुजः सोऽपिगोलोके वभ्राम रासमण्डले।
गोपवेशश्च तरुणो जलदश्याम सुन्दरः॥१॥
श्लोक–कोटीन्दु सदृशः श्रीमांस्तेजसा प्रज्वरलान्नि
वा अतीव सुख दृश्यश्च कोटि कंदर्प निंदकः ॥२॥
दृष्ट्वा शून्यं सर्व विश्वं ऊर्ध्वाधो ऽपितुल्यकम्।
सृष्टुन्मुखश्च श्रीकृष्णः सृष्टिं कर्तु समुद्यतः ॥ ३ ॥
एकईशः प्रथमतो द्विधारूपःवभूवसः। एकास्त्री वि-
ष्णु माया या पुमानेकः स्वयंविभुः ॥४॥ सचस्वेच्छा
मयः श्यामः सगुणो निर्गुणः स्वयं।तांदृष्ट्वा सुन्दरीं
लीला रतिं कुर्तु समुद्यतः ॥ ५ ॥ एतदन्तेतदुदरे
वीर्याधानं चकारसः ॥ गर्भंदधार सा देवी यावद्वै
ब्रह्मणे वयः ॥ ६ ॥ भूरि श्रमेण कृष्णस्य गात्रे धर्मो
वभूवह। अधः पपात ताद्धिन्दुः कणएवच नारद॥७॥
दधार तज्जले शून्ये नित्यं वायुश्च योगतः। तदेव
प्लावयामास विश्वे चोरासि सर्वतः ॥ ८ ॥ रासेस
भूय तरुणी मादधार हरेः पुरः तेन राधा समाख्या-
ता पुरा विद्भिश्च नारद ॥ ९ ॥ कृष्ण वामांश

सम्भूता बभूव सुन्दरी पुरा। यस्याः शतांश कलया बभूवुर्देव योषितः ॥ १० ॥ राशब्दोच्चारणाद्भक्तो भक्तिं मुक्तिं चराति सःधाशब्दोच्चारणेनैव धावत्येव हरेः पदम् ॥ ११ ॥ सुधाव डिम्भंसा देवी रासे वृन्दावने वने। दृष्ट्वा डिम्भकुधा राधा प्रेरयामास पादतः ॥ १२ ॥ पपात डिम्भ स्तोयेच द्विखण्डश्च बभूवसः।डिम्भान्तरेच यो बालो महाविष्णुः सएवहि ॥ १३॥ तल्लोम विवरेष्वेव ब्रह्मांडानि पृथक् पृथक् प्रत्येकं मायया सख्यं डिम्भस्याप्यभवत् पुरा ॥१४॥ विश्वान्येवंहि भूरीणि तेषा मभ्यन्तरे मुने ! बभूवुः क्रमतस्तानि प्रत्येकंच पृथक् पृथक् ॥१५॥ इत्येवं कथितं विप्र राधिका रव्यान मेवच, गोपनीयं पुराणेषु स्वादु स्वादु पदे पदे ॥ १६ ॥ जन्म मृत्यु जरा व्याधि हरंमोक्ष करं परम्।हरिदास्य प्रदंतस्य भक्तिदं शुभदं शुभम् ॥ १७ ॥ सर्वंते कथितं वत्स ! यत्ते मनसि वाञ्छातिम्! यथा श्रुतं कृष्ण मुखात् किंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १८ ॥

अथ पञ्चरात्र व्याख्या ॥

पञ्चरात्र मिदं ब्रह्मन् पञ्च संवाद मेवच यत्र पंचावेधं ज्ञानं त्रिषुलोकेषु दुर्लभम् ॥ २ ॥ कृष्णेन ब्रह्मणे दत्तं गोलोके विरजातटे! निरामये ब्रह्मलोके

मह्यं दत्तंच ब्रह्मणा । पुरासर्वादि सर्गेच सर्वज्ञान प्रदम् शुभम् ॥ यथा तुभ्यं प्रदत्तंच ज्ञानामृत मभीप्सितम् ॥ ३ ॥ त्वमेव वेदव्यासाय पश्चाद्दास्यसि निश्चितम् व्यासो दास्यति पुत्राय निर्जनेऽपिशुकायच ॥ ४ ॥ लक्ष श्लोकमिदं शास्त्रंश्री कृष्णेन कृतं पुरेत्यादि ॥ सारभूतंच सर्वेषां वेदानां परमाद्भुतम् । नारदीयं पञ्चरात्रं पुराणेषु सुदुर्लभम् ॥ ५ ॥ सर्वान्तरात्मा भगवान् ब्रह्मज्योतिः सनातनम् ॥ परि पूर्णतमः श्रीमान् यथा कृष्णः सुरेषुच ॥ ६ ॥ सनत्कुमारो भगवान् मुनीनां प्रवरोयथा ॥ बृहस्पति र्बुद्धिमतां सिद्धानां कपिलो यथा ॥ ७ ॥ योगीन्द्राणां सतां शुद्ध ऋषि र्नारायणो यथा । कवीनांच यथा शुक्रः पण्डितानां बृहस्पतिः ॥ ८ ॥ सरिताञ्च यथा गङ्गा समुद्राणांञ्च जलार्णवः ॥ वृन्दावनं वनानाञ्च वर्षाणां भारतं तथा ॥ ९ ॥ पुष्करं तत्र तीर्थानां पूज्यानां वैष्णवो यथा ॥ आत्माकाशो यथाक्षानां पत्राणं तुलसी यथा ॥१० ॥ मन्त्राणां कृष्ण मन्त्रश्च यथा विद्याधनेष्वपि । तथा तेजस्विनां सूर्य्यो मिष्टानाममृतं यथा ॥ ११ ॥ आधाराणाञ्च स्थूलानां महा विष्णु र्यथा सुत । सूक्ष्मणां परमाणुश्च, कृष्णो मन्त्र तन्त्रदः ॥ १२ ॥ सौ-

भार्य्यासु सुन्दरीषु राधा कृष्ण प्रियासुच । हनूमान् वानराणाञ्च पक्षिणां गरुडस्तथा ॥ १३ ॥ वाहनानांच बलवतां शंकरस्य यथा वृषः । शालग्रामश्च यन्त्राणां पूजासु कृष्ण पूजनम् ॥ १४ ॥ एकादशी व्रतानांच तपः-स्वनशनं यथा ॥ यज्ञानां जप यज्ञश्च सत्यं धर्मेषु पुत्रक ॥ १५ ॥ शुशीलंच गुणीनांच पुराणेषु कृष्ण कीर्तनम् ॥ शोभासु सुख दुःखेषु प्रभातेजः सुसर्वतः ॥ १६ ॥ सुदर्शनंच शस्त्राणां विश्वकर्माच शिल्पिनाम् ॥ धर्मिष्ठेषु दया वत्स देवर्षिषु महत्सुच ॥ १७ ॥ कृष्ण भक्तेषु विज्ञेषु यथैव नारदो मुनिः ॥ एवंच सर्वशास्त्रेषु पंचरात्रेषु पूजितम् ।

(टिप्पणी)

प्रश्न महाराज ! तन्त्र शास्त्र का कोई २ खण्डन कीयाहै तथा पुराणान्तरोंमेंभी खण्डन लिखाहै (उत्तर) मूर्खोंके खण्डन करने से सर्व तन्त्र शास्त्र का खण्डन नहीं होसक्ता है क्योंकि पुराणोमें तमोगुणी तन्त्र पाशुपतादिक तन्त्र का खण्डन लिखा है सो हम अगाडी पद्मपुराण का प्रमाण लिखेगें और नारद पञ्चरात्र तथा सनत्कुमार तन्त्र गोतमी तन्त्र संममोहन तन्त्र उर्द्धाम्नाय तन्त्र यह सात्विक

तन्त्र हैं इस वास्ते ये मानने योग्य हैं यदि इन में भी राजस तामस वाक्य होंय तो त्यागना चाहिये केवल सतो गुणी वात माननी चाहिये वैदिक और तान्त्रिक दोनों उपासना लिखी हैं सो श्री मद्भागवत में उद्धवके प्रति श्यामसुन्दर ने कहा है !

(श्री भगवानुवाच)

श्लोक–यत्रावलि विधानंच सर्ववार्षिक पर्वसु। वैदिकी तांत्रिकी दीक्षा मदीय व्रतधारणम् ॥ ४ ॥

प्रश्न–महाराज आपने कहा कि राजस तामस वाक्य त्यागना चाहिए सो वेदशास्त्रके आधे वाक्य मानें आधे न मानें तो उसको अर्द्धनास्तिक कहते हैं ॥

उत्तर–हम कोई अपनी युक्ति से नहीं कहते हैं येतो साक्षात् अनेक कोटि ब्रह्मांड नायक परमात्मा श्रीकृष्ण चन्द्रने उद्धव के प्रति कहा है ११ एकादशस्कंध में !

(श्री भगवानुवाच)

अणुभ्यश्च महद्भ्यश्च शास्त्रेभ्यः कुशलोनरः
सर्वतः सारमादद्यात् पुष्पेभ्यइव षट्पदः ॥१॥

भा०–शास्त्र छोटा होय अथवा बडा होय बुद्धिमान पुरुष को चाहिये उसकी सार वस्तु को ग्रहण

करै जैसे कि भ्रमर कंटक डाली पत्ते आदि छोड़ कर पुष्प से सुगंधि मात्र ग्रहण करता है ॥

ब्रह्म वैवर्त पुराणे श्रीकृष्ण जन्म खंडे श्रीनारायण ऋषि रुवाच नारद के प्रति ।

श्लोक—कृष्णःसृष्ट्युन्मुखश्चापि प्रकृतिं तत्र निर्ममे
निर्माय ताञ्च तद्योनौ वीर्य्याधानं चकारह ॥

भा०—सृष्टि की आदि में श्रीकृष्ण चन्द्रजीने प्रकृति कूं उत्पन्न किया और उस प्रकृति कूं बनाकर वीर्य्यप्रदान किया ॥

ततोडिम्भः समुद्भूतस्तन्मध्येच महाविराट्
महाविष्णुः सविज्ञेयो श्रीकृष्णःषोडशांशकः ॥

भा०—तदनन्तर एकडिम्भ उत्पन्न किया उसी से महा विराट् उत्पन्न हुआ उसी कूं महा विष्नु कहते हैं वही महाविष्नु जलशायी विष्णु भी कहाते हैं तथा महाविष्नु को श्रीकृष्णचन्द्रजी का षोडश अंश वर्णन किया है ॥

टिप्पणी ।

इसी महाविराट पुरुष को सहस्र शीर्षा सहस्र पाद जिसके हजार हूं चरण हजार हूं सिर हैं हजारहूं नेत्र हैं जिस विराट पुरुष के मुख से ब्राह्मण उत्पन्न भये भुजा से क्षत्री उत्पन्न भये वैश्य कटि

से उत्पन्न भये हैं चरणों से शूद्र उत्पन्न भये है जिस विराट पुरुष के रोम में अनेकों ब्रह्माण्ड निवास करते हैं इसी विराट् पुरुष का श्रीमद्भगवत गीता में ११ ग्यारहवें अध्याय में वर्णन आया है सहस्र बाहू भव विश्वमूर्त्ते इत्यादि षोडशवां कला का षोडशवां भाग अंश कहते हैं श्री कृष्णचन्द्रजी ने गीता में कहा है एकांशेन स्थितं जगत्।

हे अर्जुन मेरे एक अंश करके जगत स्थित हैं।

नाभि पद्मोद्भवोब्रह्मा तस्यैव जलशायिनः।

भा०—उसी जल शायी विष्णु की नाभी कमल से ब्रह्माजी उत्पन्न होते भये ब्रह्मा के ललाट से शिवजी उत्पन्न होते भये॥

(टिप्पणी)

यदि इस बातका संदेह करें कि आदि ब्रह्म कल्पमें सर्वसृष्टि की आदि में परमात्मा श्री कृष्ण चन्द्र जी के वामे अंग से शिवजी उत्पन्न होते भये और भगवान्ने अमर करदिया और सर्व सिद्धियों का दाता किया फेर ब्रह्माके ललाट से कैसे उत्पन्न किये जो अजर अमर हैं उस्का उत्पन्न होना फिर बन नहीं सक्ता इसका उत्तर यह है कि श्याम सुन्दर करके वरदान से सर्व सिद्धियां निवा-

स करते हैं अपनी अंसकला करके दूसरे कल्प में ब्रह्माके ललाट से प्रगट हूए तो क्या आश्चर्य्य हैं शिव जी योगि राज हैं एक शरीर से अनेक शरीर धारण कर सक्ते हैं दूसरे ब्रह्माकी भी उत्पत्ति श्री कृष्ण चन्द्र जी की नाभि पंकज से दूसरे कल्प में विष्णु की नाभि कमल से उत्पन्न हुये हैं शिवजी भगवान श्री कृष्ण चन्द्रके वामे अङ्गसे उत्पन्न हूये हैं और ब्रह्माके ललाटसे १ एकादशरुद्रोंकी उत्पत्ति हुई है उन्हींको संहारकर्त्ता लिखा है

तहां यह श्लोक हैं

(टिप्पणी)

हमपीछे प्रमाण लिख आये हैं किमहाविराट् पुरुष के एक २ रोम में क्षुद्र विराट निवास करता है याने अनेक कोटि ब्रह्माण्ड निवास करते हैं एक ब्रह्मण्ड में एकब्रह्म और विष्णु एक महादेव तेतीस कोटि देवता सूर्य्य चन्द्रमा आदि चौदहों लोक *निवास करते* हैं ऐसे २ कोटि कोटि ब्रह्माण्ड हैं श्री कोट्यान कोटि ब्रह्मा विष्णु महादेव हैं परंतु इनका कर्ता परमात्मा श्रीकृष्णचन्द्र एक ही हैं

इति

ब्रह्माच ब्रह्मलोकस्थो विष्णुः क्षीरोद वासकृत्

शिवः कैलासवासीच सर्वे कृष्ण विभूतयः ॥

ब्रह्मलोकमें निवास करने वाले ब्रह्माक्षीर सागरशायी विष्णु और कैलास वासी शिवजी ये तीनों श्रीकृष्ण चन्द्रजी की विभूतियां है

श्रीकृष्णश्च द्विधारूपो द्विभुजश्च चतुर्भुजः ।
चतुर्भुजश्च वैकुण्ठे गोलोके द्विभुजःस्वयम् ॥

श्रीकृष्ण चन्द्रजी के दो स्वरूप हैं एकदो भुजा वाला और एक चतुर्भुजा वाला चतुर्भुज से तो श्रीकृष्ण चन्द्र वैकुण्ठ में निवास करते हैं लक्ष्मी कान्त और गोलोकमें स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र द्विभुज रूपसे याने वंशीलकुट श्रीराधाकान्त निवास करते हैं

महाराज सबकी उत्पत्ति कृपा करके सुनो वैकुंठ वासी श्री नारायण की उत्पत्ति कहो कैसे उत्पन्न भये नारदी पुराणके उत्तर खण्ड के ५७ के अध्याय में वसुने,, मोहनी से कहा है

श्लोक–कदा चित्क्रीडतो देवि राधा माधवयोर्वपुः ॥
द्विधा भूतमभूत्तत्र वामांगे वै चतुर्भुजम् ॥
समान रूपावयवं समानाम्बर भूषणम् ॥ तद्द-
द्राधा स्वरूपश्च द्विधारूप मभूत्सती ताभ्यांदृष्टं
तत्स्वरूपं साक्षात्तावपि तत्समौ । चतुर्भुजन्तु
यद्रूपं लक्ष्मीकान्त मनोहरम्

वसुमोहनी से बोले कि किसी समय गोलोक धाममें श्री राधा माधव रास क्रीडा कररहे थे सो वाम भागसे श्री कृष्ण चन्द्र जीके चतुर्भुजरूप नारायण प्रगट होगये श्यामसुन्दर के शरीर सदृशही जिनकी अवस्था है समान ही जिन्होंने भूषणधारण कीये हैं लक्ष्मी कान्त मनके हरनेवाले इसी प्रकार श्री राधिकाजी दोस्वरूप होजाती भई याने उनके वामे अंग से लक्ष्मी उत्पन्न होती भई ऐसेही नारद पञ्च रात्रमें भी लिखा है

राधा वामांश सम्भूता महालक्ष्मीःप्रकीर्तिता।
ऐश्वर्याधिष्टात्री देवी सरस्वत्येव नारद ॥

भा०—शिवजी कहते हैं कि हे नारद। श्रीराधाजी के वामांग से महालक्ष्मी उत्पन्न होती भई और ऐश्वर्य्य की अधिष्टात्री देवी सरस्वती उत्पन्न होती भई हे नारद।

तदंशा सिन्धुकन्याच क्षीरोद मथनोद्भवा
मर्त्य लक्ष्मीश्च सा देवी पत्नीक्षीरोद शायिनः

भा०—महालक्ष्मी के अंश से क्षीरोद मथन द्वारा सिंधु कन्या मृत्यु लोक की लक्ष्मी जलशायी भगवान विष्णु की पत्नी उत्पन्न हुई।

तदंशा स्वर्ग लक्ष्मीश्च शक्रादीनां गृहे गृहे
स्वयं देवी महालक्ष्मीः पत्नी वैकुण्ठ शायिनः ॥
तिनके क्षीर शायी विष्णु की लक्ष्मी के अंशांश करके स्वर्गलक्ष्मी उत्पन्न होती भई जो इन्द्रादिकों के घरमें निवास करती है औरस्वयं देवी महालक्ष्मीने वैकुण्ठ वासी नारायण की पत्नी है जो श्रीराधाकाजी के वामेंअंगसे उत्पन्न भई हैं पीछे लिख आयेहैं तथा ब्रह्मवैवर्त्त पुराणोंमें भी ऐसेही लिखाहै।

राधावामांश भागेन महालक्ष्मी र्बभूवसा।
तस्याधिष्ठात्री देवी गृह लक्ष्मी र्बभूवसा ॥
चतुर्भुजस्य सापत्नी देवी वैकुण्ठ वासिनी
तदंशा राजलक्ष्मीश्च राजसम्पत् प्रदायिनी
तदंशा मर्त्त लक्ष्मीश्च गृहिणांच गृहेगृहे
दीपाधिष्टात्री देवी साचैव गृहदेवता
स्वयं राधाकृष्ण पत्नी कृष्ण वक्षस्थलस्थिता
प्राणाधिष्ठात्री देवी च तस्यैव परमात्मनः ॥

स्पष्टहै इस वास्ते टीका नहीं किया।

पद्म पुराणके पातालखन्ड प्रथमाध्याय में भी लिखा हैं

वैकुण्ठादि तदंशांशं स्वयं वृन्दावनं भुवि।
गोलोकैश्वर्य्यं यत्किंचिद्गोकुले तत्प्रतिष्ठितम्।

वैकुण्ठ वैभवं यद्वै द्वारकायाम् प्रतिष्ठितम् ।
नखेन्दु किरण श्रेणी पूर्ण ब्रह्मैक कारणम् ।
केचिद्वदन्ति तस्यांशं ब्रह्म चिद्रूप मव्ययम् ।
तदशांशं महाविष्णुं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥
तत्कला कोटिकोट्यंशा ब्रह्मविष्णु महेश्वराः
सृष्टि स्थित्यादिना युक्ता स्तिष्टन्तीहवैभवा ः॥
तद्रूप कोटि कोट्यंशाः कलाः कंदर्प विग्रहाः
जन्ममोहं प्रकुर्वन्ति तदंडान्तर संस्थिताः ।
तद्देहविलस त्कान्ति कोटि कोट्यंश कोविभुः
तत्प्रकाशस्य कोट्यंश रश्मयो रवि विग्रहाः ॥
तस्य स्वदेह किरणैः परानन्द रसामृतैः
परमा मोदचिद्रूपै र्निर्गुणस्यैक कारणैः ॥
तदंश कोटि कोट्यंशा जीवन्ति किरणात्मकाः
तदंघ्रि पंकज द्वंद नखचन्द्र मणि प्रभाः ॥
आहुः पूर्ण ब्रह्मणोपि कारणं वेद दुर्गमम्
तंदश सौरभानंत कोटयंशो विश्वमोहनः ॥
तत्प्रिया प्रकृतिस्त्वाद्या राधिका कृष्णवल्लभा
तत्कला कोटि कोट्यंशा दुर्गाद्याश्त्रिगुणात्मिकाः॥
तस्याङ्घ्रि रजसः स्पर्शात्कोटि विष्णुः प्रजायते ।

अथ संक्षेपसेटीका ।

तिन श्रीकृष्णचन्द्र की कान्ति से कोट्यानु कोटि चतुर्विभु समर्थ है और उनकी श्रीकृष्णचन्द्रजी के प्रकाशके कोट्यंश से सूर्य्य प्रकाश कररहा है तिन श्याम सुन्दर के स्वदेहके प्रकाशरूप आनन्द रूपामृत रस सच्चिदानंद निर्गुण ब्रह्मके भी कारण हैं उन्ही श्रीकृष्ण भगवानके कोटि अंश से कोटि अंशके अग्नि आदिक प्रकाश करते हैं और श्यामसुन्दर के दोनों चरण कमलोंकी नखचन्द्र मणि प्रभारूपपक्ति पूर्ण ब्रह्मका कारण भी वेद कथन करतेहैं जोकि योगियों कोभी अत्यन्त दुर्गम हैं उन्हीं श्रीकृष्णचन्द्र के अंश सुवास के भागसे संसारको मोहन करने वाले सुगंधादि उत्पन्न होते हैं और जिन श्रीकृष्णचन्द्रजी की प्रिया आदि प्रकृति श्रीराधिकाजी हैं तिन राधिकाजीके अंशकलासे कोटि२ त्रिगुणात्मक देवी दुर्गा सरस्वती आदि उत्पन्न होती हैं और श्रीराधिकाजीके चरण रज स्पर्शसे कोटियों विष्णु उत्पन्न होते हैं इति ऐसा महर्षि जन कथन करते हैं ।

"तथा नारद पञ्चरात्रे शिव उवाच"

श्रीकृष्णो जगतां ताता जगन्माताच राधिका ।
पितुः शत गुणा माता वन्द्या पूज्या गरीयसी ।

भाः—श्रीकृष्णचन्द्रजी तो जगतापिताहै श्रीराधिकाजी जगतकीमाताहै पितासे१००गुणा माता पूजनीयहै और वन्दनीय है

भेदका नरकं यान्ति यावच्चन्द्र दिवाकरौ
तयो भेदं करिष्यन्ति येच निन्दन्ति राधिकाम् ।
कुम्भीपाकेषु पच्यन्ते यावदब्रह्मणो वयः ॥

श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् और राधिकाजी में भेद मानने वाले पुरुष सूर्य्य और चन्द्र की स्थिति पर्य्यंत नरकमें वास करते हैं और जो उन में भेद मानते हैं और श्री राधिकाजी की निन्दा करते हैं वह मनुष्य ब्रह्माकी आयु पर्य्यंत कुम्भी पाक नरक में पचतेहैं यानी उसमें यातनाओं को सहते हैं

ब्रह्मवैवर्त पुराणे श्रीकृष्ण जन्म खण्डे

श्रीनारायण उवाच

गोलोके द्विभुजंशान्तं राधाकान्तं मनोहरम् ।
शिशु रूपं गोप वेषं परिपूर्णतमं विभुम् ॥

भाः—श्रीनारायण मुनि कहतेहैं कि हे नारद जो पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द स्वामीने गोलोक में दो भुजी रूप धारण किया हैं और शान्तस्वभाव और श्रीराधिकाजी के कान्त और मनोंको हरण करने वाले और सर्वदा १५ बर्ष के सदृश

अवस्था में रहने वाले और वृन्दावन में जिन्होंने गोप बेष धारण किया है और तीनोंगुणोंसे जो परे हैं ऐसे परिपूर्णतम सर्व व्यापक सत्चिद् आनन्द कन्द श्रीकृष्णचन्द्रजी का भजन करो

महादेव उवाच "पञ्च रात्रे,,

भजे सत्यं परब्रह्म राधेशं त्रिगुणात्परम् !
नैव कृष्णात्परो देवो नैव कृष्णात्परः पुमान् !!

भाः-हे नारद! सत्य जो परब्रह्म परमात्मा श्री कृष्णचन्द्र और श्रीराधिकाजी यह तीनों गुण से परे हैं श्रीकृष्णचन्द्रजी से परे अन्य कोई देव नहीं और न कोई श्रीकृष्ण से परे अन्य पुरुष है वही पुरुषोत्तम है अतः उनका ही भजन करो यह मेरा सिद्धान्त है। (श्री मद्भगवद्गीता (

मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्ति धनञ्जय?
मयि सर्व मिदं प्रोक्तं सूत्रे मणिगणा इव

हे अर्जुन मेरे से परे अन्य कोई भी कारण नहीं है सम्पूर्ण जगत मेरे करके व्याप्त है जैसे सूत्र में मनके पोहे होते हैं माला के ऐसे तू मेरे जान

ब्रह्मवैवर्त पुराणे श्रीकृष्ण जन्म खन्डे नन्द प्रति

श्रीकृष्णउवाच

सर्व कारण रूपोहं नचमत्कारणं परम् ॥

श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् बाबा नन्दजी से कहतेहैं कि मैं सब कारणों का भी कारण रूपहूं मेरे से परे और कोई कारण नहीं है

"ऋक् परिशिष्ट श्रुतिः;;

राधया माधवो देवो माधवेनैव राधिका

भाः-श्री राधिकाजी करके श्रीकृष्णचन्द्र शोभायमानहैं और श्री कृष्णचंद्र करके श्रीराधिकाजी शोभायमान है भक्तजनों को दोनों स्वरूपों की उपासना करनी चाहिये

श्रीगोपाल चक्र चूणामणि—
नाम्नि ग्रंथे तपस्वि रामचरणदास
विरचित द्वितियो ऽध्यायः
समाप्तः

हे राधे वृषभानु भूपतनये ! गांधर्विके राधिके ! हे कृष्णानन पंकज भ्रमरिके ! कृष्ण प्रिये माधवि ! हे ! वृन्दावन नागरी गुण गृहे दामोदर प्रेयसि! हे हे श्री ललितादिक प्रिय सखि प्राणाधिके पाहिमाम् ॥१

हे राधे वृषभानु भूपतनये हे पूर्ण चन्द्रानने,हे कान्ते कमनीय कोकिलरवे,वृन्दावना धीश्वरि ! हे मत्प्राणपरायणे मुरभिके हे सर्व यूथेश्वरि, मत्स्वा-न्ताब्जवरासने विशमुदा मांदीन मानन्दय।हे श्यामे कलधौत कान्तरुचिरे, हे कीर्ति देवी सुते, हे

गंधर्वकला निधीते सुभगे हे सिन्धु कन्यार्चिते
हे कृष्णानन पंकज अलिके दामोदरप्रेयसि ;
मत्स्वान्ताब्ज वनाग्नेविशमुदा ॥३॥ हे वृन्दावन
नागरी गुण युते कस्तीर सुवांकिते, रक्तालक्तक
चर्चितांघ्रि कमले हे चारु बिम्बाधरे; सुस्तादामविभू-
षितांगलतिके हे नीलशारी व्रते;मत्स्वान्ताब्ज वरा
सनेविशमुदामादीनमानन्दय॥४॥हेचन्द्रावलि सेवितेषु
लालिते भद्रा रमा वन्दिते, पद्मा चम्पकमालिका
मुखदे हे तुंग भद्रा प्रिये । हे तन्वाङ्गि, मृगाक्षिचारु
जघने हे रङ्ग मंजरीके । मत्स्वान्ताब्ज ॥५॥
रक्ताम्भोज चकोर मीलनयने हे स्वर्ण कुंभस्तनि!
फुल्लांभोज करे विलासिनि रमोयन्द्राणि संराधिते।
हे वृन्दावन कुंजि के चलितुरे हे मान लीलाकरे ।
मत्स्वान्ताब्ज ॥६॥ हे काञ्च्यादि विभूषितोरु
रुचिरे हे मन्द हास्याननें । गो लोकाधिप कामके
लिसिके हे गोकुले प्रिये । कालिन्दी तट कुंज
वासनिरते हे शुद्धभाव प्रिये । मत्स्वान्ता ब्ज०
मुक्तागावित पादपद्म युगले हे पार्वतीशेश्वरी । श्री
मन्नन्द कुमारमा रजनिके नीलालकावृन्मुखे श्रीराधे ?
मम सव्यमात चरणे !रामानुजा नन्दिनि-आगत्य त्व-
रितं निकुंजभवने मांदीनमानन्दय ॥ ८ ॥

समाप्तोयम ष्टकः०॥

ॐ श्रीहंसगोपालाय नमः

श्रीविष्णु भगवान् की नाभिकमलसे ब्रह्माजी उत्पन्न होते भये सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्माके मनसे मानासिक ४पुत्र उत्पन्न हुऐ सनकसनन्दन सनातन सनत्कुमार यह मानासिक सृष्टि अर्थात् ब्रह्माके मन से उत्पन्न हुऐ श्रीमद्भागवतमें इनको शुकदेवजीने भगवतका अंश वर्णन किया तहां गृहस्थ धर्म्म को अङ्गीकार नहीं किया वैष्णव धर्म्म के मुख्य आचार्य्य नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्री हंसगोपाल के शिष्य होते भये फिर ब्रह्मा के अंगुष्ठ से श्रीनारदजी उत्पन्न होते भये श्री नारदजी ने गृहस्थी धर्म्म कुनहीं अङ्गीकार किया और सनत्कुमारजी के शिष्य होते भये नैष्ठिक ब्रह्मचारीब्रह्माजी और पुत्र उत्पन्न होते भये भृगुमरीच आदिक जिन्होंने गृहस्थी धर्म्मकुं अङ्गीकार किया इनकी पुत्र पौत्र करके संसार में संतति वर्तमान है सनत्कुमार नारद आदिकों की संतति शिष्य प्रति शिष्य करके वर्तमान है निम्बार्क सम्प्रदाय अनुगामी विरक्त वैष्णवे? श्री मद्भगवत गीता में भी श्री कृष्ण चन्द्रजीने कहा है

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा।
मद्भावा मानसा जाता येषांलोक इमाः प्रजाः ॥

भाः—सप्तमहर्षि भृगुमरीच्यादि तिनसे पूर्व सनन्द नादि ४ मानव मेरे हिरण्य गर्भात्मक रूपसे मनसे उत्पन्न होते भये यहमरीच्यादि ऋषियों के पुत्र पौत्रादि रूप प्रजा वर्तमान है सनक सनन्दनादि महर्षियों के शिष्य पर शिष्य करके सन्तति श्री निम्बार्क सम्प्रदायानुगामी वैष्णव वर्तमान है। इति

प्रश्न

महाराज हंस भगवानने सनकादिकों को उपदेश किया ऐसा कोन ग्रंथमें लिखा है सोकहो श्रीमद्भागवत के ११ एकादशस्कंध में श्री कृष्णचन्द्र ने उद्धव के प्रति कथन किया है कि हे उद्धव मेरे शिष्य सनकादिकों ने अपने पिता ब्रह्माजी से आत्मिक प्रश्न करते हुये तो ब्रह्माजीको उत्तर नहीं मिला और ब्रह्माने मेरे को मनसे ध्यान करते हुए तहां मन हंस रूप धारण किया औरब्रह्माजी की सभामें गया तहां ब्रह्मादि देवता मेरे को हाथ जोड कर उठखडे हुए तहां सनत्कुमारने कहाकि,,को भवान् अर्थात् हे भगवन् आप कोन है तहां मैंने उत्तर दिया कि सनत्कुमार तेरा प्रश्नआत्म विषयक है अथवा शरीर विषयकहै यदि शरीरकुं अगाडी करके पूंछता है तब तेरा पूछना मिथ्या है

क्योंकि शरीर सबके पञ्चभौतिकहै यदि आत्माकुँ अगाडी करके प्रश्न करताहै तबभी तेराप्रश्न नहीं बनसक्ता क्योंकि आत्मा एकही है।

श्रीकृष्ण चन्द्रजी बोले किहे ! उद्धव इतना मेरावचन सुनकर सनत्कुमार चारों भाईयोंका अहंकार टूट जाताभया फिर मेरेको प्रणाम करते हुए और मैंने तत्वका उपदेश उनको करते हुए और येमेरे शिष्य होतेभये तत्पश्चात् मैं अपने लोकमें जाताभया। इति

श्रीगोपाल तापनी उपनिषदमें भी लिखाहै

ब्रह्मणो ब्रह्म पुत्रेभ्यो नारदाच्च श्रुतं यथा
तथाप्रोक्तमित्यादि,,

श्री हंस अवतार नारायणजीसे ब्रह्मपुत्र सनन्दनादि मुनियोंने और ब्रह्मपुत्रोंसे नारदने जैसा सुनाहै तैसा हे राधिका गांधर्वी तुमसे कहा।

और नारदजी को उपदेशकिया सनत्कुमार जीने ऐसासनत्कुमार संहितामें लिखाहै श्रीसनत्कुमार जीकुँ हाथजोडकर श्रीनारद जी ने प्रणाम किया कि हे भगवन् । आप सिद्ध आश्रममें निवास करने वाले हों अज्ञानसे मेरेकुँ पार उतारो इति (श्रीसनत्कुमारोउवाच)

अष्टा दशाक्षरं मन्त्रं शृणु वक्ष्यामि नारद
समाहितमना भूत्वा दुर्लभं भुवन त्रये ॥

हे नारद अष्टा दशाक्षर गोपाल मंत्र तेरेको उपदेश करताहूं तुम सावधानचित्त होकर सुनो जो अत्यन्त तीनों लोकमें दुर्लभहै ।

और सनत्कुमार नारद के प्रति उपदेशमें छन्दोग की श्रुति है (श्रीनारदवाच)

त्वंहिनः पिता योस्माक मविद्यायाः परं पारं तारयति श्रुतंह्येवमेव भगवद्देशे भ्यस्तरति शोकात्मा विदिति सोऽहं भगवः शोचामि तन्मां भवाञ्छोकस्य पारंतारयतु तस्मै मृदित कषायाय तमसः पारं दर्शयति,, इत्यादि ।

आपहमारे पिताहै और आप हमको अविद्याके उसपार उतार तेहो आप के सदृश सज्जनोंसे मेने सुनाहै कि आत्मवित् पुरुष शोककुँ तरता हैं हे भगवन् । हम शोककु प्राप्त होरहेहैं आप हमको शोक के पार उतार दो यह वात श्रीनारदजीसे श्रवणकर श्रीभगवान् सनत्कुमार सम्पूर्ण पापोंसे रहित श्रीनारदजीकुँ अज्ञानकुँ पारकुं दिखाते हैं ।

अधीहि भगवो होय ससाद इत्यादि

प्रश्न। महाराज सनत्कुमार जीने नारद मुनिकुं

अष्टादशाक्षर गोपाल मन्त्र का उपदेश किया और सगुण श्रीकृष्ण चन्द्रजीकी उपासनाका उपदेश किया फिर नारदजीको अज्ञान किसतरह पैदा हुआ जो सनत्कुमारजीसे पूछा और छन्दोग उपनिषद में सनत्कुमार जीनें ज्ञान का उपदेश किया क्याकारण नारदजीको सगुण ब्रह्मकी उपासनाक-रनेसे चित्तकीशान्ति नहीं हुई जो उन्होने फिर सनत्कुमारसे ज्ञान पूछा (उत्तर) श्रीनारदमुनि भगवतके अवतारहै और पंचरात्रके करीहैं और श्रीकृष्णचन्द्र आनंदकंद के प्रियदास हैं उनको अज्ञान कोई दशामें नहीं होसक्ता परंतु लोक शिक्षार्थ नारदजीने अज्ञानी बनकर सनत्कुमारसे ज्ञानपूछा जैसे कि उद्धव भक्ततो श्रीकृष्ण चन्द्रजी का परम भक्तथा उसकी मुक्तीहोनेमें क्या संदेह था क्यों कि मुक्ति तो श्रीकृष्णचन्द्र ने पूतना राक्षसीकु दई जो उनको प्राण मारनेकुँ गईथी और उद्धवतो भगवद् भक्तथा जन्म भर श्याम सुन्दर की सेवा की थी उसकी मुक्ती होनेमें क्या संदेहथा वोतो मुक्ति रूप हीथा परन्तु लोकशिक्षार्थ उद्धव का निमित्त करके श्रीकृष्णचन्द्र जीने विश्वके लिये उपदेश किया कि संसारी जीव मेरा अमृत

रूपी ज्ञान श्रवण यामनन करके भवसागर पार उतर जावेगें सो श्रीभागवत एकादश ११ स्कंध में लिखाहै इसी तरह श्रीमद्भगवत गीतामें अर्जुन को उपदेश ब्रह्म विद्या का किया श्रीकृष्णचन्द्रजीने अर्जुन का निमित्त करके आम ब्रह्माण्ड का उपदेश किया क्योंकि अर्जुन तो परम प्रिय उनके चरण का दासथा दूसरे नर ऋषिका औतारथा उसकी मुक्ति होनेमे क्या सन्देह था मुक्ति तो श्याम सुन्दरने शिशुपाल आदि कों को दी जो कि उनसे दोषभाव करते थे।

अर्जुन तो श्याम सुन्दरका सखाथा उसकी मुक्ति होनेमें क्या सन्देहथा ग्रंथान्तर में ऐसा भी लिखा है कि यह श्री मद्भगवतगीता श्रीकृष्णचन्द्रजीने ब्रह्मलोकमें ब्रह्माजीको उपदेश किया था फेर नारद दुरवासाने भगवानकी प्रार्थना कि हे भगवन् ब्रह्मविद्या मृत्यु लोक में भी होना चाहिए फिर श्याम सुन्दर ने कहाकि अच्छा किसी समय में मृत्यु लोकमें ब्रह्मविद्याका प्रकाश करेंगे और नारद दुर्वासाका इसी वास्ते भगवानसे प्रार्थना की थी संसारी जीव इसब्रह्म विद्याका श्रवण मनन करके भवसागर से पार उतर जावेंगे क्योंकि

श्रुतीमें कहाहै ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः ज्ञानके विना मुक्ति नहीं होती औरवगेर गीताके विना मुक्ति नहीं होती श्रीकृष्ण चन्द्र जीका जन्म कर्म्म जो लीला आदि केवल संसारी जीवको उद्धारके वास्ते हैं।

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानि र्भवति भारत
अभ्युत्थानमधर्म्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्
परित्राणाय साधूनां विनाशायच दुष्कृताम्
धर्म्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥

क्योंकि संसारमें कोईकर्म्मका अधिकारी होताहै कोई उपासना का अधिकारी होताहै और गुरु के पास जो कोई वस्तु पूछी जावेगी तो अज्ञान ही बनकर पूछी जावेगी कोई बडा बनकर नहीं पूछताहै सो भगवान सनत्कुमारजी साक्षात् पूर्ण ब्रह्म श्रीकृष्णचन्द्रजी की उपासनाका उपदेश करचुकेथे नारदजीने फिर उनको अज्ञान कहा और श्रीमद्भगवत गीतामें श्यामसुन्दर ने ज्ञानसे भक्ति को उत्तम कहाहै।

तेषांज्ञानी नित्ययुक्तः एकभक्ति र्विशिष्यते
ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा नशोचति न कांक्षति
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्ति लभते परम् ॥

(श्रीभागवत में ब्रह्मोवाच)

येतेऽरविद्राक्ष विमुक्त मानिनस्तथाच तद्भा-
व विशुद्ध बुद्धयः आरुह्य कृच्छ्रेण परं
पदम् ततः पतन्त्यधो ऽ अना दृत युष्मद
ङ्घ्रयःतथानते माधव तावकाःक्व चिद्भ्रश्यन्ति
मार्गे त्वयि वद्ध सौहृदाः त्वयाभि गुप्ता विचरंति
निर्भयाविनायकानीकपमूर्द्ध सुप्रभो

हे कमल के समान नेत्र वाले भगवन् अपने आपको विमुक्त मानने वाले और आपके ध्यानसे विशुद्ध बुद्धि वाले अतिकृच्छ्र से परमपदको प्राप्त होकर भी आपके चरणारविन्द का यदि आदर न करै तो वहांसे गिराये जातेहैं हे माधव तथा तेरे भक्त जिन्होंने आपके चरणों में प्रेम किया हुआहै वह उस मार्ग से नहीं गिरते आपसे रक्षाकिये हुऐ निर्भय विचरते है इसमें कोई सन्देह नहीं है

श्रीनिम्बार्क मुनीन्द्रको

श्री नारदजी का शिष्य होने में प्रमाण विष्णु यामल ग्रंथ काहै सोलिखते है

नारायण मुखाम्भोजान मन्त्र स्त्वष्टादशाक्षरः
आविर्भूतः कुमारैस्तु गृहीत्वा नारदायच
उपदिष्टः स्वशिष्याय निम्बार्कायच तेनतु

एवम्परम्परा प्राप्तो मन्त्रस्त्वष्टादशाक्षरः

श्रीनारायण हंस अवतार श्रीकृष्ण चन्द्रके मुख कमलसें अष्टादशाक्षर श्री गोपाल मंत्रका प्रादु र्भाव हुआ तिस मंत्रका श्री सनकादि कुमारोंने ग्रहण किया और श्रीनारदजीको उपदेश किया और श्रीनारद भगवानने अपने शिष्य निम्बार्क को अष्टादशाक्षर श्रीगोपालमंत्रका उपदेश किया इसतरह परम्परासे प्राप्त यह अष्टादशा क्षरमन्त्र है

श्री निम्बार्क मुनिने दशश्लोक में भी कहा है

उपासनीयं नितरां जनैः सदा प्रहाणये ऽज्ञान तमोऽनुवृतेः । सनन्दनाद्यैर्मुनि भिस्तथोक्तं श्रीनारदायाखिलतत्वसाक्षिणे ॥

श्रीपर ब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्ण चन्द्र आनन्द कन्द श्रीराधिकादेवी समेत उपासना करने योग्य है सनन्दादि ऋषियोंने जैसे नारद मुनि को उपदेश किया और तत्व के ज्ञाता श्री नारदमुनि हमारेगुरु महाराज ने जैसे हमको कहा तैसे ही हम सर्व हितार्थ कहते है

अथ गोपाल मंत्र लिख्यते

ॐ क्लींकृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा इति अथ वासुदेव मंत्र ॐ नमो भगवते वासुदेवाय अथ सुदर्शन मंत्र ऊंसहस्राय हो फट्

आचार्य्य चरित्र ग्रंथ में भी श्रीनारदजी ने श्रीनिम्बार्क मुनीन्द्र को भी उपदेश किया है ।

(श्रीनिम्बार्कउवाच)

उवाच भगवान् किम्वा वेदान्तस्य रहस्यकम्
नारदोऽपि तथावोचत छित्वा तत् सर्व संशयम्
जानीहि तत्वं त्रिविधं चेतना चेतनात्मकम्
द्विविधंचेतनं त्वेकविधं प्राहुरचेतनम् ॥
जीवात्मा परमात्मा चेतनत्वेन चेरितः ।
मायादि पद वाच्यं यत्त चेतन मुदाहृतम्॥
परमात्मा एक एव जीवात्मा नेक एवच
जानीह्य चेतनं दृश्यं मायादिपद शब्दितम् ॥
सभेदा भेद सम्बन्धो जगतः परमात्मनः
इति वैदिक सिद्धान्तः सच सर्वर्षि सम्मतः
ततस्तुकथयामास संवादं ब्रह्म सम्मतम्
श्रीहंसस्य कुमाराणां नारदो भगवत्प्रियः ॥

(श्रीमद्भागवते ब्रह्मोवाच)

एकायनोऽसौद्विफल स्त्रिमूलश्चतूरसः
पञ्चविधः षडात्मा सप्तत्वगष्टो विटपो
नवाक्षो दशच्छदो द्विखगोह्यादि वृक्षः

भा०-ब्रह्मा कहते हैं श्रीकृष्णचन्द्रजी से कि हे भगवन् यह संसार आपके ही आधीन है कैसा

यह संसार है आदि वृक्ष स्वरूप है फिर कैसा है एक है प्रकृति आश्रय जिसका और सुख दुःख है फल जिसके सत रज तम यह तीन गुण हैं मूल जिसके और धर्मार्थ काम मोक्ष है रस जिसके पञ्चेन्द्रिय ज्ञान के प्रकार हैं जिसके षट जन्मादि मरण पर्य्यंत स्वभाव और सप्तधातु है त्वचा जिसकी पञ्चभूत मन बुद्धि अहंकारादि आठ शाखा जिसकी ९ और हैं नव छिद्र जिसके और दसवां प्राण है जिसके और जीव ईश्वर दो खग जिसमें बैठे हुये हैं ऐसा यह आदि वृक्ष आप हीके आश्रय है हे भगवन् सो मेरी आपको नमस्कार है।

(अथ श्रुति)

द्वासुपर्णावेतौ सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषष्व जाते । इत्यादि

शरीर रूपी वृक्ष में दो पक्षी बैठे हैं एक जीव आत्मा दूसरा परमात्मा जीव आत्मा सुख दुःख का भोक्ता है और परमात्मा केवल साक्षी रूप है जीव अनेक हैं ईश्वर एक है अणुहि जीवं प्रति भिन्नदेहं जीव के जन्म कर्म प्राकृतिक हैं और परमात्माके जन्म कर्म अवतार आदिकजो हैं वो दिव्य हैं प्राकृतिक नहीं यह श्री भगवद्गीतामें कहा है।

जन्म कर्म्मचमेदिव्य मेवं योवेत्ति तत्वतः
त्यक्त्वादेहं पुनर्जन्म नैतिमामेतिसोऽर्जुन ॥
ब्रह्मवैवर्त्त पुराणे श्रीकृष्ण जन्म खण्डे श्रीकृष्ण उवाच
जीवोमे प्रतिविंवश्च कर्म भोगाधिकारकः
अहंसाक्षी निरीहश्च न भोगी सर्व कर्मसु।

भा०—श्रकृिष्णचन्द्र बोले हे राधिके जीव के संग मेरा प्रतिविम्ब है अर्थात् जीव आत्मा शुभाशुभ कर्म्मों का भोक्ता है और में केवल साक्षी रूप हूं मैं किसी कर्म्मों का भोक्ता नहीं हूं।

भक्तिध्यानार्थ देहोऽयं ममस्वेच्छामयस्यच

भा०—भक्ति ध्यानार्थ यह मेरा शरीर है स्वरूप हीं में अपनी इच्छा से रूपधारण करता हूं कोई में कर्म्म वशीभूत होकर में रूप धारण नहीं करता तहां जीव दो प्रकार के हैं एक नित्य मुक्त और दूसरा वद्ध मुक्त तथा श्री मद्भागवते।

आत्मान मन्यश्च सवेद विद्वान् पिप्पलादोनतु-
पिप्पलादः यो ऽविद्ययायुक् सतु नित्य बद्धो
विद्यामयोयः सतुनित्य मुक्तः ॥

जो परमात्मा ईश्वर साक्षी ज्ञाता है वह अपने स्वरूपको और जीवके स्वरूप को दोनों को जानताहै और जो जीवहै वह न अपनेको न ईश्वरको

जानताहै इसालिऐ वह अज्ञहै इसालिये जो अविद्या सम्पन्न हैं वह बद्धहैं औरजो विद्या सम्पन्न हैं वह मुक्त हैं।

अथवेध मोक्ष जीवके वास्ते हैं
परमात्माका न वेधन है नमोक्षहै श्रीमद्भागवते ११
एकादश स्कन्धे उद्धवंप्रति श्रीभगवानुवांच
बन्धो मोक्षहति व्याख्या गुणमेवन वस्तुतः
गुणस्य माया मूलत्वात् नमे मोक्षो न बन्धनम्
हे उद्धव!बन्धन और मोक्ष मायाके गुणहैं और मेरे को न बन्धन है न मोक्षहैं।

॥ तथा श्रीमद्भगवद् गीतायाम् ॥
द्वाविमौ पुरुषौलोके क्षरश्चाक्षर एवच
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते
उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः
योलोक त्रय माविश्य विभर्त्यव्यय ईश्वर
यस्मात्क्षर मतीतोऽह मक्षरादपि चोत्तमः
अतोऽस्मि लोके वेदेच प्रथितः पुरुषोत्तमः
योमामेव मसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम्
ससर्व विद्भजतिमां सर्व भावेन भारत

महाराज कृपा करके कहो कि गोपाल मंत्र वैदिक है कि तांत्रिक है क्योंकि पंथाई लोग ऐसा

कहते हैं गोपाल मंत्र तांत्रिकहै [उत्तर) किसीने उल्लूसे कहाथा कि दिनको सूरजसे वडा प्रकाश होताहै तहाँ उल्लूने जवाव दिया था कि सव झूठे हैं दिन कोई चीजनहीं दिन होते ही नहीं सूर्य्य है नहीं तहां शोचना चाहिए कि उल्लू के कहनेसे कहीं सूर्य्य का दिनका अभाव होसक्ता है किंतु नहीं पंथाईयोंकी अगाडी पोल जाहिर करेंगे हम। औरगोपाल उपनिषदमें लिखाहै गोपाल मंत्र उप निषद साक्षात् वेदहीहै दूसरे फिर सात्विक तांत्रिकों में भी लिखा है सात्विक तंत्र मन्तव्य हैहीहे श्यामसुन्दर ने कहा है सो प्रमाण पीछे लिखाये हुये हैं (यत्किं चित् प्रमाण)

अष्टादशाक्षरो मन्त्रो व्यापको लोकपावनः
सप्तकोटि महामन्त्र शेखरोदेव शेखरः

(तथा ऊर्द्धाम्नाय तन्त्रे)

[श्री शिव उवाच)

शृणु देवि। प्रवक्ष्यामि रहस्यं परमं महत्
कृष्ण मङ्गल मूर्त्तिश्च मन्त्र स्त्वष्टा दशाक्षरः ॥
कृष्ण शतकोटि मंत्राणां शेखरोष्टा दशाक्षरः॥
तंकृष्णस्य महाभागे मंत्रराजेश्वरेश्वरम्। अष्टा-
दशाक्षरं मंत्रं जपामि ध्यान मध्यगः श्रीमद्गो-

पाल मंत्रस्य युक्तस्याष्टा दशाक्षरैः मंत्रराजत्व विख्यातिः सर्वशास्त्रेषु सम्मता ॥

(तथा नारद पञ्चरात्रे श्रीकृष्णउवाच)

गन्धर्व राज प्रवर स्थिरो भव भयंत्यज्य शुभा श्रयस्य भक्तस्य भयं किं ते मयि स्थिते ॥ १ ॥ सर्वेभ्योऽपि भयंनास्ति मद्भक्ता नाम कर्मणाम् । जन्म मृत्यु जरा व्याधि भयंतेषां न विद्यते। ममन्त्रो पासकाश्चैव स्वतन्त्रो नित्य विग्रहः । पुनर्न विद्यते जन्म मंत्र ग्रहणमात्रतः नास्ति कालाद्भयं तस्य न निषेधाद्विधेरपि । मैत्र ग्रहण मात्रेण मुच्यते सर्व कर्मणाम् ! मन्मंत्रोहि दहेत्पापं कोटि जन्म कृतं चयत्। सुदीप्तो ज्वल दग्निश्च तृण पुञ्जं दहेद्यथा॥ ममंत्र ग्रहणाद्योगान्मम नाम ग्रहणस्यवा, तेषां पापानि वेपन्ते, कोटि जन्म कृतानिच ॥ यमस्त न्नाम लिखनं दूरी भूतंकरोतिच अन्ते दास्यं च लभते गत्वा गोलोकमुत्तमम् ॥ ७ ॥ इति

ब्रह्मवैवर्त पुराण में श्री कृष्ण जन्म खण्ड में श्रीभागीरथजी ने प्रार्थना की है कि हे भगवन् कलियुग में वडेवडे पापी होंयगे और मेरे में स्नान करेंगे उनके पाप कैसे संहार सकूंगी तहां इतनासुन कर श्यमासुन्दर बोले कि हे भागीरथी मेरे मंत्रकी

उपासना करने वाले आयकर तेरे मेंस्नान करेंगे और सव तेरे पापों को छुडावेंगे इति मंत्र का माहात्म्य विस्तार ज्यादा देखना होतो गोपाल तापनी उपनिषद में देखलेना।

(प्रश्न) (महाराज निम्बार्क मुनीन्द्र का कव प्रादर्भाव भयाहै सो कहो) उत्तर—द्वापर युग में श्री कृष्ण चन्द्रजी का जिस समय अवतार भयाहै उसी समय में निम्बार्क मुनि का प्रादुर्भाव हुआहै ऐसे वेदान्त तत्व सुधा नाम ग्रंथ में लिखा है तथा आचार्य्य चरित्र ग्रंथ में लिखा है तथा अन्य ग्रंथ में भी लिखा है निम्बार्क मुनीन्द्रके पिता का नाम अरुण था तथा इनकी माता का नाम जयन्ती देवी था १०वर्ष की अवस्थामें अपने पिता से सम्पूर्ण वेद अध्ययन किया तिसके वाद श्री मथुरा पुरी में आयकर श्रीनारद मुनीन्द्रजी के शिष्य होते भये फिर गोवर्धन पर्वतकी छाया में वहुत दिन तक तपश्चर्य्या की जहां पर इन्होंने तपस्या करी है वहां आजतक गांव का नाम नीम ग्राम विख्यातहै वहां से फिर वद्री आश्रम को चले जाते भये और वेद व्यासजी के समीप में बहुत दिनों तक वास किया और वेदव्यास सूत्रों

में इन्हों ने वेदान्त पारि जात सौरभ नामका भाष्य वाक्यार्थ किया ऐसा अचार्य्य चरित्र ग्रंथ में लिखा है फिर तीर्थयात्रा करते भये व्रज भूमि में आये और बाबा नंदके घरपर जायकर साक्षात् श्री कृष्ण चन्द्रजी कुं दर्शन दीये इन्होंने और पञ्च विंशति श्लोक करके श्यामसुन्दरकी स्तुति की तथा श्यामसुंदरजीके चरण को प्रणाम करतेअपने नीम गाम को आए तहां निम्बार्क मुनीन्द्र के दो शिष्य होते हुये एक तो औदम्बराचार्य्यजी जिन्होंने उदम्बर संहिता बनाई दूसरे श्रीनिवासाचार्य्यजी जिन्होंने ब्रह्मसूत्रमें पारिजात कौस्तुभ भाष्य किया इति (प्रश्न)

महाराज ! चार आश्रम वेद पुराण और स्मृति आदि में ऋषि मुनियोंने वर्णन किये हैं तहां निम्बार्क मुनीन्द्र कोन आश्रम में होते भये ॥

उत्तर—पीछे हम कहभी आये है कि सनत्कुमार नारद निम्बार्क आदि नैष्ठिक ब्रह्मचारी होते भये ब्रह्मचर्य्य तो इनका आश्रमहै और वैष्णव धर्म्म है इनका सो श्री मद्भागवत में ११ एकादश स्कंधमें श्यामसुन्दर ने उद्धव के प्रति कहा है (नारायणो मुनीनांच कुमारो ब्रह्मचारि-

णाम्) हे उद्धव ! मुनियों के मध्य नारायण मुनि में हूं मेरे को जान ब्रह्मचारियों में सनत्कुमार में हूं ।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराणे श्रीकृष्ण जन्म खण्डे बाबानंद प्रति श्रीकृष्ण उवाच !

वैष्णवानां कुमारोऽहं इति

हे बाबानंद ! वैष्णवोंमें सनक सनन्दन सनातन सनत्कुमार में हूं (नारद पञ्च रात्रे) वैष्णव स्तुन मन्येत कुमारं च वयंद्विजः ॥ इति ॥

प्रश्न-महाराज ! निम्बार्क सम्प्रदाय अनुगामी जो विरक्त वैष्णव नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं उनके वास्ते धर्म शास्त्र में विवाह करना लिखा है या नहीं ! क्योंकि बहुत से देखने में आते हैं कि पहिले तो बाबाजी विरक्त बन जाते हैं पीछे से, जैसे कुत्ता कुत्ती को साम लेता है और शूकर शूकरी को सामलेता है और गदहा गदही को साम लेता है, इसी प्रकार बाबाजी महाराज धोबिन कलारिन अहीरनी कुम्हारी अथवा अपनी जाति वाली साम कर बैठ गये; फिर कहते हैं कि हम संयोगी होगये हैं; तो ऐसे बाबाजी को क्या समझना चाहिये !

उत्तर-निम्बार्क सम्प्रदाय अनुगामी जो नैष्ठिक ब्रह्मचारी है और यदि वह संयोगी होजावे तो उस पापी को कुत्ता; गदहा; तथा शूकर समान समझना चाहिये और जो उसकी सन्तान पैदा हो उसको वर्णसंकर समझना चाहिये क्योंकि धर्म शास्त्र में यह कहीं नहीं लिखा है कि नैष्ठिक ब्रह्मचारी तथा सन्यासी फिर गृहस्थ होजावे। जो पन्थायी लोग हैं उनकी कोई मर्यादा नहीं क्योंकि वह पहिले ही वेद शास्त्र से पतित हैं।

सो जो पन्थायी होवे सो विरक्त होकर विवाह करे। परन्तु जो निम्बार्क सम्प्रदाय अनुगामी वर्णाश्रमकी व्यवस्था मानने वाले नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं, उनके वास्ते किसी दशा में संयोगी या विवाह आदि को करना नहीं लिखा है; यदि साक्षात गुरु भी होय तो उसको शूद्रवत् त्यागन कर देना चाहिये।

अब जो धर्म शास्त्र में व्यभचरित नैष्ठिक ब्रह्मचारी के लिये दण्ड लिखा है सो किंचित् लिखता हूं।

अवकीर्णी भवेद्गत्वा, ब्रह्मचारी तुयोषितम्।
गर्दभं पशुमालभ्य नैर्ऋतं स विशुध्यति॥
ब्रह्मचार्युप कुर्वाणो नैष्ठिकश्चासौ योषितं गत्वा

ऽवकीर्णी भवति । चरमधातोर्विसर्गोऽवकीर्णं तद्य-
स्यास्तिसोऽवकीर्णी सनिर्ऋति देवत्येन गर्दभ
पशुना चतुष्पथेऽरण्ये यागं कृत्वा विशुध्यति ।

ब्रह्मचारी चेत्स्त्रियमुपेयादरण्ये चतुष्पथे लौकि
केऽग्नौ रक्षोदैवतं गर्दभं पशुमालभेत् । इति वशिष्ठ
स्मरणं तथा च मनुः ॥

" भवकीर्णी तु काणेन रासभेन चतुष्पथे । पाक
यज्ञविधानेन यजेत निर्ऋतिं निशि " इति । पशोर-
भावे चरुणैवयष्टव्यम् । एतच्चाशक्त विषये; गर्दभ
स्याजिन मूर्ध्ववालं परिधाय लोहित पात्रः सप्तगृ-
हान् भैक्षंचरेत्कर्माचक्षाणः संवत्सरेण शुध्यति इति
गौतमोक्त वार्षिक तपः समुच्चितः ॥

अर्थात् जो नैष्ठिक ब्रह्मचारी है यदि वह एक
वार स्त्री संगम करेतो मृतक गदहा की खालको
शिर से ओढकर और लोहेका पात्र हाथमें लेकर
७ घरोंसे भिक्षा कर नित्यप्रति मांगे और एक वार
दिनमें भोजन करे ऐसा व्रत करनेसे (१) एक
सालमें शुद्धहोताहै । और जो पूरे गृहस्थी होजाते
हैं उसका तो कोई प्रायश्चित्तही नहीं क्योंकि वह
महापतितसे भी पतित हैं ।

नैष्ठिक ब्रह्मचारी यह सन्यासी के समान ही है

जैसे सन्यासी के लिये स्त्रीकी तस्वीर आदि देखना वर्जित है, इसी प्रकार नैष्ठिक ब्रह्मचारी कोभी समझना चाहिये । धर्म शास्त्र में जहां विवाह करना लिखाहै वहां उप कुर्वाण ब्रह्मचारी के लिये ही लिखाहै नैष्ठिक के वास्ते नहीं लिखाहै

इति

प्रश्न –महाराज ! सन्यासी को सर्व कर्म का त्याग लिखा है सर्व संकल्प सन्यासी योगारूढ स्तदोच्यत, इत्यादि तो नैष्ठिक ब्रह्मचारी के लिये कर्म करना लिखाहै अग्नि हो त्रादिकतो फिर यह सन्यासी के समान किस भांति हो सक्ते हैं।

उत्तर– जो ब्रह्मचारी निष्काम कर्म करै वासु देवार्पण वह संन्यासी ही है क्यों कि श्याम सुन्दर ने ऐसा गीता मेंकहाहै:अनाश्रित : कर्मफलं कार्यं करोतियः स सन्यासीच योगी च न निरग्नि-र्नचाक्रियः । , इत्यादि ।

धर्म शास्त्रमें लिखाहै कि सूर्य्य का मण्डल दोही भेदन करतेहैं एक तो संग्राम में पीठ न दिखाने वाला शूर वीर। दूसरा जन्म से ले-कर मरण पर्यन्त अखंड ब्रह्मचर्य्य धारण करने वाला ब्रह्मचारी इति ।

प्रश्न ।

निम्बार्क सम्प्रदायमें शंख चक्र कण्ठी धारण करना मना है या नहीं ?

उत्तर – युगल कंठी तुलसी को सदैव काल धारण करना और गोपि चन्दन का ऊर्ध्व त्रि-पुण्ड तिलक और शंख चक्र गदा पद्म तप्त द्वारका पुरी में लेना विरक्त वैष्णवों के वास्ते विधान है ऐसा-वैष्णव धर्म मीमांसा में लिखा है जो निम्बार्क सम्प्रदायानुगामी गृहस्थ वैष्णव हैं ब्राह्मण क्षत्री वैश्य आदिक वह पूजा के समय चन्दन से शंख चक्र आदिक चिन्ह लगाले उनको तप्त का विधान नहीं है ।

परंतु येकंठी तिलक आदिक शंख चक्रादिक जवही फायदा देसक्ते हैं जव सतको धारण करेगा यदिसत विद्यमान नहीं हैं तोइन चिन्होंका भी धारण करना वृथा है क्योंकि भगवान मनुने लिखाहै नधर्म्म लिङ्ग कारणम्) इति

इति श्रीगोपाल चक्र चूडा मणि
नाम ग्रंथे तपस्वी राम चरनदास
विरचिते तृतीयोऽध्यायः
समाप्तः

ॐ श्रीसनक सनन्दन सनातन सनत् कुमारेभ्यो नमः

अथ उपासना काण्ड प्रारम्भः (श्रीमद्भागवते)

निगम कल्प तरो र्गालितं फलं शुक मुखाद-
मृत द्रव संयुतम् । पिवत भागवतं रस मालयम्
मुहु रहो रसिका भुवि भावुकाः ॥

वेदरूपी कल्प वृक्षसे गिराहुआ फल श्रीमद्भागवत हैं और श्रीशुकदेव जीके मुखार्बिन्दसे अमृत द्रव संयुक्त हैं यदि संसार में रहने वाले पुरुषोंको अमर होने की इच्छाहै तो श्रीमद्भागवतको नित्य श्रवण कीर्त्तन रस ताको पीओ अर्थात पानकरो ।

श्लोक-वासुः सर्व निवासस्य विश्वानुसर्वलोमसु
तस्य देवः परम ब्रह्म वासुदेव इति स्मृतः
वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि, इति
वासना वासुदेवस्य वासितं भुवन त्रयम्
सर्वभूत निवासीनां वासुदेव नमोस्तुते
वासुदेवं परित्यज योऽन्यदेव मुपासते
तृषतेजान्हवी तीरे कूपं खनति दुर्मतिः

(श्री मद्भागवते शुकउवाच)

वासुदेव परा वेदा वासुदेव परामखाः
वासुदेव परा योगा वासुदेव पराःक्रियाः ॥
वासुदेव परंज्ञानं वासुदेव परं तपः

वासुदेव परोधर्म्मो वासुदेव परागतिः

श्रीवासुदेव भगवान की प्राप्ति के लिये वेद हैं और हिंसारहित यज्ञ भगवान वासुदेवके प्राप्तीके लिये हैं अष्टाङ्गादि योग वह भी सब वासुदेव की प्राप्तीके लियेहै नित्य नैमित्तकादि क्रिया भी वासुदेव की प्राप्ति के लिये है और ज्ञानभी श्री वासुदेवजी की प्राप्ति के लिए है सविकल्पक ज्ञान भी वासुदेवकी प्राप्ति के लिए है और चान्द्रायणादि तप और सत्यदानादिक जो धर्म्म है वह सब श्री वासुदेवकी प्राप्ति के लिए है वासुदेव के सिवाय और कोई गति नहीं है अर्थात नान्या गतिः कृष्णपदार विंदात् ॥ इति ॥

अथ अवतार वर्णन ।

श्रीमद्भागवतमें श्रीशुकदेवजीने चौवीस औतार वर्णन कियेहैं तहाँ और सब औतार अंशकलाहैं कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् श्रीकृष्णचन्द्र स्वयं भगवानहै औरगर्ग संहितामें भी ऐसा लिखाहै ।

[श्रीमहर्षि गर्गउवाच)

युगे युगे वर्त्तमानः सोऽवतारः कलाहरेः ॥

श्रीकृष्ण चंद्रको छोडकर और अवतार जो युग युगमें होते हैं सो हरि की कलासे होते हैं तहां

औतार ६ छः तरहके लिखेहै १ अंशा औतार २ दूसरे आवेशा औतार ३ प्रवेश औतार ४ कला औतार ५ पांचवां पूर्ण औतार ६ छठवां परिपूर्ण औतार तहां परिपूर्ण अवतार श्रीकृष्ण चन्द्र जीका कथन कीया है।

और चतुर विभुकहिये वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध ये पूर्ण औतार कथन कियेहैं तहां पूरनके परिपूरण औतार के लक्षण लिखतेहैं।

चतुर्व्यूहो भवेद्यत्र दृश्यते च रसानव
अतःपरञ्च वीर्याणि स तु पूर्णः प्रकथ्यते

सोपरि पूरण औतार तो श्रीकृष्ण चन्द्रही केवलहै दूसरा नहीं अब परिपूर्ण का लक्षण लिखते हैं।

गर्गसंहितायां नारदउवाच

यस्मिन् सर्वाणि तेजांसि विलीयन्ते स्वतेजसा
तंवदन्ति परेसाक्षात् परिपूर्णतमं स्वयमू॥
पूर्णस्य लक्षणं यत्र यंपश्यन्ति पृथक् पृथक्
भावेनापि जनाःसोऽयं परिपूर्णतमं स्वयम्
परिपूर्णतमं साक्षात् श्रीकृष्णो नान्य एवच
एक कार्य्यार्थ मागत्य कोटि कार्य्यं चकारह

जिस्में सम्पूर्ण तेज लीनहोजावै उनको साक्षात् परिपूर्ण औतार कहतेहैं परिपूर्ण औतार साक्षात्

श्री कृष्णचन्द्र है दूसरा नहीं क्यों कि एक कार्य्य के वास्ते केवल पृथ्वी का भार उतारने के लिये भगवान् ने अवतार लिया है ब्रह्मा महादेव की प्रार्थना से असंख्य कार्य्य भगवान् ने किये इति

टिप्पणी ।

एक तो पृथ्वी का भार उतारा श्याम सुन्दर ने दूसरे चौबीसों अवतार के जो जो भक्तों की कामनाथी सो पूर्ण की तीसरे मुक्ति दी और ऐसे ऐसे कोटि कोटयान कार्य्य जिसको शेषनाग और शारदा नहीं कह सक्ती है।

नारदी पौराण उत्तर खण्ड ५८ अध्याय में भी कहा है ॥

देविसर्वेऽवतारास्तु ब्रह्मणः कृष्णरूपिणः
अवतारी स्वयं कृष्णः सगुणो निर्गुणः स्वयम्॥

भा०—वसु मोहनी के प्रति बोले कि हे देवी सम्पूर्ण अवतार कृष्ण रूपही हैं परन्तु श्रीकृष्ण चन्द्र स्वयं अवतारी और सगुण भी वही हैं और निर्गुण भी वही हैं और ब्रह्मवैवर्त पुराण के श्रीकृष्ण जन्म खण्ड में श्रीराधिकाके प्रति श्रीकृष्ण चन्द्रने भी ऐसाही कहा है।

श्लोक—जातोहं कृष्ण रूपश्च परिपूर्णतमः स्वयम्

गोलोके गोकुले रम्ये क्षेत्रे वृन्दावने वने ॥
द्विभुजो गोपवेशश्च स्वयं राधापतिः शिशुः
चतुर्भुजोऽहं वैकुण्ठे द्विधारूपः सनातनः
लक्ष्मी सरस्वतीकान्तः सततं शान्त विग्रहः
यन्मान्सी सिन्धुकन्या च मर्त्यलक्ष्मीपतिर्भुवि।
श्वेतदीपे च क्षीरोदे तत्रापिच चतुर्भुजः
अहं नारायणर्षिश्च नरो धर्म्मः सनातनः
धर्म्मं वक्ता च धर्मिष्टो धर्म्मवर्त्म प्रवर्तकः
नानारूपधरोऽहंच व्यक्ति भेदेन सुन्दरि ।
अहं चतुर्भुजःशश्वद् द्वारावत्यां रुक्मिणीपतिः
यथात्वं राधिकादेवी गोलोके गोकुले तथा
वैकुण्ठे च महालक्ष्मी भवती च सरस्वती
भवतीमर्त्य लक्ष्मीश्च क्षीरोद शायिनः प्रिया
त्वंसीता मिथिलायाञ्च त्वंक्ष्मायां द्रौपदीसती
द्वारावत्यां महालक्ष्मी भवती रुक्मिणी सती।
नानारूपा यथा त्वञ्च छायया कलया सती ॥
नाना रूपस्तथाहञ्च स्वांशेन कलया तथा।
परिपूर्णतमोऽहंच परमात्मा परात्परः ॥

भा०—श्री शुकदेवजी कहते हैं कि हे राजन्! परीक्षित और सब अवतार अंश कला हैं श्रीकृष्ण चन्द्र स्वयं भगवान हैं।

एतेचांश कलाःपुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्।
इन्द्रारि व्याकुलं लोकं मृडयन्ति युगे युगे। ॥

[नारद पञ्चरात्रे)

वन्दे नवघनश्यामंपीत कौशेय वाससं सानन्दं सुन्दरं शुद्धं श्रीकृष्णं प्रकृतेःपरम् ।बीजं नानावताराणां सर्व कारण कारणम् ॥ वेदैर्वेद्यं वेद बीजं सर्व कारणकारणम् ॥योगिनस्तु प्रपद्यन्ते भगवन्तं सनातनम् ।

(प्रश्न) अन्य देवी देवताओंको परमात्मा के समान माननेमें क्या दोषहै ।

[नारद पञ्चरात्रे शिवउवाच]

देवमन्यं कृष्ण तुल्यं यो ब्रवीति नराधमः ब्रह्महत्यां सलभते महामूर्खो नसंशयः परमात्मा स्वयं कृष्णो निर्गुणः प्रकृतेः परः

(नारद पञ्चरात्रे सौभद्र ऋषि रुवाच)

व्याधियुक्तः प्रमुच्येत तथाचेदीश्वरेच्छया यद्भया द्वातिवातोऽयं सूर्य स्तपति यद्भयात् ॥ १ ॥ वर्षतीन्द्रो दहत्यग्निर्मृत्यु श्चरति जन्तुषु ॥ यस्याज्ञया सृष्टि विधौ कूर्म्मोऽनन्तं दधातिच ॥ सच सर्वञ्च ब्रह्माण्डं लीलया वेश्वरेच्छया ॥ यस्याज्ञया महा भीता सर्वाधारा वसुन्धरा ॥ २ ॥ धरासा सर्वसस्या-

दयं, रत्नवांश्च हिमालयः । स्वयं विधाता भगवान् ध्यायतेय महर्निशम् ॥ ४ ॥ यंध्यायतेच भजते स्वयं मृत्युञ्जयः शिवः । सहस्र स्वक्त्रोयं तौति यमीश्वरम भीप्सितम् ॥ ५ ॥ सेवते पाद पद्मञ्च स्वयं पद्मालयः पिता । स्वयं सरस्वतीस्तौति यमीश्वरमभीप्सितम् ॥ ६ ॥ मायाः भीताचयं स्तौति, दुर्गा दुर्गति नाशिनी॥स्तुवन्ति वेदाःसततं सावित्री वेदमातृका ॥७॥ सिद्धेन्द्राश्च,मुनीन्द्राश्च योगीन्द्राः सनकादयः राजेन्द्राश्चा सुरेन्द्राश्च सुरेन्द्राः मनवस्तथा ॥ ८ ॥ ध्यायंतेच भजन्तेच भक्ताः सन्तोहि सततम् । केचिद्वद न्तियं ब्रह्म भगवन्तं सनातनम्॥९॥ केचित् प्रधानं सर्वाद्यं केचिच्च ज्योतिरीश्वरम् केचि सर्वरूपञ्च सर्वकारणकारणम् ॥ १ ॥ केचि त्स्वेच्छामयं रूपं भक्तानुग्रहविग्रहम । केचित् सुरुचिरम् श्याम सुन्दरं सुमनोहरम् ॥ ११ ॥ सानन्दं परमानन्दं गोविन्दं नन्दनन्दनम् । भज तात परं ब्रह्म स्मर शश्वत् सुरेश्वरम् ॥ १२ ॥

इति प्रथमरात्रे तृतीयोऽध्यायः

अथ द्वितीयरात्रे द्वितीयोऽध्यायः

(शिव उवाच)

प्राप्तं मृत्युञ्जयं ज्ञानं कृष्णाच्च परमात्मनः ।

सिद्धो मृत्युं जयोऽहंच नित्य नूतन विग्रहः ॥१॥
ब्रह्मणः पतननैव निमेषाम्मे यथा हरेरित्यादि ॥

शिवजी नारद के प्रति कहते हैं कि श्री कृष्ण चन्द्र भगवान से मेरे को मृत्युञ्जय अर्थात् (मृत्युको जीतने वाला) ज्ञान प्राप्त हुआ और मैं मृत्युको जीतकर नित्य भगवान् के विग्रह शरीरका स्मरण करता हूं और मेरे निमेष मात्रमें ब्रह्माका पतन होजाता है

यद्दीनं कृष्णसंलाप कथा पीयूषवर्जितम् ।
तंक्षणं निष्फलं मन्येश्रीकृष्ण कीर्त्तनं विना। २।

अर्थ—जो दिन अथवा क्षण श्रीकृष्णचन्द्र परमात्मा की अमृत रूपी कथा से वर्जित (रहित) है, उस दिन अथवा क्षण को श्रीकृष्ण भगवान के कीर्तन विना निष्फल मानता हूं।

द्वितिय रात्रे तृतीयोऽध्यायः

(शिवउवाच)

नैव कृष्णात्परो देवो नैव कृष्णात्परः पुमान्।
नैव कृष्णात्परो ज्ञानी नयोगी च ततः परः॥ १ ॥
नैवकृष्णात्परः सिद्धः तत्परोऽपिनहीश्वरः । नतत्परश्च जनको विश्वेषां परिपालकः ॥ २ ॥ नतत्परश्च बलवान् बुद्धिमान् कीर्त्तिमांस्तथा । नतत्परः

सत्यवादी, दयावान् भक्त वत्सलः ॥ ३ ॥ नतत्प-
रश्च गुणवान् सुशीलश्च जितेन्द्रियः ॥शुद्धाशयश्च-
शुद्धश्च नतस्माद्भक्तवत्सलः ॥ ४ ॥ नहि
तस्मात् परोधर्म्मी प्रदातासर्व सम्पदाम् । नहि
तस्मात् परः शान्तो लक्ष्मीकान्तात्परश्चकः ॥ ५ ॥
अनन्त कोटिब्रह्माण्डे मोहिते मायया यया ।
साचाति पुरतो भीता यमेवस्तोतु मक्षमा ॥ ६ ॥
सरस्वती जडीभूता यमेवस्तोतु मक्षमा । महा-
लक्ष्मीश्चाति भीता पादपद्मं निषेवते ॥ ७ ॥
प्रत्येकं प्रति विश्वेषु महाविष्णुश्च लोमसु । कोटिशः
कोटिशः सन्ति, देवा ब्रह्मादयो मुने ॥ ८ ॥ यथा
रेणु रसंख्यश्च तथा विश्वानि नारद । एतेषा मी-
श्वरश्चैको राधेशः प्रकृतेः परः ॥ ९ ॥ इति
ब्रह्म वैवर्त्त पुराणे श्रीकृष्णजन्म खण्डे नन्द
प्रति श्रीकृष्ण उवाच

॥ सर्व कारण रूपोऽहं न चमत्कारणं परम् ॥

(प्रश्न) महाराज पूर्ण अवतार चतुर्विंशु तथा नरसिंह जी और श्रीरामचन्द्र जी ये कर्म्मों के भोक्ता हैं या नहीं और यह भी कहिये कि भक्ति मुक्ति के दाता हैं यानहीं (उत्तर) चतु र्विंशु अवतार तथा नारायण औरनरसिंहजी औरश्रीराम-जी तथा परिपूर्ण श्रीकृष्णचन्द्र जी ये सब कर्म्मों

के भोक्ता नहीं और भक्तिमुक्ति के दाता है तत्वक-रके श्रीकृष्णचन्द्र परमात्मा एकहीहैं रूप करके भिन्नहैं अंशमें अंशीमें कोई भेद नहीं होताहै जैसे श्रीगङ्गाजी की लहर गंगाजी से भिन्ननहीं हैं ऐसेही श्यामसुन्दर के अवतार श्यामसुन्दर से भिन्न नहीं हैं (प्रश्न) महाराज विष्णु पुराणमें तथा महाभारत में और श्रीमद्भागवतमें लिखा है कि जरा नाम जो व्याधथा जिसने श्रीभगवान् के चरण में बाणमारा और टीका कार लिखते हैं कि जरानाम व्याध वालि वानरका अ-वतार था क्योंकि बालीको विना अपराधसे राम-चन्द्र जीने माराथा इसलिये श्रीरामजीने वदला श्री ष्ण अवतार में दिया ऐसा आनंद रामायण में भी लिखा है जवकि वे कर्म्मों के भोक्ता नहींहैं तव उन्होंने क्यों वदला दिया (उत्तर)यह तो जी-व का धर्म है कि जो करता सो भोगता मूलरा-मायण तथाऽध्यात्मक रामायण और आदि काव्य वाल्मीकीय रामायण इनमें कहीं भी नहीं लिखाहै कि श्रीरामचन्द्र जीने कहाहोय कि मैं तेरा वदला दूंगा क्या श्रीरामचन्द्र जी अज्ञानी थे जो बाली को निरपराध मारा छिपकर क्योंकि दुष्टों के

दमन करने के लिए श्रीरामचन्द्र जीका अवतार था वाली अपराधी था क्योंकि अपने छोटे भाई की स्त्री अपने घरमें गेरली इसलिए वाली को उन्होंने छिप कर मारा क्योंकि वाली को ब्रह्माजीने वरदिया था जो कोई तेरे सामने आवेगा उसका बल आधा तेरेमें चला आवेगा इसलिए ब्रह्माजी का वचन झूठ नकरने के लिए श्रीरामचन्द्रजीने वालीको छिपकर मारा इसमें एक दृष्टान्त हैं कि जैसे श्रीमहाराजा चक्रवर्त्तीजीकी कोई नौकरी करें और महाराजा प्रसन्न होकर उसको पिनसल देदे वे और विनागुनाह उसका पिनशिल तोड देवै तो यह अधर्म हैं धर्मनहीं इसी तरह सब देवी देवता ब्रह्मा महादेवादिकोंने परमात्मा का भजन सुमिरण करके वर पायाहै जिस्कोवे वर व शाप देतेहैं पूरा होता है ईश्वर की कृपासे जब आपही उनका वचन नहीं सत्य करेंगे तो फिर अनर्थ होजावें तथा श्रीतुलसी कृत रामायण में तुलसी दासजीने सब उत्तर लिखे हैं वेदधर्म रक्षक सुरत्राता इति।

सुग्रीवने कहाहै श्रीरामचन्द्रजी से

रिपु समान मोहि मारेसि भारी। हरलीन्हेसि सर्वस औ नारी॥ ताके भएरघुवंश कृपाला। सकल भुवन में फिरसि विहाला॥ इति॥

दो-सुनु सुग्रीव मैं मारिहौं; वालिहि एकहि बाण ।
ब्रह्मरुद्र शरनागतहिं, गये न उवरें प्राण ॥

मारावालिहि रामजब हृदयमांझ सरतान)
गिरा विकल माहिसर के लागे । पुन उठ बैठ
देख प्रभु आगे ॥ अरुण नयन सर चाप
चढाए । श्यामल गात सिर जटा बनाए ॥
हृदय प्रीति मुख वचन कठोरा । बोला चितै
रामकी ओरा ॥ धर्म्म हेतु अवतरेउ गोसाईं ।
मारेउ मोहि व्याधि की नाईं ॥ मैं बैरी सुग्रीव
पियारा । कारण कौन नाथ मोहि मारा ॥

इतनी सुनकर श्रीरामचन्द्रजी बोले ।
अनुज बधू भगिनी सुत नारी । सुन सठ ए
कन्या समचारी ॥ इन्हें कुदृष्टि विलोकै जोई ।
ताहि बधे कछु पाप न होई ॥ इति ॥

(रामचन्द्रजी बोले)

हे बाली ! छोटे भाई की स्त्री और अपनी बहिन
और पुत्र की स्त्री, हे सठ ! ये कन्या के समान
होती हैं इन्हें कोई कुदृष्टि से भी देखे तो उसके
मारे का कोई दोष नहीं है क्यों कि तैं अपराधी
है सुग्रीव की स्त्री अपने घरमें गेरली इस लिए
तेरे मारे में कोई अपराध नहीं है इतना सुन कर

बाली लज्जित भया तब श्रीरामचन्द्रजी बोले अचल करों घट राखेउ प्राणा । बालि कहा सुन कृपा निधाना ॥ कोटि जन्म मुनि जतन कराहीं । अंत राम कहि आवत नाहीं ॥

॥ इति ॥

श्रीरामचन्द्रजी महाराज बोले कि हे बाली कहु तेरे को मैं अचल करदेउ याने कहु तेरेको जिवाइ देउं इतना सुन कर बाली बोला कि हे भगवान ! कोटयान कोटि जन्म तक मुनि महात्मा जतन करते हैं परन्तु अंत में राम शब्द उनसे उच्चारण नहीं होता है सो आप साक्षात मेरे अगाडी खडे हो अपने प्राणों को अब में राख कर क्या करूं लिखा भी है ।

क्रोधोऽपि देवस्य वरेण तुल्यः

देवका क्रोध जो होता है सो वरके तुल्य होता है बाली की अधीनता सुन कर श्री रामचन्द्रजी प्रसन्न होते हुये और अपने निजधाम बाली को पहुंचाया निज धाम को गया हुआ फिरलौट नहीं सकता क्यों कि यद्गत्वान निवर्तंते तद् धाम परमं मम ॥ इति ॥

बालिराम निज धाम पठावा । नगर लोग सब व्याकुल धावा ॥ इति ॥

इस वास्ते किसी पामर ने ये गपोडा मारे है अपने पेट भरने के वास्ते और आनंद रामायण कोई प्रामाणिक ग्रंथ नहीं है ये चुटुकला ग्रंथ है क्योंकि मतावलंबी बहुतेरे ग्रंथ रच देते हैं नाम रख देते ऋषि महात्माओं का; सो तुलसी दासजी ने लिखा है "दंभिन निज मत कल्प कर प्रगट कीन्ह बहु ग्रंथ" श्रीरामचन्द्रजी साक्षी है कर्म्मों का भोक्ता नही है अंत में जो एकबार भी राम नाम का उच्चारण करता है वो परमधाम को जाता है लौट कर उसका जन्म नहीं होता है श्रीरामचद्र जी का जिसको विश्वास नहीं होय चरणकमल में; वह आनंद रामायण को शिरका मुकट बनावै, हम ऐसे कल्पित ग्रंथ को नही मानते हैं ॥ इति ॥

प्रश्न–कहीं ऐसे गपोडा लिखे है कि अंगदने रामचन्द्र जी से वर मांगा कि आप मेरे हाथसे वैकुंठ को जाओ तौ मैं पिता के ऋण से दूर होऊं सो यह केवल पाखण्डियों के गपोडे मात्रहैं क्योंकि अंगद तो रामजीका परम भक्त था और भक्तोंकी कभी अशुभ कामना होती ही नहीं ।

कोई चुटकुला ग्रंथमें लिखा है कि अंगदने श्रीराम चंद्रजी से कहा कि आप मेरे हाथ से परम धामको जाओतो में पिता के ऋणसे उऋणहो। जाऊं सोरामजी ने कृष्ण अवतारमें बदला दिया सोयह कल्पना है

देवर्षिभूताप्त नृणांपि तृणांन किंकरोनायमृणी चराजन्
सर्वात्मनायः शरणं शरण्यं गतो मुकुन्द
परिहृत्यकर्तुम् ॥ १ ॥

अस्य पदार्थः।

जो प्रायश्चित्तादि निमित्त निषेधकर्म का परित्यागकरके सर्वात्म भावसे शरणागत रक्षक श्री मुकुन्द भगवान के शरणको प्राप्त है ॥ वह देवता व ऋषि व अन्य भूत समुदायका तथा पित्रोंका किंकर व ऋणी नहीं है अंगदतो श्रीरामचंद्रजी का अनन्य भक्त था वो बालि काऋणी नहीं था।

महाराज! बहुत से वाममार्गी ऐसा कहते हैं कि गोपालमन्त्र मुक्ति दायक नहीं है धनादि ऐश्वर्य कामना देने वाला है और कृष्णचंद्र कुब्जा को मुक्ति नहीं देसके क्योंकि उन्में मुक्ति देने की सामर्थ्य ही न थी और दशग्रीव रावण की भगिनी (भैन)

शूर्पणखा राक्षसी नन्दराय के बृज में अमुक नाम की गोपी भई,; इसका उत्तर है यह कोई वेदादि शास्त्र का प्रमाण नहींहै किन्तु किसी मद्य मांस सेवी भगवतद्रोही वाम कौल ने अपने पुस्तक में लिखा होवेगा राक्षस सदैव भगवत् तथा भगवदभक्त से द्रोह करते आयेहैं हिरण्यकशिपुदैत्य भगवान् व भगवद्भक्त प्रहलाद से द्रोह करता ही था त्रेता में रावण आदि राक्षस श्रीरामचन्द्रजी को कोई ईश्वर थोडे ही मानतेथे कहते थे कि यहतो राजा दशरथ का पुत्र मनुष्य है और ऋषि महर्षियों को भी दुख देता था तथा द्वापर में कंस शिशुपाल आदि राक्षस श्री कृष्णचन्द्र को परमात्मा थोडे ही मानते थे प्रत्युत निन्दाही किया करते थे इसी तरह कलियुग के राक्षस परस्त्री गामी तथा भगवद्द्रोही छिपे हुअे वाम मार्गी अनन्त कोटि ब्रह्माण्डनायक श्रीकृष्ण चंद्र तथा आद्या शक्ति श्री राधिका जीतथा अष्टदशाक्षर श्री गोपालमंत्र राज की अवज्ञा करें तो क्या आश्चर्यहै क्योंकि यह तो वाम मार्गियों का स्वाभाविक धर्म हीहै वाम मार्गी दो प्रकारके होते है एकतो भैरवी चक्रके मानने वाले दूसरे छिपेहुऐ वाममार्गी उनके यह लक्षण लिखे हैं

अंतःशशक्तो वहिश्शैवाः सभामध्येचवैष्णवाः ॥
नानारूपधराः कौला विचरन्ति महीतले ॥ १ ॥

आचारज ग्रंथ में ऐसा लिखा है कि—

राक्षसाः कलिमासाद्य जायन्ते ब्रह्मयोनिषु।
निन्दन्ति तस्य भजनं कृष्णस्य परमात्मनः

तहां वाम मार्गी जी से पूछना चहिये कि सब शिव शक्ति गणेश नारायण आदि की उत्पत्ति तो श्री कृष्णचंद्र जी से लिखी है जैसा प्रथम विस्तारपूर्वक सृष्टि प्रकरण में लिखागयाहै जब सबके उत्पन्न करने वाले परमात्मा श्री कृष्ण चन्द्र है उन्में तथा उन्के मन्त्र में मुक्तिदेने की सामर्थ्य क्यों नहीं है इसका जवाब पूछना चाहिये इधर खयाल करके देखिये सर्वोपरि भगवद्गीता

स्त्रियो शूद्रास्तथा वैश्या स्तोपियन्ति परांगतिम्
किंपुन ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा ॥

वाम कौल कहते हैं कि कुब्जा देवदेवी नाम की वेश्या भई सत्य है या असत्यहै इस्में गपोडाही हैं दूसरे जिस्का जिस्में प्रेम होता है वह उस्की गाथा जरूर ही लिखता है इस करके विदित होता है कि वामी जी वेश्यागामी जरूर ही थेइस् । करेक उनको देवदेवी वेश्या बहुत प्रिय थी । इति)

ब्रह्मवैवर्त्त पुराणमें यह लिखाहै कि शूर्पणखा रावण की भैन द्वापरमें आय कर कुब्जा होती भई और भगवान के चरणकमलों का आश्रय लेकर सद् गति को प्राप्त भई,, ऐसे ही श्रीमद् भागवत आदि पुराणों में लिखा है वास्तव में यथार्थ वैदिक सिद्धान्त यह है सो विद्वान् लोग इतने ही करके समझलेंगे और यहजो कहते हैं कि उन्में मुक्ति देने की सामर्थ्य नहींहै सोभी सुन लीजिये ॥ ॐमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्माम नुस्मरन्। यः प्रयाति त्यजन्देहं सयाति परमां गतिम् १ अपि चेत्स दुराचारो भजते मामनन्यभाक्। साधुरेव समन्तव्यः सम्यग् व्यवसितो हि सः २

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।
कौन्तेय १ प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति। ३
मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जयः॥ मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव। ४।

इति

यहां बुद्धिमान को शोचना चाहिये कि यह ब्रह्म विद्या सत्य मानी जाय वा छिपे हुये वामियों के गपोडे इति।१। बाम मार्गोंके

[प्रश्न]

कालिकातंत्र व भैरवतंत्र आदि मन्तव्य हयानहा

(उत्तर)

इन तमो गुणी तन्त्रों का खण्डन तो महादेवजीने स्वयं कियाहै यह पद्म पुराण के प्रमाणों से प्रथम कह आयेहैं श्रुति तथा स्मृति का उल्लङ्घन कर कल्पित ग्रन्थ मानना मूर्खता मात्र है। किञ्च भेदा भेद जो वैदिक सिद्धान्त श्री १०८ निवासा चार्यजी का वेदान्त कौस्तुभ तिस परभी किसी २ ने कटाक्ष कियाहै अपने २ भाष्य में मिलकर ऐनावना किम्: क्या खद्योत का प्रकाश दिनमणि मार्त्तण्ड का सामना कर सक्ता है प्रतिभाशाली इस्को विचार करें कि शृगालों का रोदन कोलाहल केशरी को भयभीत कर सक्ता है कदापि नहीं; वैदिक धर्म कीतो सुदर्शन चक्र धारी मुरारी स्वयं रक्षा करतेहैं यह आपने अर्जुन के आगे स्वयं प्रतिज्ञा करी है

तथाच। यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भ वति भारतः
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्!
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

इति भगवता स्पष्टमेव प्रति ज्ञातं तथापि

यह वाम मार्गियों का स्वभावही है कि-

तेतीसकोटि देवता करते हैं उन्हीं कृष्णचन्द्र जीकी ये पापी निन्दा करते हैं ॥ इति ॥

(प्रश्न) महाराज पीछे मैंने प्रश्न किया था जरानाम व्याधका सो खाली रामायण का उत्तर दिया आपने और श्रीरामचन्द्र जीका, पुराणों का तथा श्रीकृष्ण चन्द्र जीका अभी आपने उत्तर नहीं दिया

(उत्तर) महाभारत में तथा विष्णु पुराण में और भागवत में लिखाहै कि दुर्वासा के शापसे साम्ब के उदर से एक लोहेका मूशलसा पैदा हुआ क्योंकि वह जो साम्ब आदिक ने गूदड़ पेटमें बांधकर दुर्वासा ऋषि को दिखाया था उसी गूदड़ का मूशल बन गया, शाप करके तो राजा उग्रसेन की आज्ञा से यादवों ने रेत करके समुद्र में गेर दिया रेतने से बाकी शेष एक कीलके समान जो बचगया सो भी समुद्र में फेंक दिआ उस कील को मछली ने निगल लिया उसको एक जाल में फांसकर व्याध लेगया उस मच्छी के पेट से एक कील निकली उस कील को व्याध ने बाण की नौक में लगाई अब ये गपोडे सत्यमाने जांए तो सैंकडों प्रामाणिक ग्रंथ

इत्यादि तथा उसी विष्णु पुराण में देखिये

यदोःकुलं नरःश्रुत्वा सर्व पापात् प्रमुच्यते यत्रावतीर्णो विष्णुः पर ब्रह्म नराकृतिः ॥ इति ॥

तहां सोचना चाहिये कि येही वाक्य पहिले तो साक्षात् परब्रह्म परमात्मा कहा फेर लिख दिया कि नर के समान तो ग्रंथ कर्त्ता की बिलकुल मूर्खता पाई जाती है परंतु नहीं पुराण तो वेद व्यास की ठीक हैं परन्तु ये दुष्ट वाक्य है कि भगवान के चरण कमल में व्याध ने तीर मारा ये कोई जन्मान्तर का राक्षस आयकर फिर ब्राह्मण बनगया तो कर्म्म के अनुसार बुद्धि तो उसकी दोष भावमें बनी रही परमात्मा की निन्दा करूं तो उसने इसी तरह से निन्दा की।

राक्षसाः कलिमा साद्य जायन्ते ब्रह्म योनिषु निदन्ति तस्य भजनं कृष्णस्य परमात्मनः

बृहत् वैष्णव नाम ग्रंथमें ऐसा लिखाहै कि जो श्रीकृष्ण चन्द्र परमात्माके शरीर को पाञ्चभौतिक मानता है उसका मुंह नहीं देखना चाहिये यदि भूल में उसका मुंह देख लिया जाय तो सात वखत शरीर में तेल मर्दन करके स्नान करै तब फिर शुद्ध होवे सब वेद शास्त्र से उत्तम श्री मद्भगवद् गीता मानी

गई है और साक्षात् श्रीकृष्ण चन्द्रजी कहते हैं कि हे अर्जुन मेरा जन्म कर्म्म दिव्य हैं प्राकृत नहीं हैं। जन्म कर्म्म चमे दिव्यम् इत्यादि ॥

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः
परम भावम जानंतो ममा व्ययमनुत्तमम् ॥

हे अर्जुन मेरे को नाश रहित नित्य व अत्यंत उत्तम ऐसे परम तत्व (स्वरूप)को न जानने वाले मूर्ख लोग में अव्यक्त अर्थात् प्रपंच से रहित, वा देह इन्द्रिय आदिक दृश्य विकारों से रहित होने पर भी राम कृष्ण अवतारादिक धारण करने पर मुझको देह इन्द्रिय आदि विकार वाला मनुष्य मानते हैं।

ब्रह्म वैवर्त्त पुराणे श्रीकृष्ण जन्म खण्डे
श्रीराधिकां प्रति श्री भगवानु वाच

अहंसाक्षी निरीहश्च न भोगी सर्व कर्म्मसु

श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि हे राधिके जीव के संग मेरा प्रतिविम्ब है और शुभ अशुभ कर्म्मों का भोक्ता जीव है और में केवल साक्षी रूप हूं मैं कोई कर्म्मों का भोक्ता नहीं हूं ॥ इति ॥

अब सोचना चाहिये कि श्री कृष्णचन्द्रजी कह रहे हैं कि मैं आत्मा हूं साक्षी हूं मेरे जन्म कर्म

दिव्य हैं मे कर्म्मा का भोक्ता नहीं हूं तो फिर भगवद् वाक्य छोड कर पुराणों का आक्षेप दुष्ट वाक्य क्यों मानना चाहिये धर्म्म सनातन इसी से डूबगया कि स्मृतियों के भारत में तथा पुराणों में आक्षेप दुष्ट जो वाक्य थे उनको निकाल कर नहीं फेंका।

ये सोच नहीं किया कि ये केवल कुदृग पाल दुष्ट आत्मा आक्षेप भ्रम वाक्य पीछे से आक्षेप डाल दिये हैं और भी सुनिये गपोडा महाभारत में तथा विष्णु पुराण में और भागवत में श्लोक लिखाहै

भूमेःसुरेतर वरूथ विमर्दितायाः इति।

शित कृष्ण केशा यानी राक्षसों से मर्दन की हुई पृथ्वी ब्रह्मा आदि सब देवता मिल क्षीर सागर में गये विष्णु के पास तहां विष्णु ने दो केश उखाड कर देवतों को दिखाये एक चिट्टा एक कमला यानी एक सफेद और एक श्याम देवतों से कहा कि ये पृथ्वी का भार उतारेंगे तव शोचना चाहिये कि वेद शास्त्र में देवता की षोडश वर्ष के समान अवस्था सदैव काल रहती है वह जरा व्याधि से रहित होता है ये गपोडा लिखने वाले मूर्ख से हम पूछते हैं कि हे मंद आत्मा जब विष्णु के

भी धौले बाल आगये तो पापी उसको परमात्मा क्यों कहता है क्यों कि धौले केशवाला जीवके समान है यदि कहो कि विष्णु शोभा के वास्ते चिट्टे काले केश रखे हैं तो जो अपने स्वरूप में आनंद है वह शोभा किसको दिखावेगा दूसरे बाल जड पदार्थ हैं वह कैसे पृथ्वी का भार उतार सकेगा यदि कहो कि विष्णु में सर्व सिद्धियां निवास करतीं हैं तो सिद्धि वाले को फिर बाल उखाडने से क्या जरूरत है क्यों कि वह तो एक शरीर से हजार शरीर धारण कर सकता है।

श्लोक-दीपवदा वेशस्तथाहि दर्शयति "तथाच श्रुतिः" सएकधा भवति सहस्रधा भवती त्यादिस एकधा द्विधा भवति त्रिधा भवति ॥ इति ॥

अब कोई विद्वान् शोच कर शास्त्र का ये सिद्धान्त हैं कि मुक्त पुरुष एक शरीर से हजार शरीर धारण कर सकता है ब्रह्मसूत्र और वज्र के समान प्रमाण हैं साक्षात् श्रुति कह रही हैं और विष्णु साक्षात मुक्त पुरुष से भी उत्तम हैं तब स्वयम् एक शरीर से हजार शरीर होसक्ते थे उनको बाल उखाड ने से क्या प्रयोजन है ये तो कोई

दुष्ट आत्मा भगवद् द्रोहि ने आक्षेप डाल दिया क्योंकि जो अधर्म्मी होतेहैं वे धर्म्म का विचार कभी नहीं करते हैं ॥ इति ॥

अगाडी जो आक्षेप पुराण भारत तथा स्मृति में सो अगाडी कहेंगे

गति र्भर्त्ता प्रभुःसाक्षी निवासः शरणं सुहृत्। प्रभवःप्रलयः स्थानं निधानं वीजमव्ययम् गति रिति गम्यते, इति गति फलम् भक्ति पोषण कर्त्ता, प्रभु र्नियन्ता साक्षी शुभाशुभद्रष्टा निवासः भोगस्थानम् शरणं रक्षकः सुहृत् हितकर्त्ता प्रकर्षेण भवत्यने-नेति प्रभवः सृष्टिः प्रलीयते अनेनेति प्रलयः संहर्ता तिष्ठन्त्यस्मिन्नित्तं स्थान माधारः निधीयतेऽस्मि-न्निति निधानंलयःस्थानं वीजं कारणं तथाऽव्यय मविनाशि ननु ब्रीह्यादि वीजं नश्वरमित्यर्थम् ।

हे अर्जुन गति भर्त्ता स कोई कोई को गति देने वाला सब का प्रभु शुभअशुभ कर्म्मों का देखने वाला साक्षी सब जीवोंके हृदय कमल में वास करने वाला सुहृद सबका हित चाहने वाला प्रभव सबका प्रभाव जानने वाला मेरा कोई प्रभाव नहीं जानता सब के प्रलयका स्थान निधानं हे अर्जुन मैं सब का बीज कारण रूप हूं ॥ इति ॥

अर्जुन उवाच

श्लोक–पिताऽसिलोकस्य चराचरस्य त्वमेव पूज्यश्च
गुरुर्गरीयान् न त्वत्समोऽस्त्य भ्यधिकः
कुतोऽन्योलोक त्रयेऽप्य प्रतिम प्रभावः ॥
ब्रह्मादिस्तम्भ पर्य्यन्तं सर्वं मिथ्यैव नारद
भजसत्यं परम्ब्रह्म राधेशं त्रिगुणा त्परम् ॥
नैव कृष्णात् परो देवो नैव कृष्णात् परःपुमान्

अथ गोपाल तापनी उपनिषदे

श्रीकृष्णोवै परं दैवतं गोविन्दा न्मृत्युर्विभेति भया दस्याग्निस्तपति भयात्तपति सूर्य्यो भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युःधावति पञ्चमः सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं वदाम्यहम् नास्ति वेदात्परं शास्त्रं नदेवः केशवात्परः

(ब्रह्म वैवर्त्त पुराणे श्रीनारायणउवाच)

नित्यदेहंच भगवानीश्वरः प्रकृतेः परः योगि नोयं वदन्त्येवं ज्योतीरूपं सनातनम् ॥

भा०–नारायण मुनि कहते हैं कि हे नारद वह भगवान् नित्य देहीहैं और सबके ईश्वरहैं और प्रकृति अर्थात् मायासे भी परे हैं और योगी लोग जिनको ज्योतिः रूप सनातन वर्णन करते हैं

ज्योतिरभ्यन्तरे नित्यं रूपं भक्त्या वदन्तियम्

वेदा वदन्ती सत्यं यंनित्य माद्यं विचक्षणाः ॥

और भक्त लोग भगवान् को ज्योतिरभ्यन्त रही वर्णन करते हैं और वेद जिस परमात्मा को नित्य और आदि करके कथन करतेहैं ।

यंवदान्ति सुराःसर्वे परं स्वेच्छामयं प्रभुम्
सिद्धेन्द्र मुनयःसर्वे सर्व रूपं वदन्ति यम्

भा०—और जिस भगवान् को इन्द्रादि देवता स्वेच्छामय वर्णन करतेहैं और सिद्धेन्द्र सनकादिक जो मुनि हैं सो भगवान को सर्व व्यापी करके कथन करते हैं

यमनिर्वचनीयञ्च योगीन्द्रःशंकरो वदेत्
सत्यं विधाता प्रवदेत् कारणानाञ्च कारणम् ॥

भा०—जिस भगवान को योगीन्द्र शंकर महाराज अनिर्वचनीय वर्णन करते हैं और ब्रह्मा जी स्वयं उस भगवान् को कारणों का भी कारण स्वरूप वर्णन करते हैं ।

वैष्णवा नामेकरूपं वेदा नामेक मेवच
पुराणमेकं रूपं तस्मान्नवविधं स्मृतम् ॥

भा —और वैष्णव लोग जिस भगवान को एकही करके कथन करते हैं और वेदभी उस प्रभु को एकही करके कथन करते हैं और पुराण

आदि भी ऐसाही कहते हैं अतः नूतन कान्ति वाले भगवान् का स्मरण ही करने योग्य है।

न्यायोऽनिर्वचनीयं च यंमतं शंकरो वदेत्।
नित्यं वैशेषिकाश्चैव यं वदन्ति विचक्षणाः॥

भा०—न्याय भी उस परमात्मा को अनिर्वचनीय वर्णन करता है अर्थात तिस मतको भगवान् शंकर जी मानते हैं और वैशेषिक शास्त्रानुयायी भी उसको नित्योयं नित्योऽयम् अर्थात् ईश्वर नित्यहै ऐसा कथन कर रहे हैं जैसा कि पूर्व विद्वान् कथन कर चुके हैं।

सांख्यं वदंतितं देवं ज्योती रूपं सनातनम्।
मीमांसाः सर्व रूपञ्च बेदान्ताः सर्व कारणम्॥

भा०—सांख्य शास्त्र जिस ईश्वर को ज्योति स्वरूप करके वर्णन करते हैं और बेदान्त शास्त्र जिस ईश्वर को सर्व कारण रूप मानते हैं।

पातञ्जलोप्यनन्तश्च बेदाः सत्य स्वरूपकम्।
स्वेच्छामयं पुराणश्च भक्ताश्च नित्य विग्रहम्॥

भा०—पातञ्जल योग शास्त्र जिस परमात्मा कूं अनन्त शक्ति वाला मानता है और वेद जिस ईश्वर को सत्य स्वरूप वर्णन करते हैं और पुराण जिसको स्वेच्छामय मानते हैं और भगवद्भक्त

जिस परमात्मा को नित्य लीला विग्रह करके मानते हैं।

सोऽयं गोलोक नाथश्च राधेशो नन्द नन्दनः।
गोकुले गोप वेशश्च पुण्ये वृन्दा वने बने॥

भा०—श्री नारायण मुनि कहते है कि हे नारद! वह पूर्वोक्त परमात्मा अर्थात् जिसका पहिले वर्णन कर चुके हैं वह कौन है कि गो लोक के स्वामी श्री कृष्णचन्द्र आनंदकन्द श्री राधिकेश नंदनंदन गोकुल में जिन्होंने गोप बेश धारण किया है और जो भगवान् पुण्य क्षेत्र श्रीवृन्दा वन भूमि में धेनुओं को चरारहे हैं।

प्रश्न—महाराज! जो परमात्मा को छोडकर अन्य देवों की उपासना करते हैं उनकी मुक्ति होती है कि नहीं (उत्तर) किसी देवी देवता की उपासना करे परमात्मा के दिये हुए फल कोपावता है तो श्यामसुन्दर ने गीता में कहा है।

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितु मिच्छति।
तस्य तस्या चलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्॥

भा०—जो जो भक्त जिस देवता रूप से मेरी उपासना करताहै उसी उसी देवताद्वारा उसकी श्रद्धा पूर्ण करता हूं।

सतया श्रद्धया युक्तः तस्या राधन मीहते।

लभते च ततः कामान् मयैव विहितान् हितान्॥

भा०-वह पुरुष उस श्रद्धा से युक्त होकर उस देवता की आराधना करता है और मुझसे ही दिये हुऐ मनोरथ को उस देवता के द्वारा प्राप्त करता है।

अंत वत्तु फलं तेषां तद् भवत्यल्प मेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि॥

भा०-इन्द्रादिक देवों को यजन करने वाले मनुष्यों को नाशवान फल की प्राप्ति होती है क्यों कि देवताओं को पूजन करने वाले देवताओं को प्राप्त होते है और मेरे भक्त मेरी ज्योति में लय निरंतर मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

जोसकाम भक्त होते हैं वे सदैव दीन होते हैं क्यों कि वह कामनारूपी बंधन में फसे रहते हैं जैसे पशु और जो निष्काम भक्त वे परमात्मा को और मोक्ष रूपी सिद्धि को प्राप्त होतेहैं।

(तथाच श्रुतिः)

योन्य देवान् यजते स देवानां पशुः "

नंदके गृहमें साक्षात् श्याम सुन्दर के सामने खडे होकर स्तुति करतेहैं देव ऋषिके शिष्य श्री निम्बार्क मुनीन्द्र कहतेहैं कि हे भगवन् आपके

चरण कमल छोडकर जो अन्य देवोंकी उपासना करतेहैं वे निश्चय करके पशुहैं ऐसा सनत्कुमार नारदादिक कहते हैं ।

विद्वद्भिरभिधी यते पशुर्यो अन्य समुपासको हिसः । त्वामुपास्य वहवोऽमृता वृताः पूर्ण काममृतं निरंहसः ॥

श्री गोपाल चक्र चूडामणि
नाम्नि ग्रंथे तपस्वी राम
चरण दास विरचिते
चतुर्थोऽध्यायः

ॐ श्री नारदायनमः

ध्यायन् कृते यजन् यज्ञै स्त्रेतायां द्वापरे अर्चनो विभुः यदा प्राप्नोति तदाप्नोति कलौ संकीर्त्य केशवम् ॥

सत युगमें मनुष्य की उमरि लाख वर्ष की होती थी और सब सत्यवादी होतेथे झूठ कोई नहीं वोलताथा । और लाख वर्ष समाधि ध्यान योग करके परमात्माको प्राप्त होतेथे और यदि भूल करके एक आदमी पाप करताथा तो उस राज्य भरको पाप लगताथा और त्रेतामें १०००० दश हजार वर्ष मनुष्य की उमर होतीथी और यदि एक मनुष्य के पाप करनेसे उस नगर भरको

दंड मिलताथा और दशहजार वर्ष तक ज्ञान यज्ञ करके परमात्माको जीव प्राप्त होतेथे और द्वापर में एक हजार वर्ष की उमरि मनुष्य की होतीथी यदि एक मनुष्य पाप करे तो उसके कुटुम्ब भर को दंड मिलताथा और हजार वर्ष तक पूजा करनेसे अंतमें भगवत को प्राप्त होतेथे लाखन वर्ष तक योग ध्यान करनेसे जो फल जीवको सत युगमें मिलताथा त्रेतामें दश हजार वर्ष तक ज्ञान यज्ञ करनेसे जीवको जो फल मिलताथा द्वापरमें हजार वर्ष तक पूजा करनेसे जो फल जीवको प्राप्त होताथा कलियुगमें वही फल श्री कृष्णचंद्र जी का कीर्त्तन करनेसे प्राप्त होताहै हरे कृष्ण गोविंद वासुदेव राम नारायण इत्यादि कलि युगमें एक सौपचीस वर्ष की आयु लिखीहै मनुष्य की परन्तु झूठ बोलनेसे और पाप कर्म करनेसे उतनी आयु नहीं भोगसक्ता।

प्रश्न—महाराज एकमेरा कृपा करके सन्देह छुडा दीजिऐ कि कोई कोई कार्त्तिक महात्म्य में लिखाहै कि सतयुगमें पांचाल देशमें एक विष्णुका मंदिरथा प्राचीन वर्हिश का बनवाया कार्तिक के महीनामें एक रमा कादम्बनी नामकी वेश्या यानी कंजरी

भगवानके सामने नृत्य करती करती मरगई तो स्वर्ग में जायकर चंद्रकान्ता नाम करके अप्सरा होती भई फिर स्वर्ग से आयकर ब्रजभूमिमें अमुक नामकी गोपी बनी (उत्तर) पद्मपुराणके अंतर्गत कार्त्तिक माहात्म्यहै परंतु वहां पर यह वार्त्ता है नहीं लिखाहुआ कार्तिक माहात्म्य किसी वेश्यागामी के होवेगा सो कंजरों का स्वभाव होताहै बहुत करके वेश्या की वार्त्ता लिखदेना एक तो वो बनाने वाले शूद्र से पूछना चाहिए कि सतयुगमें तो सब लोग योग अभ्यासीथे मंदिरतो थाही नहीं कोई दूसरे सतयुगमें सबलोग सत्य वादीथे पर स्त्रीगामी वेश्या गामी कोई नहीं था तो बिदितहोता है कि कार्त्तिक माहात्म्य में जिस्नें वेश्याकी कथा लिखीहै उस्का बाप दादा जरूरही वेश्यागामी होवेगा क्यों कि चोर को आम विश्व चोरही दीखताहै और सत्यबादी को आम विश्व सत्य वादीही दीखताहै यह बात प्रत्यक्षमें देखना चाहिए कि यदि कोई ब्राह्मण मद्य मांसा हारी तथा पर स्त्रीगामी होवे गातो वह दूसरे को वही उपदेश करेगा अजी मद्य मांसका खाना वेदमें लिखाहै पर स्त्री गामी भी वेदमें लिखाहै

यदि ग्रंथ भी लिखेगा तो इसकी पुष्टि करेगा तो जान लेनाचाहिएकि यहतो पापी डूबाहीहै दूसरेको-भी डूबावना चाहता है अबदेखिएकि जिस्का फल प्रत्यक्षमें आदिमेंभी बुरा और अंतमें भी बुरा मदिरा शराव पीने वाले को देखिए कि पहिलेतो वह शराव पीकर व उन्मत्त होकर मोरीमें गिर पडते हैं फिर मोरी में का पेशाव वगैरह उनके मुंहमें जाताहै दूसरे कुत्ताजी आयकर उनके मुंह चाटताहै क्यों कि मांस वगैरह के खानेसे उनके भी मुंहसे दुर्गंध आतीहै तीसरे वही उन्मत्त होकर परस्त्रीके गमन करने के लिये दूसरे के मकानमें घुसगये और किसीने पकड लिया तो इतने छित्तर पडतेहैं कि सिर के वालतक उडजातेहैं अब उस मूरख से पूछना चाहिये कि प्रत्यक्ष तो इनका यह फल है तो अगाडी भी उस्का नतीजा यही है इति ।

(प्रश्न)

महाराज पिछले युगों में मद्य मांस आहारी होते थे या नहीं क्यों कि कुम्भकरण आदिक राक्षसों का मद्य मांस खाना लिखाहै । रामायण आदिकमें तथा अन्य पुराणोंमें भी लिखाहै तथा और कंस आदि कों का भी लिखाहै[उत्तर] दोसम्पत्ति आदिसे ऐसीही

चली आती हैं एकतो दैवी सम्पति दूसरे आसुरी सम्पति सो दैवी सम्पति के वास्ते तो मदिरा मांस आदिक वर्जित है और आसुरी सम्पति वाले खाते चले आये हैं मनुष्यों में भी जो सत्यबोलने वालेहै और अपने धर्म्म से न चलायमान होनेवाले भक्ष अभक्ष नहीं खाने वाले परमेश्वर का भजन करने वाले ऐसे पुरुषको जान लेनाकि दैवी सम्पत्ति वाले हैं सो कृष्णचन्द्रजीने गीतामें कहा है दोनों का लक्षण।

श्री भगवान उवाच

अभयं सत्व संशुद्धि र्ज्ञान योग व्यवस्थितिः
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्याय स्तप आर्जवम् ॥
अहिंसा सत्य मक्रोध स्त्यागःशान्तिर पैशुनम् ।
दया भूतेष्व् लोलुप्त्वं मार्दवं हीरचापलम् ॥ २
तेजःक्षमाधृतिः शौच मद्रोहो नाति मानिता ।
भवंति संपदं दैवी मभिजातस्य भारत ॥ ३ ॥

अभय अंतःकरण शुद्धि ज्ञान योग निष्ठा न्यायसे संचित कियाहुआ धन, सुपात्रकोदेना मन कानिग्रह, फलकामना रहित यहां यज्ञादिका अनुष्ठान वेदाभ्यास, भगवत् प्रीति जनक शरीर क्लेशादि. सबमें सरलता।

परपीडा निवृत्ति या भूतहित सत्य वाक्य

अक्रोध, त्याग, इन्द्रिय निग्रह, किसीकी चुगली न करना.सब भूतोंमें दयारखना, विशेष लोभ न करना मृदुता, अकर्त्तव्य, कार्य्य में लज्जा, चपलता का त्याग ॥ २ ॥ तेज, क्षमा, धैर्य, शौच (अंतर बाह्य शुद्धि) अद्रोह और अति मान न चाहना हे भारत मेरी दैवी अज्ञाननिवृत्ति रूप सम्पति भोगनेके अर्थ जन्मने वाले पुरुषों को यह सम्पूर्ण गुण प्राप्त होते हैं ॥ ३ ॥

(इति दैवी सम्पत् समाप्त)

" अथ आसुरी सम्पती आरम्भ "

श्री भगवान् उवाच

दम्भोदर्पा भिमानश्चक्रोधः पौरुष मेवच ।
अज्ञानं चाभि जातस्य पार्थ सम्पद मासुरीम् ॥

हे पार्थ । दंभ दर्प अभिमान क्रोध पौरुष और अज्ञान ये सब आसुरी सम्पत्ति वाले पुरुषके जन्म-ही से लक्षण होतेहैं ।

दैवी सम्पद्वि मोक्षाय निवन्धायासुरी मता ।
माशुचः संपदं दैवी मभिजातोऽसि पांडव। "

हे अर्जुन दैवी सम्पतिसे मोक्ष और आसुरीसे बंधन प्राप्त होताहै इसवास्ते तू शोक मतकर क्यों कि तू दैवी सम्पति भोगने के लिये उत्तम कुलमें पैदा हुआ है ॥

द्वौभूत सर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एवच ॥
दैवो विस्तरशः प्रोक्तः आसुरं पार्थ मे शृणु ।

इसलोकमें प्राणियोंके दैव और आसुर ये दोनों प्रकार के सर्ग है तिनमें दैवी सर्ग विस्तार पूर्वक कथन किया है हे पार्थ अव आसुर सर्गको मुझसे सुनो ।

प्रवृत्तिंच निवृत्तिंच जना न विदुरासुराः ।
नशौचं नापि चाचारो नसत्यं तेषु विद्यते "
असत्य मप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम्
अपरस्पर सम्भूतं किमन्यत्काम हैतुकम्

वेअसुर स्वभाव वाले लोग स्वयं झूठे होनेके कारण यह सव जगतभी असत्यहीहैं अर्थात्, धर्म्म और उनके फलभूत लोक यह सव प्रमाण रहित झूठाहीहै. ऐसा कहतेहै, अप्रतिष्ठित अर्थात् इस जगतमें किसी को सुख और किसी को दुःख यह जो विषमता प्राप्त होती है उस्का कारण धर्म्म और अधर्म नहींहै किन्तु प्राणियोंको विना कारण के आपही सुख दुःख प्राप्त होते हैं ऐसा असुर स्वभाव वाले कहते हैं ।

एतां दृष्टि मवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्प बुद्धयः ।
प्रभवत्युग्र कर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥ ९ ॥

काम क्रोध लोभ मोह रूप रज तमो गुण के दोषसे मलीन चित्त होनेसे तुच्छ विषम भोगमें लंपट होने वाले और अपने घोर कर्मोंसे अन्य लोगों को पीडा देके अपने देहका पोषण करने वाले वे मंद-मति दुष्ट लोग ऐसे, असत्य " आसुरी सम्पति वाले होते हैं ।

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमान मदान्विताः ।
मोहाद्गृहीत्वा ऽसद्ग्राहान् प्रवर्तन्तेऽशुचि व्रताः ॥

वेजगतका कैसे नाश करते है यह दिखाते हैं हे अर्जुन हजारों करोडों वर्षोंतक विषय भोग भोगने परभी पूर्ण न होसके ऐसी इच्छा का आश्रय करके और दम्भ मान मद इनसे युक्त होनेके कारण मोहसे अनर्थ कारक और वेद शास्त्रों के विरुद्ध ऐसे दुराग्रहों के मतों को स्वीकार करके वे लोग जिनमें अमङ्गल व नरक प्रद नियम है ऐसे अपने अपवित्र व्रतोंके आचरण से सारे संसार की हानि करने को प्रवृत्त होते हैं ।

चिन्तामपरिमेयांच प्रलयान्ता मुपाश्रिताः ।
कामोपभोग परमा एता वादिति निश्चिताः॥११
आशा पाश शतै र्बद्धाः काम क्रोध परायणाः
ईहन्ते काम भोगार्थं मन्यायेना र्थ सञ्चयान्॥१२

वे लोग इस उपायसे हमारा अच्छा होगा या बुरा विषय भोग मिलेंगे यानहीं इस काममें सिद्धि होगी या नहीं इत्यादि मरण तक सदा बहुतही चिन्ता करतेहैं और विषय भोगने में तत्पर होके विषयों का उपभोग लेना यही परम पुरुषार्थ है ऐसा निश्चय करतेहैं और असंख्य आशारूप पाशों से बद्ध होनेके कारण काम क्रोधोंके वश होके विषय भोग भोगनेके लिये शास्त्र के विरुद्ध अन्यायसे छल बल करके धन आदिका संग्रह करने की इच्छा करते हैं।

इद मद्य मया लब्ध मिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ।
इदमस्तीद मपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥
असौमयाहतः शत्रु र्हनिष्ये चापरानपि ।
ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोहं बलवान् सुखी॥ २४॥

अबवे आशा पाशोंसे बद्ध कैसे होतेहैं सो कहते हैं आज मैंने चाहा यह धन पाया इसके आगे में इस कामना को पाऊंगा यह तो मेरा धनहै ही और फिर यह भी धन मुझे मिलेगा मैंने आज शत्रुको मारा और दूसरे जो शत्रु है उन्हें भी मारूंगा में विद्या धन ऐश्वर्य्य आदिसे समर्थ हूं मैंही उनका उपभोग लेनेवाला हूँ लडका पोता धन धाम आदि

सब मेरेहैं इस लिये मैं कृतकृत्यहूं वैसेही बलवान् और सुखी भी मैंही हूं ॥ १४ ॥

आढ्योऽभि जनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशोमया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञान विमोहिताः
अनेक चित्त विभ्रान्ता मोहजालसमावृताः
प्रसक्ताः काम भोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥१६॥
गीता १६ अ०

में धनाढ्य और कुळीन हूं मेरे समान दूसरा आदमी कौनहै मैं बडाई धन और जीवन् (आयु) इनकी वृद्धि के वास्ते यज्ञ करूंगा दान करूंगा और बडाई आनंद पाऊंगा हे अर्जुन! ऐसें अनेक प्रकार के मनोरथोंसे उनके चित्तको अत्यंत भ्रम होजाने से और मोहरूप जालमें पडनेसे वे मूर्ख लोगविषय भोग सेवन करनेमें आसक्त होनेके कारण अपवित्र रौरवादि नरकोंमें पडते हैं ।

(तथा असुरों के लक्षण श्रीधर स्वामी ने ऐसे लिखेहैं)

असुचीनि मद्य मांसादि विषयाणि व्रतानि येषांते असुचि व्रताः असुराः

(इति तत्वार्थः)

(प्रश्न)

महाराज बाम मार्गी कहतेहैं कि मद्यमांस खाना

वेद में लिखाहै [उत्तर] वेदको साक्षात्वेद का कर्त्ता परमात्मा श्री कृष्णचन्द्र ने त्रिगुणात्मक कहाहै ब्रह्मविद्या श्रीमद्भगवत गीता में।

त्रैगुण्यविषयावेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्द्वो नित्य सत्वस्थो निर्योग क्षेम आत्मवान् ॥

हे अर्जुन वेदात्रिगुणात्मकहैं अर्थात् तीन गुणोंको कथन करने वाले हैं तमोगुण रजोगुण सतोगुण अब सोचनाचाहिये जब वेदही भगवान ने त्रिगुणात्मक कहेहैं तो स्मृति पुराण और महाभारतादिक का कहना ही क्याहै

दूसरे भागवत एकादश स्कंधमें उद्धवके प्रति श्याम सुन्दर ने कहाहै कि हेउद्धव परोक्षवाद वेदाः हे उद्धव वेद परोक्षवाद हैं

(प्रश्न)

महाराज वेद उत्तम है कि श्रीमद्भगवत गीताउत्तम है सो कहिये [उत्तर)

वेदका भी कर्ता श्री परमात्मा कृष्णचन्द्र है और श्री मद्भगवत गीता का भी कर्ता परमात्मा श्री कृष्णचन्द्र है वेदहै त्रिगुणात्मक और गीता साक्षात् सतोगुण ब्रह्मविद्याहै इसवास्ते वेद से उत्तम है क्यों

कि लिखाहींहै सर्व शास्त्र मयीगीता सर्व देव मयो
हरिः । सर्व तीर्थमयी गङ्गा सर्व धर्म्मो दयापरः ॥
सारथ्य मर्जुन स्यादौ कुर्वन् गीता मृतंददौ ।
लोक त्रयोप काराय तस्मै कृष्णात्मनेनमः॥६॥
देवकीनन्दनः कृष्णो गीता पाठेन तुष्यति
यथा नवेदै र्दानेन यज्ञ तीर्थ व्रतादिभिः ॥
यत्रगीता बिचारश्च पठनं पाठनं तथा ।
तत्राहंनिश्चितं पार्थ निवसामि सदैवहि ॥
गीतामे हृदयं पार्थ गीतामे सार मुत्तमम् ।
गीतामे ज्ञान मत्युग्रं गीतामे ज्ञान मव्ययम् ॥
गीतामे चोत्तमं स्थानं गीता मे परमं पदम् ॥
गीतामे परमं गुह्यं गीतामे परमो गुरुः
गीता श्रयेऽहंतिष्ठामि गीतामे परमं गृहम् ॥
गीता ज्ञानं समाश्रित्य त्रिलोकीं पालया म्यहम् ॥
गीता मे परमा विद्या ब्रह्मरूपा नसंशयः ॥
अर्द्ध मात्रा क्षरा नित्य मनिर्वाच्य पदात्मिका ।
गीता नामानि वक्ष्यामि गुह्यानिशृणु पांडव ॥
कीर्त्तनात्सर्वपापानि विलयं यान्ति तत्क्षणात् ।
गीता गंगाच गायत्री सीता सत्या सरस्वतीः ॥
ब्रह्म विद्या ब्रह्मवल्ली त्रिसन्ध्याभुक्ति गेहनी ।
अर्द्धमात्रा चिदानंदा भवघ्नी भय नाशिनी

वेद त्रयी परानन्ता तत्वार्थ ज्ञान मञ्जरी
इत्येतानि जपेन्नित्यं नरोनिश्चलमानस :
ज्ञान सिद्धिं लभे च्छीघ्रं तथान्ते परमं पदम्
येशृण्वान्ति पठन्त्येव गीताशास्त्र महार्नेशम्
नते वैमानुषाज्ञेया देव रूपान संशयः इति

(प्रश्न) महाराज वाममार्गी कहतेहै कि वैष्णव तो व्यभिचारी होतेहैं क्योंकि आपतो साक्षात्कृष्ण वनते हैं और पर स्त्रियोंको बुलाते हैं और अपने मंदिरों में और रास क्रीडा आदिक व्यभिचार करतेहैं तथा इनके ग्रंथों में भी लिखाहै रासक्रीडा आदिक [उत्तर] जो कोई ऐसा कर्म करे जरूर ही व्यभिचारी दुष्टात्माहै और उसको तो साक्षात् छिपे हुये वाममार्गी कहना चाहिये यदि ऐसा कोई करता होगा कोई पाखंडी ऐसा करता होवेगा जोकि पर स्त्रीगामी होवेगा क्योंकि परमात्मा श्री कृष्णचन्द्रजी ने रास विहार किया तो अपने भक्तों का उद्धार करने के लिये परन्तु व्यभिचारियों को एक निमित्तमिलगया कि आप तो कृष्ण रूप वन गये और पर स्त्रियोंको बुलाकर रास क्रीडा आदिक किया तो उससेबढकर और कौन पापी संसार में होवेगा परन्तु हम वामकौलो

से पूछतेहैं कि जो कोई ऐसा कर्म करे सोही छिपे हुये वाम मार्गी होसकतेहैं दूसरे वैष्णव नहीं हो सकते तुम्हारे कहनेसे निम्बार्क सम्प्रदाय के सैंकडों ग्रंथहै जिसको इस बात का संदेह होवे सो देखलेवे कहीं उनके ग्रंथ में नाम भी नहीं है रास क्रीडा आदिक का भागवत में अर्थात् जो श्रीकृष्ण चन्द्रने रास क्रीडा कियाहै उसको जरूर मानतेहैं दूसरेइस सम्प्रदाय केआचार्य जितने आदि और पीछे सेहुये सो सब विरक्तही होते आयेहैं यद्यपि इस सम्प्रदाय के ब्राह्मण क्षत्री वैश्य हजारों बहुत लाखोंहीसेवक है परंतु गद्दी वाला जोआचार्य है विरक्तही बैठेगा इति अब किंचित ग्रंथोंका नाम लिखतेहैं निम्बार्क; भाष्य, वेदान्त, पारिजात, सौरभ, श्री निबासा चार्य्य भाष्य वेदांत कौस्तुभ केशव काश्मीर भाष्य कौस्तुभ प्रभः वेदातरत्न मंजूषा श्रुतिसिद्धान्तसंग्रह श्रुतिसिद्धान्तरत्नाकर जान्ह बीसेतु विवरण प्रपक्षगिरिवज्र श्रुतिसुद्रुम श्रुति संग्रह, गीताकेशवभाष्य; वैष्णव धर्म मीमांसा, इनग्रंथोंमें कोई भी रास क्रीडा आदिक कावर्णन नहीं आया इनसे अतिरिक्त जो और भी ग्रंथहै उनमें भी कहीं नहीं है क्योंकि येतो सम्प्रदायवाले

तो मुख्य निवृति मार्ग कोही मानतेहैं जो इनका ग्रंथहै सो सब वेदान्त में है इति

(प्रश्न)

महाराज गोमेध यज्ञ जो वेद शास्त्रमें लिखाहै सो सच है (उत्तर) गोमेध यज्ञ ठीकहै परन्तु गोमेध कायह बिधान नहीं है कि गौका वधकरनायज्ञमें गोनामाइन्द्रयों काहै गो नाम पृथ्वी काहै इनको शुचि पवित्र करके रखना इस्का नाम गोमेध यज्ञहै यदि विस्तार देखना हो तो ब्रह्मदर्शन नाम का ग्रंथहै देखलेना औरजो पुराणोंमें तथा महाभारत में रन्त देवकी गाथा लिखीहै किरन्त देव राजा गोमेध यज्ञ करता भयाहै परन्तु वहां ज्यादा विस्तार लिखागया है यहां नहीं लिख सक्ता हूं सो जिस समय यवनोंका राजभया है उस समय में द्रव्यके लंपटोंने उनको कुछ द्रव्य देके ऐसे हिंसक वाक्य ग्रंथों में पवाय दिये हैं और येभी दुष्टों का कथन है कि यज्ञ आदिकमें पशु मारा जाता है वह हिंसा नहीं हैं तहां ऐसा कहने वाले दुष्टों को पहिले मारकर देखना चाहिऐ कि देखें तो सही तेरेको दर्द होताहै कि नहीं और फिर देखिए कि दुष्ट लोग ऐसा अर्थ करते हैं कि नर-

को मारकर यज्ञमें हवन करना सो केवल पाखंडियों का कथन है नरमेध यज्ञका मतलब तो यह है कि विधि के साथ मनुष्यकी मृत्यु संस्कार करना यह नर मेध है।

(प्रश्न)

सर्व यज्ञोंमें उत्तम कौन यज्ञहै श्रीमद्भगवत गीता में श्री कृष्णचन्द्रने सर्व यज्ञोंसे उत्तम यज्ञ जप यज्ञकहा हैं।

यज्ञानां जप यज्ञोऽस्मि इति,,

भागवत एकादश स्कंधमेंभी उद्धव के प्रति कृष्णचन्द्रने कहा है।

यज्ञानां ब्रह्मऽयज्ञो स्मिइति

तथा नारद पंचरात्र में जप यज्ञही उत्तम लिखाहै इति

महाराज पुराणों में लिखाहै तथा मनु स्मृतिमें कि पीछे मांस के पिण्ड दिये जाते थे, सो देखिये यह श्लोक लिखा है।

अश्वालम्भं गवालम्भं संन्यासं पैल पैत्रिकम्

देवराच्च सुतो त्पतिःकलौ पञ्च विवर्जयेत्

(उत्तर)नतोकोई पहिले गौकी हिंसा करताथा न कोई घोडे को मारता था और न कोई मुरदेको

मांस का पिण्ड देताथा यातो कोई दुष्टात्मा ने श्लोक बना दिया है और पुराण आदिकोंमें क्षेपक लिख दियाहै और यदि कलियुग में सन्यास वर्जित था तो साक्षात वैदिक धर्म्म के आचार्य्य स्वामी शंकराचार्य क्यों सन्यास को ग्रहण करते इसवास्ते निश्चय होताहै कि यह श्लोक पाखंडियों का बनायाहुआ है और जो मनुस्मृतिमें लिखाहै बकरे के, भेडके; सेहा, तथा पाटिआ गोह कच्छुप इत्यादि सो यह सब वाम मार्गियोंकी कृपाहैं जो ऐसे भ्रष्ट वाक्य लिख दिये हैं।

उसे महात्मा मनुजी और ऐसे भ्रष्टवाक्य वे कभी नहीं लिख सक्तेथे। इति

(प्रश्न)

महाराज एक मेरा संदेह कृपा करके छोडा दीजिये लिंग पुराणमें लिखाहै कि नरसिंहजीने हरिन कशिपु को मारा पीछे उनको इतना क्रोध उत्पन्न हुआ कि सबदेवी देवता डरगये और महादेवके शरणमें गये तो नरसिंह भगवानसे युद्ध करने के वास्ते वीरभद्र आता भया जो कि महा देव के क्रोधसे उत्पन्नहै क्रोधजो होताहै सो पाप कामूल होता है और स्कंध पुराणमें भी ऐसाही लिखा-

है परंतु उसमें इतना भेद लिखाहै कि नरसिंह जीका क्रोध शान्त करनेके वास्ते सर्व देव आया आकाश मार्ग से और शिव पुराण में लिखाहै कि नारायण वीर भद्रके सामने से भागगये (उत्तर) बापने मारी गीदरी लडका तीरअंदाज। हम ऐसे मूर्ख से पूछतेहैं कि उस समय वीर भद्र कहां गया था जिस समय हरिन काशिपुके मारे सब देवी देवता भागते फिरते थे और देवी देवता मूर्ख थे जो खामखाह महादेव के शरणमें भागजाते क्यों कि देवी देवता का भय छुडावने के वास्ते दुष्टको माराहीथा, दूसरे विष्णु अज्ञानी थे जो कि क्रोध उत्पन्न होता नही यह राक्षस लोगोंने ऐसे आक्षेप पायदियेहै जोकि विश्नु का द्रोहीहै दूसरे ये तमोगुणी पुराण छःहै सो पद्म पुराण में लिखाहै।

मात्स्यं कूर्म्मं तथा लैङ्गं शैवं स्कंधं तथैवच आग्नेयञ्च षडेतानि तामसानि प्रचक्षते।

मत्स्य पुराण; कुर्म्म पुराण; लिंग पुराण, शिव पुराण स्कंध पुराण अग्नि पुराण। यह छः पुराण तमोगुणी है और मनुजी कहते हैं जोवेद विरूद्ध स्मृति पुराण है उनका पढना सुनना निष्फल है।

यावेद वाह्याः स्मृतयो या श्च काश्च कुदृष्टयः

सर्वास्ता निष्फलाः प्रोक्ता स्तमोनिष्ट हितास्मृता;

फिर पद्म पुराण के ब्रह्मोत्तर खंड में ऐसा लिखा है श्रीभगवान उवाच ।

त्वंरुद्रो महाबाहो मोहनार्थं सुरद्विषाम् ।
पाषंडा चरणं धर्मं कुरुष्व सुरसत्तम ॥ २ ॥
कंकालशैव पाखंड महाशैवादि भेदतः ।
तथा पाशुपतं शास्त्रं त्वमेव कुरु सत्तम ॥
अबलच्छय मतं सम्यक वेदबाह्यद्विजो धमा. ॥

श्री भगवान बोले कि हे रूद्र हे महाबाहो आप तमोगुणी वृत्तियों वाले राक्षसोंको मोहने के वास्ते पाखंडा चरण रूप धर्म्म प्रगट करो कंकाली मतं अर्थात जोकि अस्थि आदिको कण्ठमेंधारण करते हैऔर पाखंड बाद महा शैवादि मत भेदकरके और पाशुपत शास्त्र को रच अर्थात पाशुपत तंत्र रच जिसमें शैवमतकी उपमाहै वेदसे बिरुद्ध जो ब्राह्मणों में नीच हैंवेब्राह्मण वह भस्म धारण करने लगेंगे तथा अस्थियों को धारण करने लगेंगे

भस्मास्थि धारणः सर्वे भविष्यन्ति नसंशयः॥३॥

फिर पद्मपुराण में शिवजीने पार्वती के प्रति ऐसा कहा है

शृणुदेवि प्रवक्ष्यामि तामसानि प्रचक्षते । येषां श्रवण मात्रेण पातित्यं ज्ञानिनामपि,प्रथमंहि मयैं वोक्तं शैव पाशु पतादिकम् ॥ इति

शिवजी वोले हे पार्वती सावधान होकर सुनजो मैंने पूर्व कालमें पाशुपत शास्त्र कहाहै शैव मत महा शैव मत तथा पाशुपत आदि तन्त्र कि जिस्के श्रवण करने से ज्ञानी पुरुषभी पतित हो जाते हैं यदिकोई इसबात का संदेह करै कि शैवमतका तो प्रतिपादन दुर्वासा उपमन्युने किया है उस्का उत्तर यहहै कि इन दश ब्राह्मणों की बुद्धि पहिलेही शिवजीने भ्रष्ट करदी थी सो पद्म पुराण में लिखा है ।

शिवके प्रति नारायण कहतेहैं

मद्भक्त्या तान् समाविश्य कथयस्वच तामसान्
कणादं गौतमं शाक्ति मुपमन्युंच जैमिनीम् ॥
कपिलं चैव दुर्वासं मृकण्डञ्च बृहस्पतिम्
भार्गवं जामदग्न्यंच दशै तान्स्तमसा वृतान्

श्री नारायणजी वोले कि हेशिव तू मेरी भक्ति से युक्तहै तूमेरी आज्ञाकर कि इन दश ऋषियोंका भी तामसी धर्मोंका उपदेश कर कणाद; गौतम

बृहस्पति, भार्गव, परशुराम. जामदग्न्य इनकी बुद्धिको शिवने भ्रष्ट कर दिया इति।

(प्रश्न)

महाराज महाभारतके द्रोणपर्वमें अश्वत्थामा के प्रति वेदव्यासजीने रुद्र की उपमा करीहै।

[उत्तर]

यादृशी शीतला देवी तादृशःखर वाहनः

जैसामूर्खों सरीखा अश्वत्थामाने प्रश्न किया वैसा वेदव्यास जीने उसकी रुचि अनुसार उत्तर दिया क्योंकि कोई घासके वेचनेवाले से हीरा मोतियों का हाल जौहरी बखान करे तो वृथाहै;

अर्थात् अश्वत्थामा व्यासजीसे पूछता है कि हे व्यासजी अर्जुन और कृष्णचंद्र मेरे नारायण अस्त्र से क्यों न दाह भये तो अब सोचना चाहिये कि यदि वह विचारवान और विद्वान् होता तो जानता कि अग्नि आदिक जो तत्वहै उनके उत्पन्न करने वाले साक्षात् कृष्णचन्द्रहै और नारायण को भी उत्पन्न करने वाले कृष्णचन्द्र हैं तो उनको नारायण अस्त्र क्या दाहकर सक्ता है अब कहोऐसे मूर्ख के वास्ते वेद व्यासजी क्या उपदेश देवै वेद व्यासजी योगीराज थे उन्होंने सोचा कि गुणों में

गुणोंकीप्रवृति होती है यह तमोगुणी रुद्र के अंश से उत्पन्न भयाहै इसवास्ते इसकी रुचि रुद्रही में होगी दूसरे में नहीं सो कहाभी हैं श्री मद्भगवत गीतामें,;' गुणा गुणेषुवर्त्तते इतिमत्वान सज्जते,;" इति इसीवास्ते वेदव्यास जी वोले कि हे अश्वत्थामा पूर्वकालमें तैने शिवजीके सगुण लिङ्गका पूजन कियाहै और अर्जुन ने निर्गुण लिङ्ग की पूजा की है इसी वास्ते तेरेसे बलवान है इति,,"यदि कोई यह सन्देह करे कि अश्वत्थामा तो वडा वीर लिखा है महा भारतमें तोवीर लिखने वाले को हम पूछते हैं कि कर्म तो किया नपुंसकों के समान कि सूती हुई पान्डवों की सब सेना मारी तथा गीदड के समान भागा तो फिर वीर कैसा इति। इस्की गाथा हम उत्तरार्द्ध में लिखेंगें।

[प्रश्न]

महाराज ब्रह्मखन्डमें शिवजीको तथा दुर्गा को श्याम सुन्दर ने वर प्रदान कियाहै कि हेशिवमेरे से बढकर प्रकृति संयुक्त जो तेरी पूजा करेंगे वे मेरे धामको प्राप्त होवेंगे इति। दूसरे यह पद्म पुराण का सिद्धान्तसुननेसे तो शिव भक्तोंकी श्रद्धा

विलकुलटूट जावेगी इति [उत्तर] ब्रह्मखन्डमें श्यामसुन्दरने जो वर प्रदान शिवजी को दियाहै सोठीक है क्योंकि जो कोई सतोगुण सम्पन्न यानी सात्विक कर्मोंसे हिंसा दंभ वर्जित पक्षपात वर्जित और पाखंड वर्जित जो शिव की तथा पार्वती की तथा गणेशकी; तथा सूर्य्य की पूजा करेंगे, वे परमात्माको प्राप्त होवेंगे सत्यकी कृपासे- यदि पाखंड धर्मोंका आचरण करेंगे जिन्होंकी निन्दाहैं शास्त्रमें तो नरक को जावेंगे "इति"

[प्रश्न]

महाराज जो देवताको दी हुई अर्थ भूमिको छलसे अथवा कपट से अथवा दंभपाषंडसे धोखेमें लेलेतेहैं तोधर्म्म शास्त्रमें क्या दंड लिखाहै उसके वास्ते । उत्तर

स्वदत्तां परदत्ताञ्च योहरेद्वैवसुन्धराम्
षष्टि वर्षसहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः॥१॥

अपनीदीहुई अथवा दूसरेकी दी हुईवसुंधरा अर्थात् पृथ्वी जो देवताके निमित्त हैं और उसको जो पापी छल पाखंडकरके दवाय लेताहै तो उसके दवावनेसे मरके साठ हजार वर्षतक विष्टा का कीडा वनताहै ।

[प्रश्न]

महाराज विश्वास घातियों को क्या दंड लिखा है धर्म्मशास्त्रमें

मित्रद्रोही कृतघ्नश्च येच विश्वासघातकाः ।
तेनरा नरकं यान्ति यावत् चन्द्रादिवाकरौ ॥

एकतो मित्रसे द्रोहकरने वाला दूसराकिये हुये परोपकारको भूलनेवाला तीसरे विश्वास घातियों ने विश्वास कई प्रकारकेहोतेहैं एकतो विश्वाश घाती होताहैं जोकि दूसरे को वस्तु देनेको कहा फेर नहीं देना। दूसरा विश्वासघाती बहहोताहै जो दूसरे के संगमें धोखावाजी करतेहैं एकतरह का विश्वास घाती येभी कहाजाताहै ऐसे पुरुषपापी यावत् सूर्य्य चन्द्रमाहैं तबतक नरकमें बास करते हैं ॥

प्रश्न

महाराज एक मेरा संदेह कृपाकर छुडादीजिये कि स्वामीदयानंदजी नेऐसे महान् विद्वान होकर मूर्ति पूजा का क्यों खंडन किया तीसरे उन्होंने बहुतोंकी निन्दाकी। इति

उत्तर

स्वामीदयानंदजी ने पाखंडियोंका पाखंड देख

कर मूर्ति पूजाका खंडन किया क्योंकि देखने में आवते हैं कि जो बडे २ मंदिर स्थानहै वहां कहीं पर सुना जाता है कि अमुक जगह श्री ठाकुरजीका सातसौ रुपेय रोजका भोग लगता है दूसरे कहीं सवासौ रुपे रोजका भोगलगताहैं तो अब उन स्थानों के कायदे देखिये कि जो गृहस्थी जावे माईदाई आदिक धनपात्र और श्री ठाकुरजी में वहुत से द्रव्य आदिक चढावे तो उनको तो रहने की जगह भी अच्छी मिले कमरे आदिक औरमंझी दरी गलीचे आदिक भी विस्तरे मिलजावे और छप्पन प्रकारके भोजनभी मिलजावे और जोकहीं विरक्त महात्मा सन्यासी अथवा बैरागी तूंवी लंगोटी वाला जाय पडे तो पहिले ड्योढीदार ही धक्के लगावे प्रारब्धसे कहीं ठाकुरजी के दर्शन होभी जावे परन्तु खाने के वास्तेतो हरिहर है

यदि अधिक अडकरै तो ड्योढीदार दो धक्के और लगावै सोचेकि अब कोई विद्वान् इसबात को सोचेकिऐसेपाखंडियों कास्वामीदयानंदजी मर्दन किया तो क्या अनर्थ किया क्योंकि स्वामीदया नंदजी नहोते तो पाखंडियों का कौन मर्दन

करता वामकौल आदिक पाखंडी थे उनकी खबर तो स्वामीजी नेही लीहै और पुराण भारत स्मृति आदिकों को तो वाममार्गियोंने तथा पाखंडियोंने सबमें आक्षेप पाय दीयाहै इसवास्ते स्वामीजीने नहीं मानाहोगा क्योंकि धर्मसनातन परतो पहिलेही अज्ञानता छारहीहै कि पुराण स्मृतिसे आक्षेप वाक्य नहीं निकाले दूसरे एक परमेश्वरको छोड़कर तेतीसकोटोंको पूजने लगे ॥ फेर नामतो रखा जगतजननी और खानेको देना भैंसा बकरे। अब उन मूर्खों से पूछना चाहिये कि जब जगतकी जननी हुई तो क्या भैंसे बकरे की माता नहीं हुई या भैंसा बकरा जगतसेअलगहै ऐसेरअनेकगपोडपुराणआदिकोंमेंहै कहांतक लिखे जावे

सर्वव्यापी सर्व्व का कर्ता सर्व्वके हृदय कमलमें बास कररहाहै जो सबकी रक्षा कररहाहै उस परमेश्वर को याद करना चाहिये जिस परमेश्वर ने सब देवी देवता को उत्पन्न किया है क्योंकि इस बात में कोई पक्षपात नहीं है जिसको जैसी रुचि होवे चाहेतो परमेश्वर के निर्गुण स्वरुप का भजन करे और चाहे सगुण स्वरूपका भजन करे

स्वामी दयानंदजीने निर्गुण परमात्मा मानाहै तो हमारी इसमें कोई हानि नहीं है क्योंकि परमात्मा निर्गुण भी है सगुणभी है [इति] और शास्त्रमें कर्म मुख्य मानागया है यदि ब्राह्मण नीचे कर्म करे मद्यमांस खाने लगे तथा परस्त्री वेश्या आदि से गमन करेतो उस्को उत्तम नहीं मानना चाहिये और शूद्र यदि अपना नीच कर्म छोड देवे और परमेश्वरको याद करै तो वह शूद्र उत्तम मानने योग्य है उसकर्म्महीन ब्राह्मण से परंतु उसके संग सम्वर्त्ती नहीं होना चाहिये अर्थात् उसके संग खाना पीना नहीं चाहियें तथा मद्य मांसका जो आहारी है पृथ्वी का बोझ रूप है ॥

मांस भक्षैः सुरापानैः मूर्खैश्चाक्षरवर्जितैः ॥
पशुभिः पुरुषाकारै र्भाराक्रान्तास्तिमेदिनी ॥ १

मांस के भक्षण करनेवाले सुराकहियेमादिरा पीने वालेमूर्ख कहिये कि शास्त्रपढाभी है और रहस्य नहीं जानता दूसरा वह मूर्ख कहिये जिसको अक्षर का ज्ञान नहीं हो यह तो निश्चय करके पशुहै परंतु पुरुष मात्रका आकार है इनेंम ऐसे पापियों के बोझा करके पृथ्वी पीडित रहतीहै

[प्रश्न]

महाराज यदि विद्याका पढाहुआ ब्राह्मण होय और मद्य मांस आहारी होजाय तो उस्को क्या समझना चाहिये । उत्तर

उस्को राक्षस समझना चाहिये क्योंकि रावण कुंभकरण भी ब्राह्मण थे औरशास्त्र के पढेहुए थे पुलस्त्य ऋषिका पोतेऔर विश्वश्रवाके पुत्रथे परंतु मांस खाने लगे बुरे कर्म करने लगे इस्करके उनको राक्षस कहतेहैं राजा कंस उग्रसेनका पुत्रथा और यादव वंशी क्षत्री था परंतु बुरेकर्म्म करने लगा मद्य मांस खाने लगा और अधर्म्म करने लगा इसवास्ते उस को राक्षस लोग कहने लगे विभीषण तो राक्षसथा रावण का छोटा भाईथा प्रह्लाद हिरनाकुश राक्षस का पुत्रथा परंतु यह अच्छा कर्म करने लगे इसवास्ते इनकी विभीषण की प्रह्लाद की गिनती भागवतोंमें है और उत्तमकर्के माने गयेहैं इसवास्ते कर्म्म प्रधानहै कोई जातिप्रधाननहीं है और परमात्माको तो केवल कर्म्म ही प्यारा है । (सोश्रीकृष्ण चंद्रजीने श्रीमद्भगवत गीतामें कहाहै)

अपि चेत्स दुराचारो भजते मामनन्यभाक्
साधुरेव समन्तव्यः सम्यक् व्यवसितो हिसः

और हे अर्जुन मेरे भक्तोंका तो ऐसा अद्भुत प्रभाव है कोई जाति वर्ण या स्वभावसे कैसा भी पहिले भूलमें कोई उससे दुराचार भी होगयाहो फिर भी पारब्रह्म जोमैं और मेरी शरणागत होवे अनन्य भावसे क्योंकि वहमें ईश्वर भजनसेही कृतार्थ होऊंगा ऐसे अच्छी तरह से निश्चय करके वर्तता है ॥

क्षिप्रं भवतिधर्मात्मा शश्वच्छांतिं निगच्छति
कौन्तेय प्रतिजानीहि नमे भक्तःप्रणश्यति ॥

हे कुन्ती के पुत्र में सत्य प्रतिज्ञा करके कहताहूं मेरे भक्त का नाश कभी नहीं होता अर्थात् दुर्गति को नहीं जाता मेरे हीको प्राप्त होता है

(अथ उपासना ध्यान)

तहा परमात्माकी उपासना तीनतरहकीहै एकतो उपासना ध्यान यह है कि मंदिर में जाकर श्यामसुन्दर युगलमूर्तिका ध्यान दर्शन आदिक करना, पूजन करना दूसरे उपासना यह है कि समाधि लगाकर अपने हृदय कमल में ही परमात्मा की पूजा ध्यान आदिक करना सर्वोपरि उपासना यही है इसी को योग कहतेहैं भागवत एकादश स्कंधमें श्यामसुन्दरने उद्धव के प्रति कहाहै कि

हे उद्धव सब तरफसे मनको खींचकर मेरे चरणार विंदमें लगावना मेरे शिष्य सनकादिकोंने मुख्य योग का लक्षण यही कहाहै । ॥ इति ॥

तीसरी उपासना यह है कि परमेश्वर को सर्व व्यापी जानकर जडचेतनमें सबमें चिंतवन करना याने ऐसी कोई जगह नहींहैं जहां परमेश्वर नहींहै क्योंकि श्रुतिमें कहाहै ।

"सर्वं खल्विदं ब्रह्म"॥ इति

देव ऋषिके शिष्य भगवान् निम्बार्क मुनीन्द्र प्रणीत ध्यानम् ।

स्वभावतोऽपास्त समस्तदोष मशेष कल्याण गुणैकराशिम् ॥ व्यूहाङ्गिनं ब्रह्म परं वरेण्यं ध्यायेम कृष्णं कमलेक्षणं हरिम् ॥ १ ॥

स्वभावसेही भक्त जनोंके दोषोंको दूरकरनेवाले और समग्र सुखोंकी खान व्यूहाङ्गिनम् अर्थात् वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध ये चतुरमूर्ति भी आपही के हैं त्रिगुणी मायासे परे ब्रह्म जो श्रीकृष्ण चन्द्र कमलके समानहै जिन्हों के नेत्र भक्त जनों के पापों को हरने वाले ऐसे प्रभुका हम ध्यान करते हैं

अंगेतु वामे वृषभानुजां मुदा विराजमाना मनुरूप

सौभगाम् । सखी सहस्रैः परि सेवितां सदाध्यायेम् देवीं सकलेष्ट कामदाम् ॥ २ ॥

भा०—फिर श्री कृष्णचन्द्रजी कैसे हैं कि जिन के वाम भाग में वृषभानु नंदनीश्री राधिकाजी अति आनंद से विराजमान हैं और श्री कृष्णचन्द्र जी के तुल्य सुन्दर शोभा वाली ललिता विशाखा चन्द्रावलि से आदि लेकर हजारों सखी जिनकी सेवा कर रही हैं सकल मनोरथ कहिए धर्म्म अर्थ काम मोक्ष के देने वाले ऐसे श्री राधिकाजी का तथा माधव श्री कृष्णचन्द्रजी युगल स्वरूप का हम ध्यान धरते हैं । और कैसे हैं श्री कृष्णचन्द्र ॥

कन्दर्प कोटि लावण्य श्चन्द्र कोटि सुशीतलः ।
रवि कोटि प्रतीकाशो वायु कोटि महाबलः ॥

भगवान श्याम सुन्दर में कोट्यानु कोटि कामदेव के समान सुन्दरता है और कोटि चन्द्रमा के समान भगवान् श्री कृष्णचन्द्र के शरीर का प्रकाश है और कोट्यान कोटि वायु के समान भगवान में बल पराक्रम है ॥ इति ॥

शालिग्राम शिलाचक्रे करोति कृष्ण पूजनम् ।
तत्पादोदक नैवेद्यं नित्यं भुङ्क्ते चयः पुमान् ॥
स वैष्णवो महा पूतस्तन्मात्रोपासकः शुचिः ।

पुनाति पुंसां शतकं जन्म मात्रात्सबांधवम् ॥

भा०—शालिग्राम की मूर्ति द्वारिका के गोमती चक्र के संयुक्त जो पुरुष श्री राधिका माधव की पूजा करता है और मंत्र का जप करता है उसके सौ जन्म तक पिछले संचित कर्म अर्थात् पाप कर्म हैं वे नाश हो जाते हैं और कर्म बंधन से छूट जाता है ॥ इति ॥

(तथा नारद पञ्चरात्रे)

ब्राह्मणानां स्वधर्मश्च सततं कृष्ण सेवनम् ।
नित्यं नेभुञ्जते सन्तस्तन्नैवेद्यं पादोदकम् ॥

ब्राह्मणों कास्वधर्म यही है कि प्रति दिन श्री कृष्ण चन्द्रजीकी सेवाकरना और नित्य भगवत भोग लगाकर नैवेद्य और चरणामृत लेना किन्तु विप्रोंका यही नियम नहींहै कि नैवेद्य यही लैवे किन्तु क्षत्री और वैश्यादिक भी लेकर गति को पासकतेहै और भी ग्रंथांतर में लिखाहै ।

चतु वेंदीच यो विप्रः वासुदेवं न बंदते ।
वेद भार भरा क्रांतः समे ब्राह्मणगर्द भः

चार वेदोंका पढाहुआ ब्राह्मण होवे और यदि वासुदेव भगवानकी पूजा बंदना भक्ति नकरे खोते

के समान है क्यों कि वेदों का बोझारूप लादने वाला है।

"गीतामें भी श्यामसुन्दर ने कहा है"

स्त्रियो वैश्या तथा शूद्रास्तेऽपियान्ति परांगतिं
किं पुन ब्राह्मणाः पुण्याः भक्ता राजर्षय स्तथा ॥

हे अर्जुन स्त्रियां, वैश्य कहिये बनियां शूद्र कहिये भील आदिक येभी मेरे शरण को आयकर परम गति को जातेहै किं पुनःउत्तम कर्म्म करनेवाले ब्राम्हण और राज ऋषि कहिये क्षत्री भगत मेरे ये उत्तम गति को जाय तो इस्में क्या आश्चर्य्य है।

अथ टिप्पणी

श्याम सुन्दर की पूजामें कोई बंधन रूप नहींहै क्यों कि श्याम सुन्दर तो अभोक्ता है कोई भोग पदार्थोंके भूखे नहीं है यदि पदार्थों के भूखे होते तो दुर्योधन के छप्पन प्रकारके भोजन त्यागकर विदुर के घर साग क्यों खाते क्योंकि प्रभुतो केवल प्रेमके भूखे हैं यदि श्याम सुन्दर का दिया हुआ जो कुछ अन्न वगैरह होवै सो नारायण अर्पण भोग लगा देना चाहिये क्यों कि द्रौपदीने श्याम सुन्दर को सागकी एक पत्तीही तो दीथी उसीसे श्यामसुन्दर संतुष्ठ होगए थे और त्रिलोकी का पेट

भरगया था गजेन्द्र ने एक फूल हीतो श्यामसुन्दर को अर्पण कियाथा सो ग्राहको मारकर प्रभुने गजेन्द्रका उद्धार किया। " इति"

पत्रं पुष्पं फलं तोयं योमे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहंभक्त्युपहृत मश्नामि प्रयतात्मनः ॥

हे अर्जुन पत्र पुष्प फलजल जो मेरे भक्त सच्चे मनसे मेरे अर्पण करतेहै उसकोमैं वडी श्रद्धासे ग्रहण करताहूँ ॥ इति ॥

गोपाल चक्र चूडामणि

नाम्नि ग्रंथे तपस्वि रामचरणदास विरचिते

पञ्चमोऽध्यायः॥ ५ ॥

ॐ श्रीनिम्बार्काय नमः

" अथ वैकुण्ठ धाम वर्णन"

(तथा ब्रह्म पुराणे" ")

पुरा गर्गेण कथित मष्टा विंशतिमे युगे।
द्वापरान्ते हरेर्जन्म यदुवंशे भविष्यति ॥

पूर्वकालमें गर्गाचार्य्यने कहाहै कि वाराह कल्पके प्रारम्भमें अट्ठाईसवें द्वापर के अंतमें राजा यदुके वंशमें हरि अवतार लेंगे।

अथ श्रीमद्भागवते"

यत्र चाद्यः पुमानास्ते भगवानशब्द गोचरः

सत्त्वं विष्टभ्य विरजं स्वानां मृडयन वृष ॥

जहां श्रीभगवान् विरजानदीके किनारे पर शुद्ध सत्वमय रूपधारण किये और अपने सत्पार्षद को लियेहुये और जहांपर शब्द मात्रही श्रूयमाण है तहां अपने भक्तों तथा पार्षदों को सुख देतेहै ।

(उत्तर खण्ड २२८ वें अध्यायमें लिखाहै)

अत्राह तत्परंधाम गोपवेषस्य शार्ङ्गिणः ।
तद्भाति परमंधाम गोपैः गोभिस्सुखाह्वयैः ॥

वहही श्रीकृष्ण चन्द्र जी का परमधाम है जहां श्रीभगवान् गोप वेष धारण कियेहै और नानागोप तथा गो गणोंसे युक्त हो निवास करतेहैं और वह धाम अत्यन्तही शोभायमान है !

तद्विष्णुः परमंधाम यांति ब्रह्म सुखप्रदम् ।
नानाजन पदाकीर्णं वैकुण्ठं तद्धरेःपदम् ।

वही श्री विष्णु भगवान् का परम धाम है जहां नाना प्रकार के सुख है और नाना जनपदों करके शोभायमान है वही वैकुण्ठ धामहैं ।
उसी को श्रीभगवान् का परमधाम कहते हैं ।

प्राकारैश्च विमानैश्च सौधैरत्नमयै वृतम् ।
तन्मध्ये नगरी दिव्या सा ऽयोध्याचप्रकीर्तिता॥

वह वैकुण्ठधाम अनेक विमानों करके शोभाय

मान है और जहां सुन्दर२ मंदिर शोभायमान होरहेहैं रतन जडित उसी वैकुण्ठके मध्यमें अयोध्यापुरी दिव्य शोभायमानहै उसी वैकुण्ठके अन्तर्गत दशों अवतारों के मंदिरहै तथा चतुर्व्यूहके स्थान वहींहै तथा अस्त्र शस्त्र आदिकों के स्थान वहींहै विस्तार भयसे यहां नहीं लिखाहै

अथ ब्रह्मवैवर्त पुराणे ब्रह्मखंडे ।

अथ गोलोकधाम वर्णन ।

तेषा मुपरि गोलोके नित्यमीश्वर वन्दितः ।
त्रिकोटि योजनायां विस्तीर्णो मंडलाकृतिः ॥
तदधो दक्षिणे भागे पञ्चाशतकोटि योजनम् ॥
वैकुण्ठ शिव लोकन्तु तत्समं सुमनोहरम् ॥
कोटियोजन विस्तीर्णं वैकुण्ठं मंडला कृतिः
लये शून्यञ्च सृष्टौच लक्ष्मी नारायणान्वितम्
चतुर्भुजैः पार्षदैश्च जरा मृत्यवादि वर्जितम् ॥
सत्येच शिव लोकंच कोटियोजन विस्तृतम् ।
लयेशून्यञ्च सृष्टौच सपार्षद शिवान्वितम् ॥

भा०—सूत जी शौनक ऋषि से कहतेहैं कि एक समय प्रलय काल में सूर्य्यकी सदृश ज्योतिः समूह था जिससे करोडों ब्रह्माण्ड उत्पन्न होतेहै उसही ज्योति के अदर तीनलोक शोभायमान हैं सोहे

विप्रवर वह नित्यगोलोक स्थान ईश्वरके समान अर्थात् सच्चिदानंद रूपही विराजताहै जोकि तीन करोड योजन विस्तृत औरगोलाकारहै जहां रत्न मय भूमिहै बडेबडे योगी लोगभी नहीं देख सकते केवल भक्त जनही देख सक्तेहैं जहांजरा मरणादिक कुछभी नहीं है जहांपर करोडों गोपगोपियोंऔर श्रीराधिका सहित श्रीकृष्ण विराजमान हैं उसी गोलोक धामके नीचे पचास करोड योजन दक्षिण तरफ वैकुण्ठ और बायें तरफ शिवलोक शोभाय मान है जिनमें वैकुण्ठ १करोड योजन मंडलाकार विस्तृतहै जहांपर लक्ष्मी नारायण चतुर्भुज रूप से विराजतेहै वहांहीसे जगतकी उत्पत्ति पालन संहार होताहै वह वैकुण्ठ गोलोक से नीचे ५० कोटि दक्षिण तरफहै और उसीगोलोक धामके नीचे पचास करोड योजन बायें तरफ शिवलोकहै १करोड योजनका बिस्तारहै जहांपर पार्वती सहित योगीराज शिवजी अपने गणोंकेसाहित विराजतेहैं उसी गोलोकधामके मध्य में परम आनंद के देने वाली एक ज्योति शोभायमान है जिस्को योगी जन अपने हृदय कमल में ध्यान करतेहैं ॥

इति श्रीगोपाल चक्र चूडा मणि

नाम ग्रंथे तपस्वी रामचरणदास विरचते

षष्ठोऽध्यायः समाप्तः

ॐ श्रीनिवासाचार्य्यायनमः

अथ टिप्पणी ।

अट्ठाईसवें द्वापरके अंतमें ब्रह्मा महादेव देवता इन्द्र धर्मराज आदिक सब मिलकर वैकुण्ठधाम को जाते भये और हाथ जोड कर पृथक् पृथक् नारायण की स्तुति करते भये और हाथ जोड कर देवता बोलतेभये कि हे भगवन् कंस आदिक राक्षसों के पापसे पृथ्वी पीडितहोरहीहै सो हमारी हजारों नमस्कारहै आप पृथ्वी का भार दूर करो अवतार धारण करके ।

इतना सुनकर श्रीनारायण बोले कि हे देवताओ तुम गोलोक धामको जावो ॥

तत्राहंद्विभुजः कृष्णो गोपीभी राधयासह ।

अत्राहं कमला युक्तः सुनन्दादि भिरावृतः ॥

भा०—वैकुण्ठवासी श्रीकृष्णचन्द्रजीबोले कि हे देवता तुम गोलोक धामको जाओ वहां द्वि भुज रूपसे राधिका समेत तथा गोप गोपियों करके विराजमानहूं और यहां वैकुण्ठ में मैं चतुर्भुज

रूपसे लक्ष्मी करके युक्त सुनन्दनादिक पार्षदों करके विराजमानहुं इतना नारायण का वचन सुनकर ब्रह्माआदिक देवता योगमार्ग करके गोलोक धाम को चले।

(अथगोलोक धाम वर्णन)

श्रीपद्मपुराणे श्रीमद्भागवतमाहात्म्ये ।

ततः कृष्णेन ते नीता गोलोकं योगि दुर्लभम् ।
यत्रसोमस्य सूर्य्यस्य सिद्धानां नगतिः कदा ॥

ब्रह्मवैवर्त पुराणे श्रीकृष्ण जन्म खन्डे
श्रीनारायण उवाच नारद प्रति

उर्ध्वं वैकुण्ठतोरम्यं पंचाशत्कोटि योजनम् ।
वायु नाधीय माणस्तु निर्मितं स्वेच्छया विभो ॥

नारायण कहतेहैं कि हे नारद वैकुण्ठ लोकसे ५०करोड योजन ऊंचा गोलोक धाम है वायुमंडल के ऊपर परमात्मा श्रीकृष्णजी ने अपनी इच्छासे स्थापित किया है।

नगोलोकात्परो लोको नकृष्णात्परःप्रभुः

हे नारद गोलोक धामसे परे और कोई लोक नहीं है और श्रीकृष्णचन्द्रसे परे और दूसरा कोई प्रभु नहीं है॥

ब्रह्मवैवर्त श्रीकृष्ण जन्मखन्डे नंदंप्रति
श्री भगवान् उवाच

गोलोकश्चास्मि लोकानामुत्तमः सर्वतः परः
भा०-श्री कृष्णचन्द्र बोले कि हे बाबा नंद गो लोक धाम मेरा स्वरूपहै जोकि सबलोकोंसे उत्तम और सबसे परे है।

श्रीमद्भागवते एकादश स्कंधे उद्धव प्रति
श्रीभगवान् उवाच
मत्स्थानं यदब्रह्म परमं विदुः

श्री कृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे उद्धव मेरे धामको पारब्रह्म कहतेहैं।

श्रीमद्भगवत गीतायां
श्रीभगवानुवाच
नतद् भाषयते सूर्य्यो नशशाङ्को नपावकः।
यद्गत्वा ननिवर्तन्ते तद्धाम परमं मम॥

हे अर्जुन मेरे धामको सूर्य्य नहीं प्रकाश करता तथा चन्द्रमा नहीं प्रकाशकरता और अग्नि भी नहीं प्रकाश करता और जिस्को प्राप्त होकर योगीराज लौटकर नहीं आतेहैं वहीमेरा तेज स्वरूप परम धामहै।

नारदपुराणे
सर्वेप्राकृतिकाः लोकाः गोलोकोनिर्गुणः स्वयम्

और जितने सब लोक है सब प्राकृतिक अर्थात्

नाशवानहै औ गोलोकधाम स्वयं निर्गुणहै माया से परे हैं।

अथ ब्रह्मवैवर्त पुराणे ब्रह्मखंडे

गोलोकाऽभ्यन्तरे ज्योति रतीवं सुमनोहरम्।

गोलोक धामके मध्यमें प्रकाशमान तेजो मय मनोहर एकज्योतिहै बडे बिस्तार वाली जिस्का योगी जन ध्यान करतेहैं अपने हृदय कमलमें उसी ज्योतिको निर्गुण ब्रह्म कहतेहैं और ब्रह्म ज्योति श्री कृष्णचन्द्र परमात्मा के शरीर का तेज है जिसको निर्गुण उपासना वाले ध्यान करते है सो नारद पञ्चरात्रमें भी शिवजीने कहाहै नारदके प्रति।

ध्यायन्ते योगिनः सर्वे ज्योतीरूप सनातनम्॥
निर्गुणस्य शरीरंहि नमन्यन्तेच योगिनः॥
शरीरं प्राकृतं सर्वे निर्गुणं प्रकृतेः परः।
गुणेन सज्जते देहो निर्गुणस्य कुतो भवेत्॥
इतिसर्व योगशास्त्रं योगाविद्भिः प्रकीर्तितं॥

योगी जन निर्गुण ज्योति स्वरूपका ध्यान करतेहैं जोकि ज्योतिरूप सनातनहै और निर्गुण शरीर कोई नहीं मानते हैं योगी जन निर्गुण उपासना वाले कहतेहैं कि शरीर जोहैं सबके प्राकृत होतेहैं

पाञ्चभौतिक और निर्गुण ब्रह्मजो हैं वह माया से परेहैंक्योंकि देहतो गुणों से बनताहै तो वह निर्गुण किसतरह से बन सक्ताहै शिवजी कहतेहैं कि हे नारद यहयोगशास्त्र का मुख्य सिद्धान्त तथा योगियोंकी निर्गुण उपासना तुझसेकही तथा सनकसनन्दन सनातन सनत्कुमार आदिक जो वैष्णव है वेइस सिद्धान्तको नहीं मानतेहै वेकहतेहैं सो सुन

वैष्णवास्तं नमन्यन्ते कुमाराद्या वयं द्विज ।
वदंति वैष्णवाः सर्वे तेजस्तेजस्विनांवरम् ।
कसम्भवेत्वा कभेवीदीत दुर्णय मेवच ।
कृष्णो नित्यः शरीरी च तस्य तेजोहि वर्तते ।
तेजोऽभ्यन्तर एवाह कृष्ण मूर्तिः सनातनः ।
ध्यायन्ते योगि नःसर्वे तत्तेजो भक्ति पूर्वकम् ॥
सुपक्व भक्त्या कालेन योगीच वैष्णवो भवेत्
तेजोऽभ्यन्तर रूपञ्च ध्यायन्ते वैष्णवाः सदा ॥
दासानाञ्चकुतो दास्यं विनादेहेन नारद ॥

हे नारद सनत कुमार आदिकजो वैष्णवहैं कहतेहैं तेजतो तेजस्वी का होताहै क्योंकि बगैर तेजस्वी का तेजहोनाअसम्भवहै क्योंकि वह तेज आया किधरसे श्रीकृष्ण चन्द्र जो नित्य शरीर हैं परमात्मा उनहीं शरीरका तेजहै जिसको तुम निर्गुण

ब्रह्म करके ध्यान करतेहो तेजके मध्यमें श्रीकृष्ण चन्द्र जीकी मूर्त्ति सनातन है उसीमूर्ति की जो कान्ति अर्थात् तेज है योगीजन उसी तेजको निर्गुण ब्रह्म मानकर भक्ति पूर्वक ध्यान करतेहैं जिस समय निर्गुण ब्रह्म के उपासना करने वाले की भक्ति पक्क होतीहै तब योगीभी कालान्तर में वैष्णव बन जातेहै तेजके मध्यमें रूप है जो श्याम सुन्दर का उसी स्वरूप को वैष्णव लोग सदा ध्यान करते हैं हे नारदजो भगवत् के दासहै वे तो श्याम सुन्दर के स्वरूप के ही दासहै जबकोई स्वरूपनहीं मानाजाय तब किसका दासहै।

टिप्पणी

परमात्मा श्रीकृष्ण जीको जोभक्त जिसभावनासे ध्यान करे उनको वैसेही दर्शमान होतेहै निर्गुण उपासना वालेको तो निर्गुणही रूप दर्श होते हैं और सगुण उपासना वालेको सगूणही रूप दर्शमान होते हैं श्रीमद्भागवतमें जो लिखाहै कि जिससमय श्यामसुन्दर कंसकी सभामें गये उस समय जिस्की जैसी भावना थी उनको वैसेही दर्शन भये।

मल्लानाम शनिर्नृणां नर वरः स्त्रीणां स्मरो मूर्तिमान्।

गोपानां स्वजनः साक्षिति भुजां शास्ता स्वपित्रोःशिशुः
मृत्यु र्भोजपते र्विराट विदुषां तत्वं परं योगिनां ।
वृष्णीनांपर देवतेति विदितो रंगं गतः साग्रजः ॥

राजाकंसके अखाडेमें चाणूर मुष्टिक आदिक मल्लों को तो श्यामसुन्दर मल्लरूप दीखे और सत्पुरुषों को सज्जन दीखे औ मथुरा वासिस्त्रीयों को कामदेस्वरूप दीखे और ग्वालवालों को अपना सखा मित्र और नंद को अपने पुत्र रूप दीखे और राजा कंसको साक्षात मारने वाले कालदीखे, और देवतों को साक्षात विराट स्वरूप और योगी जोथे निर्गुण के उपासना वाले उमको परमतत्व करके दीखे औरवृष्णवंशी यादवोंको अपनी रक्षा करने वाले दीखे श्यामसुन्दर बलभद्रजीके समेत कंस सभामें गये ।

ब्रह्मा महादेव इन्द्र धर्मराज आदिक देवता तब श्रीनारायण जी कहतेहैं नारद के प्रति गोलोक धामको देखा देवतों ने

गोलोकं निखिलं दृष्ट्वा पुलकाङ्ग ययुः सुराः ।
तदेववर्तुला कारं रम्यं वृन्दावनं वनम् ॥
ददृशुः शत शृङ्गंच तद्वहि र्विरजा नदीम् ।
विराजतां ययुर्देवाः ददृशुः शून्यमेवच ॥

देवतोंने गोलोक को वर्तुला कार देखा वडा रमणीक और वही बडा शोभायमान वृन्दावन देखा देवतों को सौ शिखरोवालागोवर्धन पर्वत दीखा जो अति शोभाय मानहै और वहींपर वडे विस्तार वाली विरजानदी को देखा देवतोंने और विरजा नदी के पारमें देवतोंने सुन्न सान देखा।

वाय्वा धारंच गोलोकं सद्रत्नमय मद्भुतम्।

तो उन्होंने केवल वायुके आधार परही एक गोलोकको पायाजोकि सुन्दर रत्नोंसे सज्जितथा फिर वसंतादि ऋतुओंको देखकर प्रथम द्वारपर पहुंचे तो वे प्रथम द्वारमें वीरभानु दूसरे द्वार में चन्द्र भानु नाम सखा को देखते भये तीसरे द्वार को लांघकर सूर्य्य भानु नाम सखा को देखते भये चतुर्थ द्वारपर जायकर सुभानु नाम को देखते भये और पंचम द्वारमें देवभानुनाम षष्टद्वार पर शुक भानु नाम सखाको दीखते भये सप्त द्वारपर रत्न भानु और अष्टम द्वारपर श्याम सुन्दरके सखाको देखते भये और नवम द्वारपर श्याम सुन्दर के सखासे मिलकर दशमें द्वार में श्री दामानाम सखा को देखा जोकि श्रीराधिकाजीको पुत्र के समान प्रिय है और नाना प्रकारके भूषण वस्त्र धारण

किए हुए हैं तहां देवता गण उससे मिलकर गोलोककी शोभा देखते हुए नीलमणि चन्द्र मणि वज्रमणि जटित स्वर्ण मंदिरोंको देखते भये।

कोटि कोटि कल्प वृक्षहै तहां करोडों काम धेनु घंटा मजीरादिक बांधे आनन्द से गोपाल जिनके पीछे वंशलिकुट लिये हुये श्रीकृष्ण चन्द्र का यश मधुर गान करते हुए भ्रमण कर रहेहैं और वसंत ऋतु को भी सदैव वास करते हुए देवता लोग देखते भये और तहाँ जरा व्याधि आदि माया काल आदि नहीं व्यापता ऐसे गोलोककी शोभा देखते भऐ देवतागण एकादश द्वारपर जातेभये अमूल्य रत्न सिंहासन पर बैठे हुए श्याम सुन्दर के सखासे मेळ सम्भाषण कर देवता गण अगाडी चलतेभये फेर द्वादशवें द्वारपर गये जोकि गोपाङ्गनाओंसे सुशोभित था फिर गोपाङ्गनों से पूछकर अगाडी चले और क्रम से द्वारों की शोभा देखते भये और गोपाङ्गनाओंसे पूछते हुए श्री कृष्ण चन्द्र जीके चरण कमल के दर्शन की अभिलाषा ऐसे षोडशवें द्वारपर पहुंचे जोकि सम्पूर्ण द्वारोंमे प्रधान है वहां करोडों रत्न खचित मणि मय मंदिर देखते भये श्रीकृष्ण चन्द्र के समीप पहुंचे तो वहां

ब्रह्मा आदिक देवतोंने एकतेज समूहका देखा।

[श्री नारायण उवाच]

तत्रतेजः समूहञ्च सूर्य्यं कोटि समप्रभम्
प्रभया ज्वलितं ब्रह्मन् नाश्चर्यं महदद्भुतम् ॥

वही उन्होंने कोटि सूर्य्यके प्रभाके समान तेजके समूह को देखा जोकि अपनी प्रभासे देदीप्यमान हेब्रह्मन् नारद इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है कि वह बहूतही अद्भुतहै।

सप्त ताल प्रमाणंच व्याप्त मूर्ध्वसमं ततः॥

भा०—और सात ताल वृक्षके समान ऊँचा और सात ही ताल वृत्त विस्तार में देवगण उस तेजको देखते भये।

श्रीनारायण उवाच

दृष्ट्वा तेजस्वरूपञ्च तेदेवा ध्यान तत्पराः
दक्षिणे शंकरं कृत्वा वामे धर्मंच नारद।

श्रीनारायण मुनि कहतेहैं हेनारद उसतेजकी ओर दक्षिणमें शिवजी और वाम पार्श्व में धर्मराज और सामने ब्रह्माजीके पीछे स्थित होतेभये फिर सभी देवता पृथक्२ श्रीकृष्णचन्द्रजी की स्तुति करतेभये

ब्रह्मो वाच

वरं वरेण्यं वरदं वरदानाञ्च कारणं।

कारणं सर्व भूतानां तेजो रूपं नमाम्यहम् ॥
मङ्गलं मङ्गला नाञ्च मंगलं मगलप्रदम् ।
समस्त मंगला कारं तेजो रूपं नमाम्यहम् ॥
स्थितं सर्वत्र निर्लिप्त मात्म रूपं परात्परं ।
निरीह मवितर्कंच तेजो रूपंनमाम्यहम् ॥
सगुणं निर्गुणं ब्रह्म ज्योती रूपं सनातनम् ।
साकारंच निराकारं तेजो रूपं नमाम्यहम् ॥
तमनिर्वचनीयञ्च व्यक्त मव्यक्त मेककम् ।
स्वेच्छामयं सर्व रूपं तेजो रूपं नमाम्यहम् ॥

स्पष्टार्थः

इस प्रकार ब्रह्माजी की स्तुति करनेपर श्रीराधिकाजी सहित श्रीकृष्णचन्द्रजी प्रगट हुये ।

कौस्तुभासक्त सद्रत्न प्रदीप्त तेजसो ज्ज्वलं ।
तत्र तेजःसु चार्वङ्गीं ददृशुः राधिकाभिधाम् ।

उस समय देवताओंने कौस्तुभ मेंलगी हुई अच्छी मणियों से प्रदीप्त और तेजसे उज्वल श्रीकृष्ण चन्द्रजी की और मनोहर अंगों वाली राधिका जीको उसीतेजमें देखा ।

श्रीनारायण मुनिरुवाच

गत्वा नारायणो देवो विलीनः कृष्ण विग्रहे ।
तद्दृष्ट्वापरमाश्चर्यं तेसर्वे विस्मयं ययुः ॥

श्रीनारायण मुनि कहतेहैं कि हे नारद बैकुण्ठ बासी नारायण देव आयकर श्रीकृष्णचंद्रजी के शरीरमें लीन होजाते भये ब्रह्माआदिक देवता ऐसादेखकर आश्चर्य्य करते भये और अति विस्मय को प्राप्त होते भये इतनेहीमें ।

एतस्मिनन्नतरे तत्र शात कुम्भ मया द्रथात् ।
अवरुह्य स्वयम् विष्णुः पाताच जगतां पतिः

इसके अनन्तर शतकुम्भ मय रथसे उतर कर स्वयं भगवान् आये जगतके स्वामी ।

आजगाम चतुर्बाहु र्वनमाला बिभूषितः ।
पीताम्बर धरः श्रीमान् सस्मितःसुमनोहरः ॥

जिन भगबानके चार भुजाहैं और बनमाला जिनके गले कण्ठमें शोभायमान है पीतांबर जिन्होंने धारण कीयाहै मंद मंद हंसते हुये शोभाय मान है जिनका मुखारबिंद मनके हरने वाला

सर्बालङ्कार शोभाढ्यः सूर्य्यकोटि सम प्रभः ।
उत्तस्थुस्तेचतंदृष्ट्वा तुष्टवुः प्रणता मुने ।

सम्पूर्ण भूषण धरण करके शोभायुक्त और कोटि सूर्य्य के समान कांतिबाले श्रीकृष्ण भगवानकी स्तुति करके ॥

सचापि लीनस्तत्रैव राधिकेशस्यविग्रहे ।

तेदृष्ट्वा महदा श्चर्यं विस्मयं परमं ययुः ॥
राधिकेश अर्थात राधिकाके प्राणाधार श्रीकृष्ण चन्द्र जीके शरीर मेंआकर लीन होगये। यहमहा श्चर्य्य को देखकर देवता गण सब विस्मय को प्राप्त होते भये !

संविलीने हरेरंगे श्वेतद्वीप निवासिनः
एतस्मिन्नन्तरे तूर्णमाजगाम त्वरान्वितः ॥
श्वेतद्वीप बासी श्रीनारायण श्रीकृष्णचन्द्रजी के शरीर में लीन होनेपर अत्यंत त्वरासे युक्त

शुद्धस्फटिक संकाशो नाम्ना संकर्षणः स्मृतः
सहस्र शीर्षा पुरुषः शतसूर्य सम प्रभः ॥
स्वच्छ स्फटिक की तरह शोभायमान संकर्षण नाम बाले जिनके हजारों शिरहै औरसैकडों सूर्य के समान कांति बाले

आगतं तुष्टवु र्दृष्ट्वा ततस्तं विष्णु विग्रहम् ।
सत्रागत्य नतस्कंधस्तुष्टाव राधिकेश्वरम् ॥
आये तिनको विष्णु स्वरूप जानकर सबदेबताओं ने स्तुति की वह संकर्षण भगवान नीचे को शिर करते हुये कृष्णभगवान की स्तुति की।

सहस्रमूर्धाभिक्त्याच प्रणनामच नारद ।
अ.व.चधर्मपुत्रौद्वनैर नारायणाभिधौ ॥

लीनोऽहं कृष्ण पादाब्जे वभूव फाल्गुनो वरः ॥

औरसहस्रशीर्ष भगवान् ने भक्ति पूर्वक श्रीकृष्ण चन्द्रको प्रणाम किया इसके अनन्तर हे नारद। नर नारायण नाम वाले दोनोंधर्म के पुत्र अर्जुन सहित में भी कृष्ण चन्द्र जीके चरणोंमें लीन होगया ॥

(प्रश्न)

महाराज गर्गसंहितामें रामजीका तथा श्री नरसिंहजीका लीन होना श्री कृष्ण चन्द्रजीका लिखाहै और ब्रह्म वैवर्त्त पुराणमें व्यासजीने क्यों नहीं लिखा। (उत्तर)

पुराणकी छाया संहिता होती है कि जो कथा संक्षपसे पुराणमें होय वही कथा विस्तारसे संहितामें होय तो जानना चाहिए कियहसंहिता ऋषिकृतहै यदि पुराणमें वहगाथा कहीं नहीं हैं और केवल संहितही मेंहै।

तो जानना चाहिए कि मतावलम्बीने अपनेमतके पुष्ट करने के लाये रचदीहै। जब हमारे महान ग्रंथोंके प्रमाण मिलतेहै तो चूटकला ग्रंथोंके क्या हमारे को प्रमाण लिखनाहै क्योंकि जिसको अनादि ग्रंथों के प्रमाण में मिले और जोरामर्दी पक्ष

पात नहीं करना चाहिये तब नवीन संहिताओं को प्रमाण लिखते गये कथा प्रसंग करके दो चार दश श्लोक संहिताओं के लिख दिए हैं।

प्रश्न।

विरजा नदी गोलोक में किस तरह प्रगट हुई है

उत्तर—श्यामसुन्दर की गोलोक में जिस तरह चन्द्रावली आदिक सखी हैं इसी प्रकार विरजा भी भगवान की सखी थी गोलोक में किसी समय श्रीकृष्णचन्द्रजी विरजा के कुंज में विराजमान थे तहां श्री राधिकाजी रथ में बैठकर और बहुतसी सखियों को लेकर विरजा की कुंज में जाती भई वहां राधिकाजी का आना देखकर विरजा मारे भयके बडे विस्तार वाली नदी होकर बहने लगी और वही विरजा वैकुण्ठ में बहकर आई है इसी से वैकुण्ठ में विरजा नदी का नाम आया है इसी विरजा नदी का नाम गर्ग संहिता में श्यामा नदी कहा है तथा यमुना बही गोलोक से आयकर अपने अंश कला करके यमुना भई है॥ इति॥

इति गोलोक समाप्त।

श्री गोपाल चक्र चूडामणि नाम ग्रंथे

तपसी रामचरण दास विरचितः

सप्तमोऽध्यायः समाप्तः।

जब ६ पुत्र देवकीके कंसने मारे सातवें गर्भमें जब भगवान संकर्षण आये तो भगवान ने अपनी योग माया को आज्ञा की कि सातवां गर्भ जो देवकीका है मेरा अंश संकर्षण भगवान है उसे आकर्षण करके रोहणी के गर्भमें स्थापित कर यहकार्य करने से लोकमें तेरी मानता होगी और ग्राम में तू पुजैगी योगमाया इतनी भगवान की आज्ञा पायकर मथुरा पुरी में जाती भई और देवकीका गर्भ आकर्षण कर के रोहणी के गर्भ में स्थापित करती भई जो कि बसुदेव जी की दूसरी स्त्री रोहिणी नाम से विख्यात थी जो कि कंस के भयसे वसुदेव अपने मित्र नंद के घर में छोड आये थे सो देवकी का सातवां गर्भ रोहणी के गर्भ से उत्पन्न होने से उनको रोहणी नंदन कहते हैं तीनों लोक में उनके समान बलवान नहीं है इस वास्ते उनको बलराम कहते है ।

❀ इति ❀

जब जगत्के मंगल करने वाले भगवान अनंत कोटि ब्रह्माण्ड नायक गोलोक के स्वामी ने जब देव कीके गर्भ में स्वयं प्रकाश किया याने प्रगट होने का समय जब आया तब ब्रह्मा महादेव आदिक

देवता आकाश मार्ग से भगवान की स्तुति करते भये ।

श्री गणेशायनमः ॥

बसुदेवकी रोहिणी नाम स्त्रीसे शेषावतार भगवान बल्देवजी का अवतार होता भया जब जगन्मङ्गल भगवान् के प्रगट होने का समय आया तो ब्रह्मा महादेवादिक देवता आकाश मार्ग में आय कर मथुरापुरी में भगवानकी स्तुति करते भये

आदौ देवकीदेव गर्भ जननं गोपी गृहे बर्द्धनम् ।
माया पूतन जीवताप हरणं गोवर्द्धनो द्धारणम् ॥
केसच्छेदन कौरवादि हननं कुन्ती सुतापालनं ॥
एतद्भागवतं पुराण कथितं श्रीकृष्ण लीलामृतम् ॥
सिंहेमासेऽसिते पक्षे रोहिण्यां अष्टमी तिथौ ॥
चरमार्थ प्रदातारं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ॥

भा०—आठवें गर्भमें श्रीजगन्मङ्गल भगवान श्री कृष्णचन्द्र भाद्रपद कृष्णपक्षकी अष्टमी को बुधवार रोहिणी नक्षत्र में अर्द्धरात्रीके समय प्रगट होकर शंख चक्र गदा पद्म धारण किये हुये बसुदेव और देवकी को दर्शन दिये जिस प्रकार चन्द्रमा पूर्व दिशामें उगताहै वास्तव में चन्द्रमा का पूर्व दिशा में जन्म नहीं है किंतु प्रगट होता है इसी

प्रकार भगवान श्री कृष्णचन्द्रदेवकी के घरमें प्रगट हुये। तो फिर ब्रह्मा महादेवादिकों ने गर्भ स्तुति क्यों करी, और यह क्योंयहकि भगवानश्रीकृष्णजी देवकी के गर्भमें आये

उसका उत्तर यहहै।

कि श्रीकृष्णचन्द्रजी सर्वकी आत्मा है (अहमात्मा गुडाकेश इत्यादिगीतायाम्)आत्मा परिपूर्ण सर्वत्र व्यापक है तो क्या देवकी के गर्भ में आत्मा नहींहै परंतु निर्गुण रूप से आत्मा किसी की रक्षा नहीं कर सकता और श्याम सुंदर को पृथ्वी का बोझा उतारना था और अनेक लीला करके अपने भक्तों का उद्धार करना था' इस वास्ते सगुण रूप भगवान देवकी के घरमें प्रगट हुये और सगुण रूप प्रगट होने के वास्तेही ब्रह्मा महादेवादिकोंने भगवानकी स्तुति की थी

नहींतो क्या ब्रह्मा महादेवादिक अज्ञानी थे क्यों कि निर्गुण रूपसे ही भगवान सर्व व्यापक है परंतु विना सगुण रूप धारण किये पृथ्वीका भार नहीं उतर सकताथा

इति

फिर गोकुल में जायकर श्रीभगवान कृष्ण चंद्रने पूतनाबधसेलेकर केशी और व्योमासुर दैत्य वधतक कीलीला श्रीराधा गोपालआनंदसागर में लिखेंगे । उनमेंसे यहां दो एक वार्ता लिखतेहैं ! भादों शुक्ल पक्ष अष्टमी के दिन आद्या शक्ति श्री राधिकाजीका प्रादुर्भाव वृषभानकी कलावती नाम स्त्रीसेहोता हुआ।

तथा गोकुल में जायकर यादवों के कुल पुरोहित श्री गर्ग मुनि महाराज श्री भगवान कृष्ण बलदेवजी का नाम संस्कार करते हुये पहिले तो बल भद्र जी का हाथ देखकरगर्गाचार्यजी बोले हे नंद इस बालकके नाम अनेकहै परन्तु थोडे से कहताहूं संकर्षण कालिंदीभेदन रेवतीरमण बलराम इत्यादि अनेक नाम होवेंगे फिर श्री कृष्णजी का हाथ देखकर श्री गर्गाचार्यजी बोले ।

ब्रह्मवैवर्त पुराणे जन्मखण्डस्य त्रयोदशोध्याये श्रीगर्गउवाच ॥

नारायणो यो वैकुण्ठे कमला कान्त एवच ।
श्वेतद्वीपनिवासीयः पिता विष्णुश्च सोप्यजः ॥
कपिलोऽन्ये तदंशाश्च नर नारायणः ऋषी ।
सर्वेषां तेजसां राशि र्मूर्तिमानागतः किमु ॥

युगे युगे वर्णभेदो नाम भेदास्य वल्लभ ।
शुक्लः पीतस्तथारक्त इदानीं कृष्णतां गतः॥
शुक्लवर्णः सत्ययुगे सुतीव्रः तेजसा वृतः ।
त्रेतायां रक्तवर्णोऽयं पीतोयं द्वापरे विभौ ॥
कृष्ण वर्णे कलाश्रीमां स्तेजसां राशिरेवच ।
परि पूर्ण तमं कृष्णं तेन कृष्ण इतिस्मृतः ॥

भा०—परम पुनीत वैकुण्ठ धाममें जो लक्ष्मी कांत भगवान्ने नारायण हैं और श्वेतद्वीप में रहने वाले जो विष्णु भगवान हैं और कपिल तथा नर नारायण जिनके अंश है उन सबका तेजो राशि होकर यहां आये हैं इस बालक का युग२ में वर्ण भेद तथा नाम भेद होता चला आया है जोकि पीत रक्त और इस समय कृष्णता को प्राप्त है और सतयुग में शुक्ल वर्ण तथा तेजोराशि युक्त तथा त्रेता में रक्त वर्णसे शोभायमानथे और द्वापर में पीत वर्ण करके शोभायमानऔर कलिकालमेंकृष्णता को प्राप्त हुऐ हैं इसी लिये यह पारिपूर्ण तम सच्चिदानंद ब्रह्महै उनही को श्री कृष्ण ऐसाकहतेहैं

ब्रह्मणो वाचकः कोयमकारो ऽनन्त वाचकः
शिवश्च वाचकः षश्च नकारो धर्म वाचकः ॥

भा०—श्री कृष्ण भगवान के नाम में ककार ब्रह्मा

का वाचकहै ऋकार अनंतकावाचकहै और षकार शिव अर्थात् कल्याण का वाचकहै और नकार धर्म का वाचकहै ।

अकारो विष्णु वचनः श्वेत द्वीप निवासिनः ।
नर नारायणार्थस्य विसर्गो वाचकःस्मृतः ॥

भा०—और कृष्ण इस भगवान के नाम के वीच अकार विष्णु भगवान का वाचक है जो कि श्वेत द्वीप में रहते हैं और विसर्ग नर नारायण के अर्थ को कहता है ॥

सर्वेषां तेजसां राशिः सर्व मूर्ति स्वरूपकः ।
सर्वाधारः सर्व वीजस्तेन कृष्ण इति स्मृतः ।

भा०—सवका तेजोराशि सम्पूर्ण का मूर्ति स्वरूप सवका आधार सवका कारण है इसलिये इनको कृष्ण ऐसा कहते हैं ।

कर्म निर्मूल वचनः कृषिर्नो दास्य वाचकः ।
अकारो दातृ वचनस्तेन कृष्ण इति स्मृतः ॥

भा०—श्री कृष्ण भगवान के नाम में कृषि शब्द कर्म बन्धन को छेदन करने वाला है । 'नकार, अर्थात् श्रीकृष्ण में जो नकार है वह श्रीकृष्ण चरण कमळ की दासता को देने वाला है और कृष्ण नामान्तर्गत णकारोत्तरवर्ति जो अकार है

वह श्रीकृष्ण पद कमल प्राप्ति का वाचक है, इस लिये इनको कृष्ण ऐसा कहते हैं।

कृषिर्निश्चेष्ट वचनः नकारो भक्ति वाचकः।
अकारः प्राप्ति वचनः तेन कृष्ण इतिस्मृतः॥

भा०—श्रीकृष्ण नाममें जो कृष शब्दहै वह अनन्य चित्त करता और नकार तदनन्तर श्री कृष्ण पद सरोज की भक्ति देता है, तदनन्तर नकारोत्तर वर्ति अकार उन्हीं चरणारविन्द की प्राप्ति कराता है, इसलिये इनको कृष्ण कहते हैं।

कृषि र्निर्वाण वचनो नकारो मोक्ष वाचकः।
अकारो दातृ वचन स्तेन कृष्ण इति स्मृतः॥

भा०—अथवा श्री कृष्ण नाम में जो कृष शब्द है सो निर्वाण पद को देने वाला है, और नकार मोक्ष को देने वाला है और दातृ वाचक है इसलिये इनको कृष्ण कहते है॥

नाम्नां भगवतो नन्द कोटीना स्मरणेन यत्।
तत्फलं लभते नूनं कृष्णेति स्मरणे नरः।

भा०—श्री गर्गाचार्य जी कहते हैं कि हे नन्द! भगवान के करोडहु नाम जपने में फल प्राप्त होता हैं सो फल एकवार कृष्ण कहने से होता हैं॥

यद्विधं लभते पुण्यं वचना च्छ्रवणात्तथा ।
कोटि जन्माहंसो नाशो भवेद्यत्स्मरणादिकात् ॥

भा०—जिन भगवान् विष्णु के विधि पूर्वक नाम लेने से और स्मरण करने से तथा सत्य वचन से और श्रवण करने से पुण्य होते हैं और कोटि जन्मों के पाप जिनके स्मरण से ही नाश हो जाते हैं ।

विष्णो र्नाम्नांच सर्वेषा सारात्सारं परात्परं ।
कृष्णेति सुन्दरं नाम मंगलं भक्ति दायकम् ॥

भा०—श्री विष्णु भगवान के सम्पूर्ण नामों में सबसे उत्तम और सार का भी सार और परे से भी परे है अर्थात् 'कृष्ण' यह सर्व श्रेष्ट और भक्ति को देने वाला है ।

ककारोच्चारणाद्भक्तः कैवल्यं मृत्यु जन्महम् ।
ऋकारादद्दास्य मतुलं षकारा द्भक्ति मीप्सितम् ॥

भा०—भक्त लोग ककारोच्चारण से ही जन्म मरण को नष्ट कर कैवल्य मुक्ति को प्राप्त होते हैं और ऋकारोच्चारण से अतुल भक्ति तथा षकारोच्चारण से मन वाञ्छितफल को प्राप्त होते हैं ।

नकारा त्सहवासञ्च तत्समं काल मेवच ।
तत्सारूप्यं विसर्गाच्च लभते नात्र संशयः ॥

भा०—नकारोच्चारण सामर्थ्य से श्री विष्णु भगवान के चरण कमलों का सहवास और विसर्गोच्चारण से उसके समान कालका भेद न करके तत्सारूप्य को प्राप्त करता है इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

ककारोच्चारणा देव वेपन्ते यम किंकराः।
ऋकारोक्ते नतिष्ठंति षकारात्पातकानिच॥

भा०—श्री "कृष्ण" भगवान के नाम में जो ककार है उसके उच्चारण से ही यमदूत कम्पायमान होजाते हैं, तदनन्तर ऋकार का उच्चारण करने से वहांपर स्थित रहकर भागजाते हैं और षकार के उच्चारण करते ही पातक भी क्षयमान होजाते हैं।

नकारोच्चारणाद्रोगा अकारान्मृत्यु रेवच।
ध्रुवं सर्वे पलायन्ते नामोच्चारण भीरवः॥

भा०—श्री कृष्ण भगवान के नामान्तर्गत नकारोच्चारण से सब रोग नष्ट हो जाते हैं और ऋकार के उच्चारण से मृत्यु भी दूर हो जाती है सो हे नन्द! भगवान के सब नामों से श्रेष्ठ है कृष्ण ऐसा नाम लेने से आधि व्याधि सब निश्चय करके भाग जाते हैं।

स्मृत्युक्ति श्रवणो द्योगा त्कृष्ण नाम्नो वृजेश्वर।

रथं गृहीत्वा धावन्ति गोलोकात् कृष्ण किंकराः ॥

भा०—हे वृजेश्वर ! श्रीकृष्ण चन्द्र आनन्द कन्द सच्चिदानन्द का नाम लेने से अथवा श्रवण करने से श्री भगवान के दूत गोलोक से रथ को लेकर भक्तजन के पास दौडे आते हैं ऐसा माहात्म्य श्रीकृष्ण भगवान के नाम का है।

ककारःकमला कान्त ऋकारो राम इत्यपि।
षकारः षड् गुणपतिः श्वेत द्वीप निवास कृत् ॥

भा०—श्री कृष्ण भगवान के नाम में जो ककार है सो बैकुण्ठ वासी भगवान का वाची है, और जो ऋकार है सो रामका बाचक है, और षकार है सो श्वेत द्वीप निवासी विष्णु भगवान का बोध कराने वाला है।

णकारो नारसिंहोय मकारोह्यक्षरोग्निभुक्।
विसर्गौ च तथा ह्येतौ नर नारायणा वृषी॥

भा०—कृष्ण भगवान के नाम में जो णकार है वह नरसिंह का बोधक है, तथा कृष्ण भगवान के नाम में जो णकारोत्तर वर्ती अकार है वह शेषजी का बोध कराने वाला है। और जो विसर्ग है सो नर नारायण ऋषि का बोधक है।

संप्रलीनाश्च षटपूर्णा यस्मिञ्छन्दे महामुनौ।

परिपूर्णतमे साक्षात्तेन कृष्ण प्रकीर्तितः ॥

भा०—उक्तयह छः नाम जिसनाम में लीन हों, इस करके उनको साक्षात् परिपूर्णतम स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण भगवान्, ऐसा कहतेहैं ॥

शुक्लो रक्तस्तथा पीतो वर्णोंस्थानु युगंधृतः।
द्वापरान्ते कलेरादौ वालोऽयं कृष्णतां गतः ॥

भा०—श्री कृष्ण भगवान का स्वरूप युग २ में अन्य २ प्रकार का है तथा सत्ययुग में श्रीकृष्ण चन्द्र का रूप श्वेतवर्ण काथा और त्रेता युगमें रक्त वर्ण काथा और द्वापर में पीत रूपथा और कलि युगकी आदि में श्री कृष्ण भगवान का रूप कृष्णता को प्राप्त है।

तस्मात् कृष्ण इति ख्यातो नाम्नायं नन्द नन्दनः।

भा०—इस लिये इन नंद नंदन अर्थात् भगवा-का नाम कृष्ण प्रसिद्ध होवेगा।

नाम्नां सहस्रदिव्यानां त्रिरावृत्या च यत्फलं।
एकावृत्यातु कृष्णस्य तत्फलं लभते नरः ॥

भा०—भावार्थ विष्णुसहस्रनामकी तीन आवृतिअ र्थात् तीनबार पाठ करनेसे जो फल होता है वह श्रीकृष्ण भगवान के एकबार नाम लेने सेहो वह फल प्राप्त होजाताहै।

कृष्ण नाम्नः परं नाम न भूतं न भविष्यति ।
सर्वेभ्यश्च परंनाम कृष्णेति वैदिका विदुः ॥

भा०—भगवानके सब नामों में उत्तम नाम श्रीकृष्ण भगवान का है ऐसा उत्तम नाम न हुआ न होगा ऐसा वेद को जानने वाले कहतेहैं ॥

सर्वेषामपि यज्ञानां लक्षाणिच व्रतानिच ।
तीर्थस्नानि सर्वाणि कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥

भा०—सम्पूर्ण यज्ञोंका फल तथा लाखहु चान्द्रायणादि का जो फल तथा तीर्थ स्नानादिका जो फल वह सब कृष्णभगवान के नामकी सोलह कला की भी तुलना नहीं करसकता ।

वेद पाठ सहस्राणि प्रादक्षिण्यं भुवः शतम् ।
कृष्णनाम जपस्यास्य कला नार्हन्ति षोडशीम् ॥

भा०—गर्गाचार्यजी कहतेहैं कि हे नन्द हजारहु बार वेद के पाठ करने से जो फल होता है तथा सौ वार पृथ्वी की प्रदक्षिणा करनेसे जो फल होता है वह श्रीकृष्ण श्रीकृष्ण इसजापके फलकी सोलह कला की भी तुलना नहीं कर सक्ता

अथ श्रीराधाजी कानाम ।

श्रीनारायण उवाच ।

रेफोहि कोटि जन्माघं कर्मभोग शुभाशुभम् ।

अकारो गर्भ वासश्च मृत्युञ्च रोगमुत्सृजेत् ॥
भा०-श्री राधाजीके नाममेंजो रेफ है सो कोटि जन्मों के शुभाशुभ कर्मोंका नाश करदेताहै और अकार गर्भ वास तथा मृत्यु और रोगों को भी छुडादेताहै ।

धकार आयुषो हानि माकारो भव बन्धनं ।
श्रवणस्मरणो क्तिभ्यः प्रणश्यति न संशयः ॥
भा२—श्रीराधाजी के नाममें जो धकार है सो आयु की हानि को दूर करताहै और आकार संसार बन्धन को छुडा देता है अतः राधाजी के नाम स्मरण अथवा श्रवण से सुर दुर्लभ फल को प्राप्त होताहै ।

आदौ राधां समुच्चार्य कृष्णं पश्चाद्ददेद्बुधः
व्यतिक्रमे ब्रह्महत्यां लभते नात्र संशयः ।
भा०-आदिमें राधा शब्द का उच्चारण करके पीछे सेकृष्णशब्दउच्चारण करैअर्थात श्रीराधाकृष्ण ऐसा उच्चारण करे ॥ उलटा नाम लेनेसे [कृष्ण राधा कहनेसे) ब्रह्महत्या लगती है इसमें कुछ दोष नहीं है ॥

जगन्माताच प्रकृतिः पुरुषश्च जगत्पिता ।
मातृयिसी त्रिजगतां माता शतः गुणै पितुः

संसार की माता प्रकृति है और पुरुष संसार का पिता है तीनों लोकों में पिता से सौ गुणी अधिक माता पूजने योग्य है और वन्दनीय है

राधा कृष्णेति गौरीशेत्येवं शब्दः श्रुतौ श्रुतः ।
कृष्ण राधेश गौरीति लोकेच न कदा श्रुतः ॥

भा०—क्योंकि श्रुतियों में अथवा भक्त लोगों से राधाकृष्ण और शिव भक्तों से गौरीशंकर ऐसा ही सुना जाता है और विपरीत अर्थात कृष्ण, राधा महादेवगौरी ऐसाकहीं शास्त्र में अथवा लोक में नहीं देखा ।

आदौ पुरुष मुच्चार्य पश्चात्प्रकृति मुच्चरेत् ।
सभवे न्मातृघातीच वेदातिक्रमणे मुने ।

भा० जो पुरुष पहिले पुरुष का उच्चारण करता है औरबाद में प्रकृति का उच्चारण करता है वह वास्तव में वेद मर्यादा का उल्लंघन करताहै और माता घाती होताहै ।

ब्रह्मवैवर्त पुराणे श्री कृष्ण जन्म खन्डे
श्रीनारायण उवाच ।

पुनर्न नामतक्रिया विधाता जगतां पतिः ।
तदा ब्रह्मा तपो मध्ये प्रज्वाल्य हुताशनम् ॥

भा०—हे नारद ! कर्म काण्ड के विधाता ब्रह्माने

उस स्वहस्त रचित वेदीमें अग्नि को जलाकर—

हरिं संस्मृत्यहवनं चकार विधिना विधिः ।
उत्थायासनात्कृष्ण उवास वहि सन्निधौ ॥

ब्रह्माने विधिपूर्वक हरि का स्मरण करके हवन किया और श्रीकृष्ण भगवान् आसन से उठकर वेदी के पास बैठ गये।

ब्रह्मणोक्तेन विधिना चकार हवनं स्वयम् ।
प्रणम्य पुनः कृष्ण राधां तां जनकः स्वयम् ॥

भगवान् ने ब्रह्मा के अनुशासन पूर्वक स्वयं हवनं किया और श्री राधिका जी के पिताने भगवान् कृष्ण चन्द्र जी को प्रणाम कराकर।

कौतुकं कारयामास सप्तधाच प्रदक्षिणाम् ।
पुनः प्रदक्षिणां राधां कारयित्वा हुताशने ॥

श्री राधिका जी के पिता ने अनेक कौतुक कराते हुए वेद विधि पूर्वक राधा जी से ७ प्रदक्षिणा उस यज्ञ वेदी की कराई ॥

प्रणम्य तं कृष्णं वासयामास तं विधिः ।
तस्या हस्तं च श्री कृष्णं ग्राहयामसतं विधि ॥

ब्रह्माने श्री कृष्ण चन्द्र जी को श्री राधिका जी से प्रणाम कराकर श्री राधि का जी का हाथ श्री कृष्ण भगवान के हाथ में देदिया।

बारह वर्ष तक श्यामसुन्दर ने नन्द यशोदाके घर रहकर अनेक लीलाऐं कीं सो ब्रह्म वैवर्त और श्रीमद्भागवत में बिस्तार से लिखी है

बृन्दावन में १२ बर्ष तक जो २ लीला प्रभु ने कीं हैं सो अनेक कोटि ब्रह्माण्ड नायक गो लोक बासी श्रीकृष्ण चन्द्र की हैं और मथुरा में कंस वध से लेकर द्वारका तक जो२ लीला हैं सो चतुर्विं भु तथा वैकुण्ठ बासी नारायण चतुर्भुज तथा क्षीर शायी विष्णु धर्म ऋषि के पुत्र दोनों नर नारायण ऋषि इनकी लीलाऐं हैं ।

प्रश्न– महाराज ! गो लोक बासी श्री कृष्ण चन्द्र द्वारिका नहीं गये ऐसा कौन ग्रन्थ में लिखा है ।

उत्तर (गौतमसांहेतायाम्)

द्वादश वर्षाणि क्रीडित्वा वृन्दावन वनेश्वरः ।
ततो गच्छति गो लोकं राधया सह माधवः ।

१२ बर्ष रास आदिक विहार करके वृन्दावन केस्वामी श्री कृष्ण चन्द्र जी श्री राधिका जी के सहित गो लोक धाम को चले जातेहै ॥

राधामायांश संभूता छाया वृन्दावने वने ।
छायाच मानुषीरूपा शत वर्षाण्य वर्तत ।

श्रीराधिकाजीके अंशसे प्रकट होकर छाया रूपी राधिका वृन्दावन में रहती हैं वह छाया मानुषी रूप सौ १०० वर्ष पर्यन्त रहती है।

श्रीदाम्नश्चैव शापेन वृषभानुसुताऽधुना।
शत वर्षाणि शापेन छाया रूपाच राधिकाः॥

भा०—श्रीदामा के शाप करके वही इस कालमें वृषभानुकी पुत्री रूपसे रहती है १०० वर्ष पर्यन्त छाया रूपी राधिका रहती है।

तथापि छाया लीनेषु गोलोके राधिका स्वयम्।
सा गोलोकेश्वरी देवी स गोलोकेश्वरो हरिः॥

भा०—पीछे छाया रूपी राधिका गोलोक में जाय कर राधिकाजी के स्वरूपमें लीन हो जावेगी अर्थात् स्वयं राधिका होजावेगी। वह ही श्री गोलोकेश्वरी श्री राधिका देवी है, और वहही श्री गोलोकेश्वर श्रीकृष्णचन्द्रहैं।

ब्रह्म वैवर्ते- श्रीदाम उवाच॥

भविष्यसि न संदेहो मया शप्ता त्वमम्बिके।
छायया कलया वापि त्यादि।

हे अम्बिके। आपने मनुष्य के समान कोप किया है इसलिये आप मेरे शाप करके मृत्युलोकमें मानुषी ही होओ। अपनी छाया या कला करके,

श्रीकृष्ण चन्द्रजी का और आपका १०० वर्ष का वियोग रहेगा। सोही बात श्रीकृष्ण चन्द्रजीने राधिका जी से कहीहै कि हे राधिके ! जसे दूधका और धवलता (सफेदी) का वियोग नहीं है इसी प्रकार मेरा और तेराभी वियोग कभी नहीं है परन्तु श्री दामाके शाप करके १०० वर्षतक वियोग रहेगा।

अथ टिप्पणी

जैसेकि निज स्वरूप जानकी जी सो तो अग्नि में प्रवेश करगई थी श्रीराम चन्द्र जी की आज्ञासे पंचवटी में और छायारूपी जानकी को रावण हरके लेगया था सो छायारूपी जानकी १ वर्ष तक अशोक वाटिका में विलाप करती रही थी इस बातको श्री राम चन्द्र ही जानते थे और किसीको विदित नहीं था

चौ०—तवलग पावक करो निवासा। जवलग करों निशाचर नासा॥

॥इति॥

इसी प्रकार गोलोकेश्वरी श्री राधिका जी का और श्याम सुन्दर का वियोगतो भया नहीं परन्तु छाया रूपी राधिका वृषभानु की पुत्री

होकर १०० वर्ष तक विलाप करती रही। श्री दामा के शाप करके

ब्रह्मवैवर्ते श्री कृष्ण जन्मखंडे।
राधिकां प्रति श्री कृष्ण उवाच।
मम नारायणांशो यस्त स्य यानञ्च द्वारकाम्।
शतवर्षान्तरे साध्यमेतदेव सुनिश्चितम्॥
भविष्यति पुनस्तत्र वने रास स्त्वया सह।
पुनः पित्रोश्च गोपीनां शोक संमार्जनं परम्॥
कृत्वा भारावतरणं पुनरागमनं मम।
त्वया सहापि गोलोकं गोपैर्गोपीभिरेवच।
मम नारायणांशस्य वाण्याच पद्मया सह॥
वैकुण्ठ गमनं राधे नित्यस्य परमात्मनः।
श्वेत द्वीपं धर्म गेह मंशानांच भविष्यति॥

भा०—हे राधे मेरा जो अंश नारायण सो द्वारका को जावेंगे वह १०० वर्ष के पश्चात् में सर्व कार्य साधन करके निश्चय होगा हे राधिके! वृन्दावन में फिर तेरे साथ रासहोगा अनन्तर में फिर माता पिता तथा गोपियों के शोक को मिटाऊंगा और पृथ्वी का भार उतार कर फिर मेरा आगमन होगा फिर तेरे और गोप गोपियों सहित गोलोक धामको चलेंगे हे राधिके! मेरा

जो अंश नारायण है वह लक्ष्मी सहित वैकुण्ठको गमन करेंगे। विष्णु क्षीर सागरको जावेंगे अपने अंशो सहित नर नारायण ऋषी दोनों धर्मग्रहको जावेंगे (इति)

टिप्पणी।

गौतम संहिता के कथनानुसार यह उपदेश ब्रह्मवैवर्त में छायारूपी राधिका को किया ऐसा सोचना चाहिये। १०० वर्ष के उपरान्त जब ब्रह्मा महादेवादिक देवता भगवान को लेने वास्ते आये हैं तो वृन्दावन में भांडीर वटपै दो भुज रूप श्री कृष्ण चन्द्र के उन्होंने दर्शन किये हैं।

फिर स्तुति करके ब्रह्मा महादेवादिक देवता द्वारिका को गये हैं वहां प्रभास क्षेत्रमें श्याम सुन्दर के दर्शन किये हैं सो सब गाथा हम उत्तरार्ध में लिखेंगे जैसे कि भगवान् गोलोक को गयेहैं। और राधिकाजी के संग सब बृजबासी गोलोक धामको गये हैं।

॥ इति ॥

" श्रीमद्भागवते "

श्री शुकदेवजी बोले हे राजन् ! परीक्षत ! अक्रूर के संग रथमें बैठकर बलभद्रजी सहित मथुरा को

चले उस वक्त गोपिकाएँ विलाप करती हुई भगवान केपीछेचली उस वक्त श्याम सुन्दर ने हसकर कहा हे गोपिओ। शोक मत करो, तुम्हारे पास १ मनुष्य भेजूंगा इतना कहिकर श्याम सुन्दर चलदिये, हे राजन् ! परीक्षत ! जबतक रथकी ध्वजा दीखती रही तब तक गोपी खडी देखती रहीं जब रथ की ध्वजा नहीं दीखी तब अचेतहो पृथ्वीपर गिरपडी । भ्रमर रूपी गोपियों का जीवात्मा कमल रूपी श्याम सुन्दर के साथ चलागया गोपियों के मायाकृत शरीर वृन्दावन में रहगये ।

मथुरा में जायकर मुष्टिक चाणूर सहित केसको मारा " कंसं मदोत्कटं दैत्यं लक्ष नाग समं बले । मंचादुद्गृहीत्वातं कृष्णो भ्रामयित्वा भुजौजसा ॥ पातयामास भूपृष्ठे कमण्डलुमिवार्भकः । इति गर्ग संहितायाम्,, कंस को मारकर फिर भगवान वासुदेव देवकी को मिले । फिर श्याम सुन्दर ने उद्धव को बृन्दाबन भेजा गोपियों को ज्ञान सिखलाने के वास्ते सो उद्धव को देखकर गोपी बोली । हे उद्धव !

माता पिता की कुशल लेने के वास्तेही भेजा है या और की भी कुशल लेतेहैं या कभी याद

भी करतेहैं । फिर गोपियों की सच्ची प्रीति देखकर उद्धव भक्त १ वृक्षके नीचे बैठ जाते भये और चारों तरफ गोपियाँ बैठगईं और बोली ।

॥ चौपाई ॥

भलीकरी उद्धव तुमआये, समाचार माधव के लाये।
पठयो मात पिताके हेत और न काहू की सुधिलेत॥
सर्वस दीन्हों उनके हाथ, उरझे प्राण चरण के साथ ।

हे राजन् श्याम सुन्दर की चर्चा में गोपियाँ ऐसी लीन होगईं कि उनको शरीर तथा वस्त्रकी भी सुधिनरही उससमय १ भ्रमर उडता हुआ पासमें आया देखकर १ गोपी बोली हे सखियो जो सन्देशा उद्धव से कहती हो वही समाचार इस भ्रमर से कहो सो जो बातें गोपियोंने उस भ्रमर से कहीं उसको भंवर गीत कहते है ।

" तथाच भ्रमरगीते "

फिर उद्धव गोपियों से बोले हे गोपियो श्याम सुन्दर ने तुम्हारे वास्ते मेरे को ज्ञान सिखळाने वास्ते भेजाहै सो तुम ध्यान से सुनोः—

सुनत श्यामको नाम ग्राम गृह की सुधि भूली ।
भरि आनन्द रस हृदय प्रेम बोली दृग फूली ॥
पुलकि रोम सब अंग भये भरि आये जल नैन ।

कण्ठरुकी गद गद गिरा बोले जात न बैन ॥
अवस्था प्रेमकी० ॥
सिंहासन बैठाय और परिक्रमादीनी ॥
सखा श्याम को जान और सेवा बहु कीन्ही ॥
बूझत सुधि नंदलाल की विहँसत मुख ब्रजबाल।
नीके हैं बलि वीरजू बोलत वचन रसाल ॥
सखा सुन श्यामके ॥

इतना सुन उद्धव भक्त बोले।

कुशल श्याम है और कुशल संगी सब उनके।
यदुकुल सगरे कुशल परम आनन्द सबनके ॥
बूझन ब्रज कुशलात कूँ आयो तुम्हरे तीर।
मिलहैं थोड दिवसमें जनि जिय होउ अधीर ॥
सुनो ब्रज नागरी।

यह सुनकर गोपियां बोली।

सुनि मोहन संदेशरूप सुमिरण है आयो।
पलकन आनन अलख अंग आवेश बनायो ॥
विह्वल है धरनी पडी ब्रज बनिता मुरझाय।
दे जल छींट प्रबोध हां ऊधो बात बनाय ॥
सखा सुन श्याम के ॥

श्री उद्धव भक्त जी बोलेः—

बे तुमते नहिं दूर ज्ञान की आंखिन देखो।

अखिल विश्व भरपूर ब्रह्म सब रूप विशेखो ॥
लोह धातु पाषाण में जलथल माहिं अकाश ।
सचर अचर वर्तत सभी ज्योती ब्रह्म प्रकाश ॥
सुनो ब्रजनागरी ॥

इतना सुनकर गोपियांबोली ।

कौन ब्रह्मको ज्ञान ज्ञान कासों कहि ऊधो ।
हमरे सुन्दर श्याम प्रेम को मारग सूधो ॥
नैन बैन श्रुति नासिका मोहन रूप दिखाय ।
सुधि बुधि सब मुरली हरी प्रेम ठगोरी डारि ।
सखा सुन श्याम के ॥

उद्धव भक्त बोले ।

यह सुधि सगुण उपाधि रूप निर्गुणहै जाको ।
निर्विकार निर्लेप लगत नहीं तीनों गुण को ॥
हाथ न पांव न नासिका नैन बैन नहीं कान ।
अच्युत ज्योति प्रकाशकी सकल विश्वकी जान ॥
सुनो ब्रजनागरी ॥

यह सुनकर गोपिया बोली ।

जो मुख नाहिन हतो कहो किन माखन खायो ।
बिन पाँयन गयो संग कहो को वनहि धायो ।
आंखिन मे अंजन दियो गोवर्द्धनलियो हाथ।

नंद यशोदा पुत्रहै कुँवर कान्ह यदुनाथ ॥
सखा सुन श्यामके ।

उद्धव भक्तका प्रत्युत्तर

जाय कहत तुम श्याम ताके कोउ पिता नमाता ।
अखिल कोटि ब्रह्माण्ड विश्व उनहीं में जाता ॥
लीला गुण अवतार है धारे आये तनु श्याम ।
जोग जुगत ही पाइये पारब्रह्म परिधाम ॥
सुनो ब्रज नागरी ।

इतना सुनकर गोपियां बोली

नाहिं बताओ जोग जोग ऊधो जहां पाओ ।
प्रेम सहित हम पास नंद नंदन गुण गाओ ॥
नैन बैन मन प्राणमें मोहन गुण भर पूर ।
प्रेम पयोनिध छाँडि के कौन समेटे धूर ।
सखा सुन श्याम के

यह सुनकर फिर उद्धवजी बोले

धूर बुरी जो होय ईश क्यों शीश चढावे ।
धूरि क्षेत्र में आय कर्म करि हरि पद पावें ॥
धूरि हिते यह तन भयो धूरहिते ब्रह्माण्ड ।
लोक चतुर्दश धूरि ने सप्त द्वीप नव खण्ड ॥
सुनो ब्रजनागरी ।

गोपीयाँ यह सुनकर फिर बोली।

कर्म धूरकी बात कर्म अधिकरी जानो ।
कर्म धूरि को आन प्रभे अमृतमें सानों ॥
तवहीलों सब कर्म है जबलों हरि को नाम ।
कर्म बन्ध सबविश्व के जीव विमुखही जाँय ।
सखा सुनश्याम के

उद्धवजी यह सुनकर बोले

तुम कर्महि निन्दो कहा कर्मते सद्गति होय।
कर्मरूप तें बलीना तेरह भुवन में कोय ॥
कर्मन तैं उत्पन्न है कर्मनते है नास
कर्म कियेते मुक्तिहै पारब्रह्म पुर वाय ॥
सुनो ब्रज नागरी ॥

यह सुनकर गोपीयाँ बोली

कर्म पाप और पुण्य लोह सोने की बेडी ।
पाँयन बंधन दोऊ कोउ मानो बहुतेरी ॥
उच्च कर्मते स्वर्गहै नीच कर्मते भोग ॥
प्रेमविना सब पचमरें विषय वासनारोग ॥
सखा सुन श्यामके ॥

उद्धव जी बोले ।

कर्मबुरे जोहोंय जोग काहे कूँ धारें ॥
पद्मासन सब का द्वाररोक इन्द्रिन को मारे
ब्रह्म अग्नि जर शुद्धहो शून्य समाधि लगाय ॥

लीनहोय सायोज्यमें ज्योतिमें ज्योति समाय।
सुनो ब्रज नागरी।

तब फिर गोपियाँ बोली

जोगी जेते भजें भक्तिनिजरूपहिं जानें।
प्रेम पयोखे प्रगट श्याम सुन्दर उरु आनें॥
निर्गुण गुण जो पाइये लोग कहत यह नाहिं।
घर आयो नाग न पूजिये बाँबी पूजन जाहि।
सखा सुन श्यामके

उद्धव जी बोले।

जो उनके गुण होय वेद क्यों नेति बखानें
निर्गुण सगुण आतम रुचि उपनिषद बखाने।
वेद पुराणन खोजि के पाये किनहु न अन्त।
गुणहूके गुण हौं नहीं जो अकाश है टेक॥
सुनो ब्रज नागरी।

यह सुनकर फिर गोपियाँ बोलीं।

जो उनके गुण हैं नहीं तोगुण भये कहांते।
बीजविना तरुजमें मोहि तुम कहो कहांते।
यागुणकी परछाहरी माया दर्पण बीच॥
गुणते गुण न्यारे भये कमल वारि और कीच॥
सखा सुन श्यामके॥

यह सुनकर फिर उद्धव जी बोले ।
माया के गुण और और हरि के गुण आनों ॥
वा गुण को इन मांझ आनि काहे कूं सानों ॥
ताते निर्गुण वेदको भनत उपनिषद वेद ॥
जोके गुण और रूपको जान्यों जात न भेद ।
सुनों व्रज नागरी ॥

गोपी फिर बोलीं ॥

वेद कह्यो हरि रूप श्वाँस मुखते जो निसरे ।
कर्म काय आसक्त सभी पिछली सुधिविसरे ॥
कर्म मध्य ढुंडो सभी कि नहुन पायो देख ।
कर्म रहितही पाइये तातें प्रेम विशेख ।
सखा सुन श्याम के

यह सुनकर फिर उद्धव भक्त बोले
प्रेमहुँ कोऊ वस्तु रूप देखत लौ लागे ।
वस्तुदृष्टि विन कहो कहां प्रेमी अनुरागे ॥
तरुण चन्द्र के रूपको किन नहिं पायों जान ॥
तो उनको कहा जानहै गुनातीत भगवान् ॥
सुनो व्रज नागरी ॥

यह सुनकर फिर गोपियां बोलीं
तरुण अकाश प्रकाशतें मुदित रह्यो छु दुराइ ।
देव दृष्टिहै रुपमें लै वह देखो जाइ ॥

जिनके वे आंखेंनहीं क्यों देखें वह रूप ॥
तिन्हें विश्वास क्यों ऊपजे वे परें कर्म के कूप ॥
सखा सुन श्याम के ।

फिर उद्धव जी बोले ।

जब करिये तन कर्म भक्तिहो तामें आई ।
कर्मरूपतें कहो कौनपै छूटो जाई ॥
कर्म कर्म ही कियेते कर्मनाश होजाय
तब आतम नहीं कर्म ही निर्गुण वहां समाय
सुनो व्रज नागरी ॥

फिर गोपियां बोलीं

जो उनके नहिं कर्म कर्म बन्धन होय आवे ।
तो निर्गुण है बस्तु शास्त्र परमान बतावे ।
जो उनके परमाणहै तो प्रभुता कछु नाहिं ।
निर्गुण भये अतीत के सगुन सकल जगमाहिं
सखा सुन श्यामके ॥

यह सुनकर उद्धवजी बोले ।

जो गुण आवै दृष्टि माँझ नखरहें न सारे ।
वेसवहिनते वासुदेव अच्युत हैं न्यारे ॥
इन्द्री दृष्टि विकारते रहित अधो च्छय ज्योति
सिद्धि स्वरूपी ज्ञानकी प्राप्ति जिनको होत ।
सुनो व्रज नागरी ॥

यह सुनकर गोपियाँ बोलीं।
नास्तिकहैं जो लोग कहा जानें निज रूपै।
प्रकट भानु को छाँड हैं परछाँही धूपै॥
हमको बिन या रूप के और न कछू सुहाय।
ज्यों करतल आमलक के कोटिक ब्रह्म दिखाँय।
सखा सुन श्यामके
इतनेमें नन्दलाल रूप नैनन के आगे।
आय गई छवि छाय पहिर पीताम्बर बागे॥
ऊधोंसो मुख फेर के तिन्हे सवन कही बात।
प्रेम अमृत मुखते श्रवत अम्बुज नैन चुचात।
तर्क रस रीति की॥

इति भ्रमरगीत समाप्तः

फिर एक सखीबोलती भयी।
चौ०-क्याहमकरैं मुक्तिलेरूखी, अबलाश्याम संग की भूखी॥ फिर वह रूप प्रगट जब देखें; जीवन सफल तभी करि लेखें॥
दो०-योगदीजिये लैतिन्हें जिनकेमन दश बीस।
कित डारतनिर्गुण यहां उद्धव ब्रजमें खीस॥
योग कथा अबमति कहो उद्धव बारम्बार।
भजे और नंद नंद तजि वाकोहै धिक्कार॥

गोपियोंका प्रेम देखकर उद्धव अपने ज्ञानका अहंकार भूल जाते भये और प्रेममें मग्न होकर गोपियों के चरणों में प्रणाम कर शिर धरते भये और हाथ जोडकर बोले हे गोपियो में तुम्हार दर्शन से कृतार्थ होगया और श्याम सुन्दर मेरे ऊपरने बडी कृपा की जो मुझको तुह्मारे पास भेजा सो में आपको ज्ञान सिखाने के वास्ते आयाथा परन्तु तुमही से प्रेम रूपी भक्ति मैंने प्राप्त की फिर उद्धव प्रेममें मग्न होकर वृन्दावन की रजमें लोटने लगे फिर उद्धव उठकर प्रेममें विह्वल हूआ कि जिसका कण्ठ रुक गयाहै आनन्द से जिसके नेत्रों से जल प्रवाह चलने लगाहै और हाथ जोड़कर श्री राधिकाजी के चरणोंमें अपना शिर रख देता भया और बोला कि हे माता जिस प्रकार काल की गतिको जीव तर जाताहै सो आप कृपा करके मेरे से कहो

इतना सुन राधिकाजी अपने वस्त्रसे आंसू पोंछ कर फिर राधिका जी उपदेश करती भयीं सो ब्रह्मवैवर्तपुराणके श्री कृष्ण जन्म खण्डमें बहुत विस्तार से लिखा है जिस तरह राधिका जीने उद्धवको

उपदेश कियाहै। यहाँ पर ग्रन्थ विस्तार भयसे दो चार श्लोक लिखते है॥

॥ श्री राधिकोवाच ॥

भजन्ति जगतां नाथं कालकालं जगद्गुरुम्।
निर्गुणञ्च निरीहञ्च परमात्मान मीश्वरम्॥

भा०—हे उद्धव। सारे संसारके स्वामी महा काल केभी काल उन भगवान् काही स्मरण करनेसे इस महा काल की गतिमें तुम तर जाओगे॥

अनेक जन्म तपसा लब्धा जन्मच भारते॥
ये हरिं नैवसेवन्ते तेमूढाः कृतपापिनः॥

इस संसार के अन्दर जो मनुष्य जन्म जन्मान्तर हरिके गुणों का गान नहीं करते न हरि भक्तिही करते हैं वह महापापी दुर्भाग्यशीलहै।

वासुदेवं परित्यज्य विषयेनिरतो जनः
त्यक्त्वामृतं महा मूढोविषं भुङ्क्ते निजेच्छया।

हे उद्धव जो मनुष्य वासुदेव भगवान् को छोड-कर विषयोंमें फसंता है वह निश्चय करके अमृत पान न करके विषका पान करता है॥

कस्य स्त्री कस्यवा पुत्रः कस्य च वान्धवास्तथा
कः कस्य बन्धुर्विपदि श्रीकृष्णेन विना भुवि

भा०—कोन किसकी स्त्री है और कोन किसका

पुत्र हैं और कौन किसका भाई है इस संसारमें श्रीकृष्ण चन्द्र के विना कोन भाई बन्धुहै अर्थात् दूसरा कोई भी नहीं है ॥

तस्मात्सन्ताः सदा कृष्णं भजन्त्येव दिवानिशम्
जन्म मृत्यु जरा व्याधि हरं सर्व हरं परम् ॥

भा—इसीकरण साधु महात्मा लोग इस सांसारिक प्रपंचको त्यागकर जन्म मरण और व्याधिको हरने वाले प्रभु का रातदिन ध्यान करतेहै ॥

कालस्य तरणोपायं भजनं परमात्मनः ।
आनन्द मनन्तस्य परिपूर्णतमस्य च ॥

हे उद्धव ! इसकाल की गतिका तरण उपाय यही है कि केवल परिपूर्ण पर ब्रह्म सच्चिदानन्द आनन्द कन्द भगवान् का सच्चे मनसे ध्यानकरना यही सब ऋषियों का सिद्धान्त है !

कृष्ण भक्तिं कृष्ण दास्यं वरेषुच वरं वरं ।
श्रेष्ठापञ्च विधा मुक्तेर्हरे र्भक्तिर्गरीयसी ॥

भा०-श्रीकृष्णचन्द्रजी की भक्ति और श्रीकृष्णचंद्र जी का दास्य भाव सर्वोत्तम है पांच प्रकार की मुक्ति का साधन केवल भक्तिही कही है ॥

शुभं भवतु मार्गस्ते कल्याणं चास्तु संततम् ॥

हे उद्धव! तेरा मार्ग तेरे लिये कल्याण कारी हो और तेरा सदा कल्याण हो
फिर उद्धव जी राधिकाजी को नमस्कार करके फिर नंद यशोदा से बोलेकिआप मुझे आज्ञा दो तो श्री कृष्णचन्द्र जी के पास जाऊं इतना सुनकर नंद औरयशोदा रोने लगे।

गोपियोंने हाथ जोड उद्धव से कहा कि हे उद्धव हमारी तरफ से मोहन प्यारे को हाथ जोडकर कि आठों पहर हमारा प्राण तुम्हारे चरणों में लगा रहता है सो दयालु होकर ऐसा वरदान दीजिये कि जन्म जन्मान्तर हमारे हृदय से तुम्हारा ध्यान न छूटे।

यह वचन सुन उद्धव बोले कि हे गोपियो तुम्हें ऐसी सच्ची प्रीति वा भक्ति परमेश्वर की है कि सांसारिक मनुष्य तुम्हारा नाम लेने वा दर्शन कर नेसे भव सागर पार उतर जावेगा तुम्हारी मुक्ति होने में कोई सन्देह नहीं है तुम जीवनमुक्तहो और नंद यशोदा को बहुतसा समझाय कर और रोहणी को संगलेकर मथुरा में पहुंचते भये और श्याम सुंदर के चरणों में यथा विधि प्रणाम करके व्रज वासियों का हाल कह दिया

चौपाई ।

मनमें यों प्रभु कियो विचारा । व्रज भक्तन मम रूप अधारा ॥ मेरे मुक्ति बडी निधि जोई । सो व्रज बासिन लेत न कोई । ताते जो जिनके मन भावे । सोईमोहि करत बन आवे ॥

इति श्री गोपालचक्र चूडामणि

नाम्नि ग्रंथे तपस्वी रामचरण दास

विरचिते पूर्वार्धं

समाप्तम्

अथोत्तरार्धे प्रथमोऽध्यातः

श्री शुक उवाच



नमस्ते वासुदेवाय नमः संकर्षणायच ।

प्रद्युम्नायानिरूद्धाय तुभ्यं भगवते नमः ।

प्रणाम है भगवान वासुदेवके चरण कमलों में, चार हैं भुजा जिनकी और नील मणिके समान है शरीर की प्रभा जिनकी पीताम्बर जिन्होंने धारण कियाहै और किशोर है अवस्था जिनकी, ऊपर जिन्होंने रेशमी वस्त्र ओढाहै । पैरों में जिन्होंने नूपर धारण किये हैं, कमर में जिन्होंने रत्न जटित

मेखला धारण की है और हाथों में जिन्होंने रत्न जटित कंकण धारण किये हैं और बाजूबन्द माणि जटित धारण किये हैं जिन्होंने कण्ठमें कौस्तुभ और वनमाला विराजमान है जिनके और घूंघर वाले हैं बाल जिनके मकराकृति कुण्डल जिनके शोभायमान होरहे हैं किरीट मुकट जिन्होंने मस्तकमें धारण किया है हरिमुद्रा कार जिन्होंने केशर का ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक धारण किया है तप हरणी है चितवन जिन्हों की मन्द२ मुसकाते हुए कोट्यानुकोटि कामदेव जिनकी सुन्दर ताई को देखकर लाजित होजाते हैं।

ऊपर के दाहिने हाथमें जिनके सुदर्शन चक्र है और ऊपर के बांये हाथमें पाञ्चजन्य नामका शंखहै और नीचेके दाहिने हाथमें जिन्होंने कौमोदकी गदा पकडी हुई है और नीचेके बांयें हाथमें जिन्हों के पद्म शोभायमान है, और कमर में जिनके रत्न जटित नन्दकी खड्ग शोभायमान है। और वामभुजामें जिन्हों ने शार्ङ्ग नाम धनुष टांग रक्खा है और स्कन्ध में जिनके अक्षय तूणीर पडा है और जिन्हों का स्वर्गमयी दिव्य रथ माणि रत्नों से जडा हुआ है, और शिव सुग्रीव, मेघ

पुष्प, बलाहक यहहैं ४ घोडे रथमें जिनके इनका वेग मन के समान है अर्थात् आकाश पाताल जाने की सामर्थ्य है जिनके घोडों का और गरूड जी विराजमान हैं जिनकी ध्वजा में और दारुक सारथी जिस रथ का है ऐसे रथ में विराजमान वसुदेव नन्दन श्रीकृष्ण चन्द्रजी के चरण कमलों-में हम हजारों वार प्रणाम करते हैं।

नीलाम्बर वस्त्रके धारण करने वाले हल मूसल जिन्हों का आयुध जिनकी मुख ज्वाला से प्रलय में ब्रह्माण्ड दाह होताहै ऐसे भगवान संकर्षण वसुदेव नन्दन बलदेवजी के चरण कमलों में मैं हजार वार प्रणाम करता हूं ॥

जिनके किंचित अंश करके त्रिलोकी मोहित हो जाती है मच्छ का चिन्ह है जिन्हों की ध्वजामें, सम्बर दैत्य को मारने वाले रुक्मिणी नन्दन प्रद्युम्न जी के चरण कमलों में प्रणाम करताहूं। ऊषाके पति श्वेत द्वीपके स्वामी कार्त्तवीर्य नन्दन भगवान अनि रुद्धिके चरण कमलों को हजारों प्रणाम करता हूं

इति ध्यानम्

कंस का वैर लेनेके वास्ते १७ वार तेईस२ अक्षौहिणी सेना लेकर मथुरापुरी पर चढाई की। नर

शरीर धारण करने के कारण श्याम सुन्दर ढाई घडी में २३ अक्षोहिणी सेना का नाश करते हुए १७ वार। अक्षोहिणी का प्रमाण लिखते हैं अयुतंच नागा स्त्रिगुणा रथानां लक्षैक योधा दश लक्ष वाजिनाम्। पदाति संख्या षट त्रिंश का कोट्य अक्षोहिणी नां मुनयो वदन्ति। अठारहवीं वार जब जरासिन्ध फिर चढा २३३ अक्षोहिणी सेना लेकर और ३॥ म्लेच्छों की सेना लेकर कालयवन नारद के उपदेश से गान्धार मुल्क से चढा, तब भगवान श्रीकृष्णचन्द्र सुदर्शन चक्र को तथा गरुड को और विश्व कर्मा को आज्ञा की कि समुद्र के बीचमें १०० योजन के विस्तार वाली द्वारिका वैकुण्ठ के समान रचो, भगवन् की आज्ञानुसार एक रात्रि में द्वारिका को रचा, फिर श्याम सुन्दरने अपनी योग माया से मथुरा वासियों को वहीं पुगादिया। काल यवन को श्याम सुन्दरने अपने हाथसे इस लिये नहीं मारा कि राजा मुचकुन्द को जगावना था क्योंकि देव वरथा राजा मुचकुन्दके वास्ते कि जो तेरे को सोते से जगावेगा वह तेरी दृष्टि से भस्म होजावेगा- इस लिये भगवान ने मुचकुन्द की दृष्टि द्वारा काल यवन का नाश किया तथा उसकी सेना मारी जरा सिन्ध को श्याम सुन्दरने अपने हाथ से इस वास्ते

नहीं मारा कि जरासिन्ध की मृत्यु भीमसेन के हाथ लिखी थी ब्रह्माने। इस वास्ते मर्यादा को भग वान ने नहीं तोडा अठारवीं वार जरासिन्धके सामने से भाग श्याम सुन्दर द्वारिकामें जाय विराजमान हुए वहां प्रभुने भक्तों के उद्धार के वास्ते अनेक लीलाएं कीं है सो पुराणों में देखलेना यहांपर थोडी सी कथा ब्रह्मवैवर्त तथा भागवत की लिखी है।

॥ इति ॥

प्रश्न

निम्बार्क सम्प्रदाय में एकादशी कौनसी मानी जाती है।

(उत्तर)

कपाल बेध हरिप्रिया चार्य्यों का मत है ४५घडी से एक पलभी जादा हो तो दूसरे दिन व्रत करना चाहिये क्योंकि सनक सम्प्रदाय में उदयातिथि ही मानते हैं

उदयव्यापिनी ग्राह्या कुले तिथि उपोषणे।
निम्बार्को भगवान्यषां वाञ्छितार्थं प्रदायकः"इति
इति पूर्वार्द्धम् ॥

सूचना ।

यदि कोई इस ग्रन्थ को छपाना चाहे तो हमसे पूछकर छपा सकता हैं । इसमें कहीं कहीं भाषा में अशुद्धियां रहगई हैं शुद्ध कर लीजिये ।

पुस्तक मिलने का पता

ब्रह्मचारी रामचरणदास

रघुनाथ बाग

श्री गोपालजी का मन्दिर

अमृतसर ।